मूल्य 20 रुपये

चौथी दुनिया

दिल्ली रविवार 12 जुलाई 2009

हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

भीतर

3 सिख विरोधी दंगों की अनकही कहानी

7 पंजाब में पड़ा मज़दूरों का अकाल

9 नदियों को जोड़ना ख़तरनाक

बिहार में वक़्त से पहले होंगे चुनाव

रूबी अरुण

लोकसभा चुनावों के समय प्रदेश में जिस तरह नीतीश की जय हो रही थी, उससे न सिर्फ़ जद-यू नेताओं का, बल्कि राजनीतिक पर्यवेक्षकों को भी यही उम्मीद थी कि बिहार में जद-यू को 20 से कहीं ज़्यादा सीटें आएंगी. लेकिन ऐसा हो न सका. भाजपा के साथ गठजोड़ होने के कारण मुस्लिम मतदाताओं का वोट जद-यू को नहीं मिल सका. जद-यू को डर है कि यही वजह बिहार विधानसभा चुनाव में उसके गले की फांस न बन जाए. भाजपा से किनाराकशी और कांग्रेस से गलबहियां करने में नीतीश के दोनों हाथों में लड्डू है.

बिहार में जद (यू) और भाजपा का याराना अब टूटने ही वाला है. हमें मिली जानकारी से तो यही लगता है कि दोनों महज़ चंद महीनों के ही हमसफर हैं. इसके लिए वह अपनी साझा सरकार गिराने तक को तैयार हैं. उनकी मंशा वक़्त से पहले ही बिहार विधानसभा चुनाव कराने की है. नीतीश सरकार के पांच साल अगले साल यानी कि 2010 के सितंबर में पूरे होंगे, पर नीतीश की योजना इस साल के आख़िर या अगले साल की शुरुआत में ही विधानसभा चुनाव कराने की है. इसके साथ ही नीतीश, कांग्रेस के साथ दोस्ती बढ़ाने में भी मशगूल हैं.

नीतीश के ख़ासमख़ास लोगों की मानें तो सोनिया गांधी और नीतीश के बीच एक समझौता भी हो चुका है. इसके तहत भाजपा से पीछा छुड़ाने के एवज़ में कांग्रेस केंद्र में जद-यू के तीन सांसदों को मंत्री बनाएगी. बिहार के जातिगत समीकरणों का ख़याल रखते हुए उनके नाम भी तय हो चुके हैं. ये हैं-बेगूसराय के सांसद राजीव रंजन सिंह उर्फ़ ललन सिंह, लोजपा अध्यक्ष रामविलास पासवान को हरा कर अपना परचम लहराने वाले पूर्व मुख्यमंत्री और हाजीपुर के सांसद रामसुंदर दास और जद-यू के राष्ट्रीय अध्यक्ष शरद यादव. यानी कि भूमिहार, दलित और यादव. सोनिया और नीतीश के बीच चल रही इस सौदेबाज़ी की जानकारी रखने वाले बताते हैं कि यही वजह है कि अभी तक केंद्रीय मंत्रिमंडल में तीन पदों को ख़ाली रखा गया है, ताकि ज़रूरत पड़ने पर इन जगहों पर जद-यू के सांसदों को समायोजित किया जा सके. नीतीश कुमार के एक अहम सलाहकार बताते हैं कि इसमें पूरी तरह जद-यू का ही फ़ायदा है. अभी बिहार में नीतीश के नाम की तूती बोल रही है. बिहार के लोग नीतीश के विकास कार्यों से ख़ुश हैं. प्रदेश में नीतीश के नाम की जो बयार बह रही है, उसी का नतीजा है कि लोकसभा में जद-यू को 20 सीटें मिलीं. अब नीतीश इसे भुनाने की जुगत में हैं, क्योंकि समय बदलते देर नहीं लगती. क्या पता किस मसले पर बिहार के लोगों का मिज़ाज पलट जाए और अगली बार फिर से बिहार पर राज करने का नीतीश का सपना बस सपना ही रह जाए. लिहाजा, इस नज़ाकत का ख़याल रखते हुए ही नीतीश की मंडली इस मसले पर गहन विमर्श कर रही है कि किस मुद्दे को हथियार बना कर भाजपा से दामन छुड़ाया जाए.

लोकसभा चुनावों के समय प्रदेश में जिस तरह नीतीश की जय हो रही थी, उससे न सिर्फ़ जद-यू नेताओं का, बल्कि राजनीतिक पर्यवेक्षकों को भी यही उम्मीद थी कि बिहार में जद-यू को 20 से कहीं ज़्यादा सीटें आएंगी. लेकिन ऐसा हो न सका. भाजपा के साथ गठजोड़ होने के कारण मुस्लिम मतदाताओं का वोट जद-यू को नहीं मिल सका. जद-यू को डर है कि यही वजह बिहार विधानसभा चुनाव में उसके गले की फांस न बन जाए. भाजपा से किनाराकशी और कांग्रेस से गलबहियां करने में नीतीश के दोनों हाथों में लड्डू है. बिहार तो उनके क़ब्ज़े में रहेगा ही, केंद्र की सत्ता में भी वे भागीदार रहेंगे. हालांकि अपने-अपने फ़ायदे और बदले की इस सियासत में बिहार के हित में जो बात है, वह यह कि इस नए समीकरण के बहाने संसद में जद-यू के तीन मंत्रियों के ज़रिए बिहार की आवाज़ बुलंद होगी. बिहार को विशेष राज्य का दर्जा देने की नीतीश की मांग पर भी बख़ूबी ग़ौर किया जा सकेगा. फ़िलहाल जो स्थिति है उसमें संसद में प्रदेश के हक़ की बात करने की ख़ातिर एक भी केंद्रीय मंत्री नहीं है. यानी अगर नीतीश और कांग्रेस के बीच गठबंधन होता है तो यह महज़ सत्ता की मजबूरी ही नहीं है, बल्कि बिहार के विकास के लिए भी बेहद ज़रूरी है.

समझौते में शामिल एक कांग्रेसी नेता का कहना है कि इसका मतलब यह कतई नहीं निकाला जाना चाहिए कि बिहार में अगला विधानसभा चुनाव जद-यू और कांग्रेस के मिल कर लड़ने की बाध्यता होगी. ऐसी संभावना हो भी सकती है और नहीं भी. पर इतना ज़रूर है कि इसमें नीतीश का फ़ायदा ज़्यादा है. उन्होंने अपनी जो विकास पुरुष की छवि बनाई है, उसे बरकरार रखने के लिए और बदस्तूर बिहार का विकास करने के लिए पैसों की ज़रूरत है. यह केंद्र सरकार ही मुहैया करा सकती है. बिहार में नीतीश अगर भाजपा के विनाश का कारण बनते हैं तो कांग्रेस उनकी मुंहमांगी मुरादों को पूरा करने को ख़ुशी से तैयार होगी. राष्ट्रीय स्तर पर एक भाजपा ही है जो कांग्रेस की राह में रोड़ा बनती है. धीरे-धीरे भाजपा का जिस कदर पतन हो रहा है, उसमें बिहार में भाजपा का सत्ता से बाहर होना ताबूत में आख़िरी कील साबित हो सकता है. कांग्रेस तो यह हर हाल में चाहेगी. वैसे भी बिहार में कांग्रेस की ज़मीन जिस तरह खिसकी हुई है, उसमें उसे जद-यू से तो कोई ख़तरा नहीं ही है. कांग्रेस का प्रदेश संगठन मज़बूत बनाने की राहुल गांधी की योजना में भी बिहार का नंबर उत्तर प्रदेश के बाद ही आता है. कांग्रेस इस मुग़ालते में कतई नहीं है कि वह इस बार अपने बूते बिहार में सरकार बना लेगी. उसे यह ज़रूर लगता है कि नीतीश को साथ मिला कर और बिहार की तरक़्क़ी के लिए विभिन्न योजनाओं के लिए पैसे उपलब्ध करा कर वह मौजूदा तौर पर बिहार में अपनी तस्वीर बेहतर बनाने का जतन कर सकती है. इसका फ़ायदा उसे 2015 के विधानसभा चुनाव में यक़ीनन मिलेगा. दूसरी बात यह कि कांग्रेस का बिहार में यह क़दम उसके पूर्व सहयोगियों- लालू प्रसाद यादव और रामविलास पासवान- के लिए भी मुसीबतों का सबब बनेगा. लालू और पासवान दोनों ने ही लोकसभा चुनाव में जिस तरह कांग्रेस का पुरज़ोर विरोध किया है, उसे न तो सोनिया गांधी भूली हैं न ही राहुल उस बात के लिए इन्हें माफ करने के लिए तैयार हैं. लालू और पासवान, दोनों ही लोकसभा चुनाव में मुंह की खाने के बाद बिहार में अपनी ज़मीन तलाशने की जद्दोज़हद में हैं. कांग्रेस को पता है कि बिहार में अगर ये दोनों एक बार फिर मज़बूत हो गए तो उसके वजूद का क़ायम रहना मुश्किल हो जाएगा.

नीतीश के सामने भी यही चुनौती है. रामविलास पासवान और लालू प्रसाद यादव ने मिल कर नीतीश के ख़िलाफ़ मोर्चा खोल दिया है. लालू प्रसाद को बिहार की जनता ने पटखनी ज़रूर दी है, लेकिन उनका वोट प्रतिशत गिरा नहीं है. लालू यादव पिछड़ों, मुस्लिम और यादवों की गोलबंदी में लगे हैं तो पासवान दलितों और महादलितों को लुभाने में लगे हैं. नीतीश ने दलितों के उद्धार के नाम पर जो महादलित आयोग बनाया है, उसे पासवान ने फ़र्ज़ी बताते हुए आंदोलन छेड़ दिया है. रामविलास पासवान का कहना है कि नीतीश सरकार ने जो महादलित आयोग बनाया है, उसमें कई दलित जातियों को जान बूझकर छोड़ दिया है. लोजपा सुप्रीमो ने अब प्रदेश भर में दलितों की समस्याओं और विधि-व्यवस्था की ख़राब स्थिति को लेकर नीतीश सरकार के ख़िलाफ़ आंदोलन करने की योजना बनाई है. इसकी शुरुआत 27 जून से जेल भरो अभियान के रूप में हो भी गई है. पासवान चाहते हैं कि नीतीश कुमार विश्वनाथ ऋषि की अध्यक्षता वाले महादलित आयोग की रिपोर्ट और अति-पिछड़ी जाति से संबंधित उदयकांत चौधरी की रिपोर्ट के साथ ही भूमि सुधार से संबंधित बंदोपाध्याय की रिपोर्ट को सार्वजनिक करें. उन्हें बिहार विधानसभा के पटल पर रखें. ज़ाहिर है, ये स्थितियां नीतीश के ख़िलाफ़ माहौल तैयार करेंगी. बिहार में समय से पहले विधानसभा चुनाव कराने के पीछे नीतीश का यही मक़सद है कि वह अपने विरोधियों को ज़्यादा वक़्त नहीं देना चाहते. नीतीश ने इसकी काट भी चल दी है. बिहार में नीतीश के प्रयासों से पंचायत और स्थानीय निकाय के बाद अब न्यायिक सेवा में भी पिछड़ा, अति पिछड़ा, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को आरक्षण मिल गया है. जल्दी चुनाव करा कर नीतीश यक़ीनन अपनी इस कोशिश को भुनाना चाहेंगे. हालांकि यह भी सच है कि विधि-व्यवस्था के सवाल पर प्रदेश भर में नीतीश के ख़िलाफ़ धरना-प्रदर्शन भी हो रहा है. जिस नीतीश पर भरोसा कर प्रदेश की जनता ने सत्ता की बागडोर उन्हें थमा दी थी, अब उन्हीं नीतीश का पुतला जलाया जा रहा है. हत्या, अपहरण और बलात्कार की घटनाओं से परेशान लोग सड़क पर उतरने लगे हैं. कभी इंजीनियर हड़ताल पर जाने की धमकी दे रहे हैं तो कभी प्रदेश भर के शिक्षक नीतीश मुर्दाबाद के नारे लगा रहे हैं. नीतीश के घोर विरोधी लालू यादव इनका साथ देकर बड़े ही आक्रामक तेवरों के साथ धरना-प्रदर्शन कर रहे हैं. मतलब यह कि धीरे-धीरे ही सही नीतीश के ख़िलाफ़ बिहार के लोग खड़े होने लगे हैं. यह बात नीतीश भी समझ रहे हैं. माहौल पूरी तरह उनके ख़िलाफ़ जाए उसके पहले वे बिहार की गद्दी दुबारा हासिल कर लेना चाहते हैं. उनकी निग़ाह में इसका बस एक ही उपाय है-तय समय से पहले विधानसभा चुनाव. पर यह तभी मुमकिन है जब सरकार पर संकट आ जाए. सरकार आपात स्थिति में हो और उसके गिरने की नौबत आ जाए. इसके लिए ज़रूरी है कि सहयोगी भाजपा से जमकर अनबन हो और गठबंधन टूट जाए. तो बस इसके रास्ते तलाशे जा रहे हैं. वैसे भी जब से बिहार में इस गठबंधन की सरकार बनी है तभी से इन दोनों के बीच के रिश्ते कभी सुमधुर नहीं रहे. भाजपा नेताओं को हमेशा इस बात की शिकायत रही कि नीतीश कुमार ने उन्हें सत्ता में हाशिए पर रखा. भाजपा के जो मंत्री थे या हैं उनका दुख भी यही रहा कि नीतीश कुमार ने किसी न किसी बहाने हमेशा उन्हें उनके अधिकारों से वंचित रखा. शिकायत यह भी रही कि जिस भाजपा मंत्री ने अच्छा काम किया उसे नीतीश ने बाहर का रास्ता दिखा गया. इनमें नंदकिशोर राय, अश्विनी चौबे और चंद्रमोहन राय के नाम प्रमुख हैं. बहरहाल, चिंगारी तो वैसे ही सुलगी पड़ी है. बस उसे हवा देनी है और यह काम जद-यू के राष्ट्रीय अध्यक्ष शरद यादव बख़ूबी कर रहे हैं. कभी कट्टर हिंदुत्व के मसले पर भाजपा का घोर विरोध कर के और कभी लोकसभा चुनाव में मिली करारी हार का ठीकरा वरुण गांधी और नरेंद्र मोदी के सिर फोड़ कर. पर अभी दोनों में तकरार का जो सबसे बड़ा कारण बनेगा वह है मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की एक बार फिर विकास यात्रा पर निकलने की तैयारी करना. मुख्यमंत्री सचिवालय इन दिनों ज़ोर-शोर से नीतीश की यात्रा का खाका बनाने में जुटा हुआ है.

नीतीश की इस यात्रा से जद-यू और सरकार में सहयोगी पार्टी भाजपा के बीच रार ठन चुकी है. प्रदेश भाजपा के नेताओं के हाथ के तोते उड़े हुए हैं, क्योंकि पहली बार की तरह इस बार भी नीतीश अपनी यात्रा में भाजपा को साथ नहीं रखने वाले. पहली विकास यात्रा में भी नीतीश ने प्रदेश में हुए विकास का ताज़ जद-यू के माथे सजाया था और इस बार भी वही सबकुछ होने वाला है. नीतीश के इस रुख़ से भाजपा में खलबली मची हुई है. भाजपा नेता उपमुख्यमंत्री सुशील कुमार पर इस बात के लिए दबाव बनाया कि वह नीतीश कुमार से इस मसले पर बात करें कि उनकी विकास यात्रा में वह भी सहभागी होंगे, ताकि प्रदेश की जनता से रू-ब-रू होकर वह भी प्रदेश के विकास में अपने योगदान का गुणगान कर सकें. सुशील मोदी ने इस बात का नीतीश से ज़िक्र तो ज़रूर किया पर नीतीश ने उनकी बात पर ग़ौर ही नहीं किया. ख़बर है कि नीतीश की विकास यात्रा शुरू होते ही भाजपा नेता बग़ावती रुख़ अपनाने वाले हैं. भाजपा से दामन छुड़ाने के लिए नीतीश को बस इसी सुनहरे मौक़े का इंतज़ार है.

ruby.chauthiduniya@gmail.com

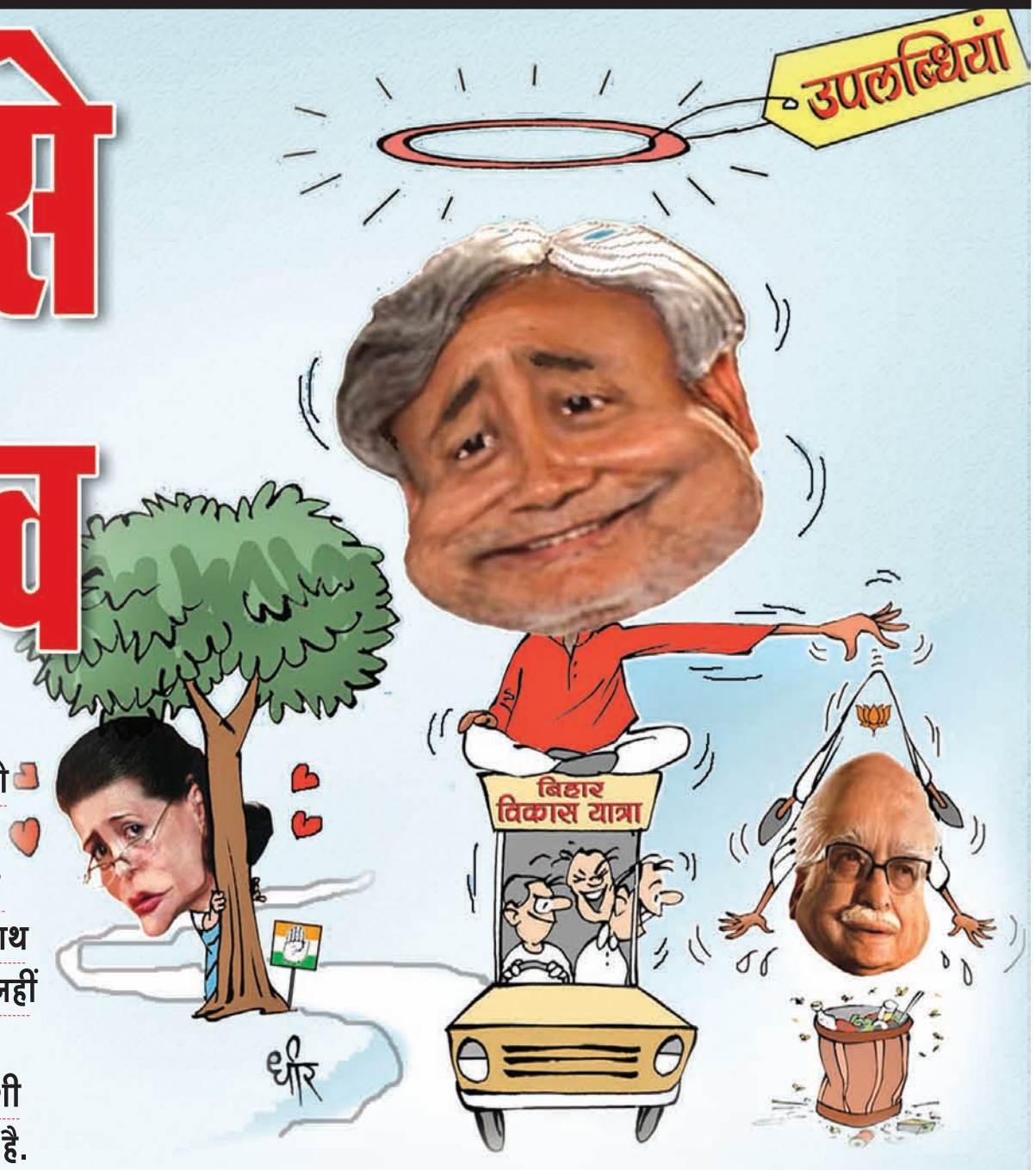

उपचुनाव की तैयारियां हैं ठंडी

बिहार में कुल 17 जगहों पर विधानसभा के उपचुनाव होने हैं, क्योंकि यहां के विधायक अब सांसद बन चुके हैं. चुनाव आयोग इसकी तैयारी भी कर रहा है, पर चाल ज़रा सुस्त है. हमने इस बारे में बिहार मामलों के प्रभारी अंडर सेक्रेटरी आरके श्रीवास्तव से बात की. उन्होंने बताया कि जहां-जहां चुनाव होने हैं वहां की मतदाता सूचियों की समीक्षा का काम चल रहा है. परिसीमन के कारण सभी विधानसभा क्षेत्रों का भूगोल बदल चुका है. यह काम अगस्त तक चलेगा और उसके बाद उपचुनाव संबंधी अधिसूचना जारी की जाएगी. उसके बाद हालात के मुताबिक चुनाव की तारीख़ घोषित होगी. कह सकते हैं कि शायद समय भी नीतीश का साथ दे रहा है. नीतीश के मंसूबों के लिए बिल्कुल मुफीद हालात हैं. कोई भी उपचुनाव कराने के लिए चुनाव आयोग के पास कुल छह महीनों का वक़्त होता है. इसके मुताबिक आयोग नवंबर तक चुनाव करा सकता है, लेकिन इसी दरम्यान अगर जद-यू और भाजपा में खटपट होती है और सरकार अल्पमत में आ जाती है तो नीतीश चुनाव आयोग से पहले ही चुनाव कराने की अपील कर सकते हैं. शायद ऐसी स्थिति में चुनाव आयोग उपचुनाव न करा कर बिहार की सभी विधानसभा सीटों पर चुनाव कराने का फ़ैसला ले ले, क्योंकि महीने-दो महीने के फ़र्क़ के कारण प्रदेश में दो बार चुनाव तो होंगे नहीं. वैसे भी सेक्शन 149 और 150 में उपचुनाव से संबंधित सभी फ़ैसले लेने का अधिकार चुनाव आयोग के ही पास होता है. और वह कोई भी फ़ैसला लेने के लिए संवैधानिक रूप से स्वतंत्र होता है.

फोटो- पीटीआई

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

कायाकल्प

नई सरकार के सामने आने वाली चुनौतियों में एक योजना आयोग को फिर से गठित करने की भी है. मोंटेक सिंह अहलूवालिया के फिर से कार्यभार संभाल लेने और कुछ नए चेहरों के आने के बाद अब बाक़ी स्तरों पर भी फेरबदल की उम्मीद जताई जा रही है. हालांकि यह समझना मुश्किल है कि आख़िर नंदन निलेकानी जैसे और प्रतिभावान लोगों को क्यों जोड़ा नहीं जा सकता. लगता है कि वक़्त आ गया है कि ऐसे फ़ार्मूले की तलाश की जाए, जिससे निजी क्षेत्र के प्रतिभावान लोगों को सरकार से जोड़ा जा सके. वैसे योजना आयोग जैसे सलाहकार की भूमिका वाले काम सिर्फ़ बुद्धिजीवी लोगों को ही आकर्षित करते हैं.

लक्ष्य यह है कि बाहरी विशेषज्ञों के लिए भी द्वार खोले जाएं. अब तक सिर्फ़ प्रशासनिक सेवा और आर्थिक सेवा के अधिकारियों ने ही आयोग में बड़ी भूमिकाएं संभालीं हैं. यह देखते हुए कि विशेषज्ञों की नियुक्ति का यह विचार बाबुओं में ज़ोर पकड़ रहा है, लगता है कि यह जनरल बाबुओं (पढ़ें आईएएस) की उड़ान पर यह पहला अंकुश होगा. हालांकि यह भी कहा जा रहा है कि यह ताक़तवर लॉबी ऐसा होने नहीं देगी. यह सुनिश्चित करने के लिए कि आयोग में सबसे बेहतर प्रतिभा आए, विशेषज्ञों को ऊंचा वेतन देने की बात चल रही है. आंकड़ा पहले पांच महीनों के लिए प्रतिमाह एक लाख के आसपास का है. ज़ाहिर है इससे कुछ दिल तो जलेंगे ही.

बढ़ते विकल्प

भले ही योजना आयोग में आईएएस बाबुओं का स्वागत ज़रा कम हो गया हो लेकिन उनके लिए नए दरवाजे खुल गए हैं. ख़ासकर उन बाबुओं के लिए जो अपने मंत्रालय से जुड़ी नियामक संस्थाओं (रेगुलेटरी बॉडीज) के प्रमुख बनना चाहते थे. सरकार, जिसने पहले इन बाबुओं के ऐसे पदों के लिए आवेदनों पर रोक लगा रखी थी, ने अब कैबिनेट की नियुक्ति कमेटी (एसीसी) के फ़ैसले को पलट दिया है.

इसके पीछे का कारण तलाशें, तो शायद वजह दो सालों में भी वृहत बंदरगाह शुल्क प्राधिकरण या टैरिफ अथॉरिटी फॉर मेजर पोर्ट्स (टीएएमपी) के लिए कोई पूर्णकालिक अध्यक्ष चुनने की सरकारी नाकामी है. इससे पहले के अध्यक्ष ए. एल. बोंगीवार अक्टूबर, 2007 में सेवानिवृत्त हुए थे. तब से सड़क परिवहन विभाग के सचिव ब्रह्म दत्त इस पद का कामकाज देख रहे थे. सूत्र बताते हैं कि सरकार अब पूर्णकालिक अध्यक्ष की खोज के लिए विकल्पों का दायरा बढ़ा रही है. जहाजरानी मंत्रालय को निर्देश दिया गया है कि वह संभावितों की एक नई सूची तैयार करे, जिसमें कुछ बाबू भी शामिल होंगे. हालांकि अगर किसी आईएएस को चुना जाता है तो उसे प्रसाशनिक सेवा छोड़ कर पोर्ट अथॉरिटी से जुड़ना होगा. वैसे क्या यह बात मेरे प्यारे बाबुओं को डिगा पाएगी?

साउथ ब्लॉक

अंजुम ए ज़ैदी

मंत्रालय से डीडीए पहुंचीं सुरंजना

सुरंजना राय (आईएएस, मध्य प्रदेश काडर, 1982 बैच) फ़िलहाल कृषि मंत्रालय के अधीन कृषि और सहकारिता मंत्रालय विभाग के फार्मर्स एग्री बिज़नेस कॉनसॉर्टियम (एसएफएबीसी/एसएफएसी) की प्रबंध निदेशक (एमडी) हैं. वह 20 अक्टूबर 2007 से इस पद पर हैं, लेकिन अब उन्हें नई ज़िम्मेदारी मिल गई है, वह अब वीके साधु की जगह पर दिल्ली विकास प्राधिकारण (डीडीए) की नई मुख्य सतर्कता पदाधिकारी (सीवीओ) के रूप में कार्यभार संभालेंगी.

कब भरेंगे ख़ाली पद

पहले चुनावी तैयारी और फिर आदर्श आचार संहिता लागू होने से कुछ समय के लिए नई नियुक्तियों पर प्रतिबंध लग गया था. अब नई सरकार की प्राथमिकता उन ख़ाली पदों को भरने की है. हालांकि अभी तक ये पद ख़ाली हैं और इसकी भी कोई संभावना नहीं दिख रही है कि कब सरकार इन पदों पर नियुक्ति करेगी. एसके श्रीवास्तव (आईआरएस, आईटी 1995) का कार्यकाल समाप्त हुआ है, तब से पर्यावरण और वन मंत्रालय में (10/02/2009) निदेशक का पद ख़ाली है.

कार्यकाल समाप्त, फिर से नियुक्ति की संभावना

ऐसे बहुत से अधिकारी हैं जिनका कार्यकाल समाप्त तो हो चुका है, लेकिन जल्द ही फिर से उनकी नियुक्ति हो सकती है. जिनका नाम फिर से नियुक्ति की दौड़ में है, उनमें अरविंद मेहता (आईएएस,हिमाचल प्रदेश काडर, 1984) भी शामिल हैं. फ़िलहाल वह वित्त और योजना मंत्रालय में प्रमुख सचिव हैं. इसके अलावा केवी रामाकृष्ण (आईएएस, आंध्र प्रदेश काडर, 1989) भी हैं, जो वर्तमान में उद्योग मंत्रालय में डिस्टिलरिज एंड ब्रेवेरिज कमिश्नर के पद का कार्य भार संभाल रहे हैं.

रंग की तरह नियति नहीं बदल पाए माइकल जैक्सन

राहुल मिश्र

दुनियाभर में पॉप म्यूज़िक के बेताज बादशाह रहे माइकल जैक्सन का पिछले सप्ताह निधन हो गया. जैक्सन 50 साल के थे और 24 जून की दोपहर सीने में दर्द के कारण उन्हें यूक्ला (अमेरिका) के अस्पताल में भर्ती कराया गया. देर रात तीन बजे तक डॉक्टरों की तमाम कोशिशें नाकाम रहीं और पॉप जगत का यह सूरज डूब गया.

1950 के दशक में एल्विस प्रेसले और 1960 में बीटल्स और बॉब डिलन का नाम संगीत की दुनिया में धूम मचा रहा था. इसी बीच एक ऐसा कलाकार उभर रहा था, जिसकी नियति दुनिया भर में छा जाने की थी. 1970 के दशक में महज़ 11 साल की उम्र में माइकल जैक्सन ने अमेरिकी पॉप कल्चर के दरवाज़े पर दस्तक देनी शुरू की. बॉब डिलन, बीटल्स और प्रेसले की दुनिया में क़दम रखने वाला यह पहला अश्वेत था. क्या नियति के साथ आगे बढ़ रहे इस कलाकार को अंदाजा था कि वह कुछ ऐसा करने जा रहा है जो ग़ैर-परंपरागत है!

उस दौर के अमेरिका में नस्लभेद चरम पर था. गोरी चमड़ी वाले किसी भी काले को बर्दाश्त नहीं कर रहे थे. किसी अश्वेत का अमेरिकी समाज की मुख्यधारा में जगह बना पाना असंभव था. जैक्सन के पहले भी कई लोगों ने कोशिश की कि वे मुख्यधारा में आ सकें, लेकिन दो वर्गों में बंटा अमेरिका जेम्स ब्राउन और अरीथा फ्रैंकलिन के संगीत पर झूमा तो ज़रूर, लेकिन उसे अश्वेत संगीत भी करार दिया. संगीत को भी नस्ल की दीवारों और भेदों में बांट दिया गया. पॉप की दुनिया में रंगभेद से बचने में अगर कोई कामयाब हुआ तो वह माइकल जैक्सन ही थे. अपने संगीत के जादू से उन्होंने दुनिया भर में न सिर्फ़ पहचान पाई, बल्कि उस पहचान को ऐसे शिखर तक ले जाने में कामयाब हुए कि उन्हें संगीत की इस दुनिया का बेताज बादशाह कहा जाने लगा. इस मुक़ाम तक पहुंचने के दौरान जहां विवाद जैक्सन के साथ- साथ चले, वहीं एक ऐसा सवाल भी है जिसका जवाब आज तक नहीं दिया गया है.

एक के बाद एक हिट रिकॉर्ड देने के साथ-साथ जैक्सन का चेहरा रंग बदलने लगा. कई चरणों में चली सर्जरी की मदद से माइकल जैक्सन ने अपना रंग ही बदल डाला. उन्होंने कुदरत को चुनौती दी. पैसे के बल पर उन्होंने अपने अश्वेत रंग को बदल कर किसी श्वेत अमेरिकी की तरह दिखने का प्रयास किया. जैक्सन से सुर्खियां बने. उनके क़रीबी राजनीतिक दोस्त भी इत्तफाक से अमेरिका के इसी वर्ग से रहे.

ये कौन शख्स था, यह किस कदर अकेला था
वो शख्स भीड़ में अक़्सर दिखाई देता था

जैक्सन जब भी मीडिया के सामने आए तो उनके अगल-बगल हमेशा श्वेत बॉडीगॉर्ड रहे. ज़ाहिर है, उनके दोस्तों की जिरह और ख़ुद माइकल जैक्सन के संदेशों को माना जाए तो जैक्सन को अश्वेत होने से परहेज भले न हो लेकिन यह अहसास ज़रूर था कि नियति तक पहुंचने में यही अश्वेत रंग उनके आड़े भी आ सकता है. माइकल जैक्सन को इस बात का भी डर था कि कहीं उनको भी उनसे पहले के रॉक और पॉप स्टार्स की तरह ब्लैक संगीत वाला न करार दिया जाए. जैक्सन को अपने वास्तविक रंग और मंजिल में विरोधाभास दिख रहा था.

माइकल जैक्सन की यह सोच बेवजह नहीं थी. मार्टिन लूथर किंग अमेरिका में ब्लैक नेता करार दिए गए. श्वेत अमेरिकी लूथर किंग से ख़ुद को नहीं जोड़ पाए. ऐसे में, 1970 के दशक में उभर रहे कलाकार की ऐसी सोच स्वाभाविक ही कही जाएगी.

2009 में अमेरिका ने एक और प्रतिभा का उदय देखा. इस बार हालात सत्तर के दशक जैसे नहीं थे. राष्ट्रहित और लोकतंत्र रंगभेद पर हावी हो गया. जिसका नतीजा यह रहा कि एक अश्वेत अमेरिकी को दुनिया की सबसे ताक़तवर कुर्सी की चाहत के सामने उनका रंग मुद्दा नहीं बन पाया. बराक ओबामा ने वही काम किया, जो चार दशक पहले माइकल जैक्सन ने किया था. अंतर महज़ इतना था कि जैक्सन मानते थे कि मुख्यधारा में आने के लिए श्वेत होना ज़रूरी है और उसके उलट बराक ओबामा बदलाव की आंधी के साथ रंगभेद जैसे मुद्दे को किनारे धकेलने में कामयाब हुए.

अपने संगीत के हुनर और नियति की जंग में जीत के लिए भले ही जैक्सन को अपनी अश्वेत आइडेंटिटी का त्याग करना पड़ा, पर इस त्याग के लिए उन्हें एक लंबी और कष्टकारी सर्जरी की प्रक्रिया से भी गुज़रना पड़ा.

कई दौर की सर्जरी के बाद इसके दुष्परिणाम भी उनको झेलने पड़े. यहां तक कि उनके चेहरे की त्वचा टूट-फूट गई थी और कई बार तो वह बाहर निकलने पर पूरा चेहरा ढंके हुए दिखे. कभी मास्क तो कभी बुर्का. जैक्सन एक ऐसे बच्चे की तरह थे, जो मानसिक तौर पर कभी भी 17 की उमर से आगे नहीं बढ़ा. शिखर और शोहरत हमेशा अकेलापन लाते हैं. जैक्सन इसके अपवाद नहीं थे. वह भी अंदर से अकेले, थके और बेहद डरे हुए भी थे.

दुनियाभर के पत्रकारों ने मौका मिलने पर यह सवाल किया कि क्या वह अपने अश्वेत होने की बात को नकारने के लिए अपने शरीर का रंग बदल रहे हैं.

इन पत्रकारों को जवाब तो नहीं मिला, लेकिन 1991 के अपने ब्लैक एंड व्हाइट एल्बम से जैक्सन ने दुनियाभर को यह पैग़ाम ज़रूर दे दिया कि काले और श्वेत में कोई अंतर नहीं है. जैक्सन के क़रीबी हमेशा इस बात को नकारते रहे कि उन्हें अश्वेत रंग से किसी तरह का परहेज है. इसके बावजूद, जैक्सन ने एल्विस प्रेसले की बेटी से शादी की. किसी अश्वेत लड़की की जगह उन्होंने श्वेत के साथ शादी की. शायद यह जैक्सन के अचेतन मन में गहरे तक धंसी आत्मकुंठा और निराशावाद ही था, जिसकी वजह से शोहरत पाने के बाद उनके गिर्द केवल श्वेतों का घेरा दिखता था. जैक्सन भले खुले तौर पर इस बात को न स्वीकारते हों, लेकिन यह ज़रूर है कि शोहरत और प्रसिद्धि के शिखर पर बैठा यह व्यक्ति बेहद अशांत था.

रंगभेद का कांटा उनके हृदय में गहरे तक धंसा था. शादी के बाद उनके प्रेम प्रसंग हमेशा श्वेत महिलाओं के साथ हुए, जो मीडिया की

1970 के दशक में महज़ 11 साल की उम्र में माइकल जैक्सन ने अमेरिकी पॉप कल्चर के दरवाज़े पर दस्तक देनी शुरू की. बॉब डिलन, बीटल्स और प्रेसले की दुनिया में क़दम रखने वाला यह पहला अश्वेत था. क्या नियति के साथ आगे बढ़ रहे इस कलाकार को अंदाजा था कि वह कुछ ऐसा करने जा रहा है जो ग़ैर-परंपरागत है!

rahul.chauthiduniya@gmail.com

याद किए गए एसपी सिंह

मौके पर उपस्थित केसी त्यागी, संतोष भारतीय और रामबहादुर राय.

पत्रकारिता की दुनिया के सशक्त हस्ताक्षर सुरेंद्र प्रताप सिंह-जिन्हें लोगबाग एसपी के नाम से जानते थे- की 12 वीं पुण्यतिथि पर उनको याद किया गया. प्रेस क्लब में 27 जून को आयोजित एक समारोह में एसपी को क़रीब से जाननेवाले और उनके साथ काम कर चुके नामी पत्रकारों का जमावड़ा हुआ. इस अवसर पर एसपी को समर्पित मीडियामंत्र पत्रिका का विमोचन भी किया गया. इसमें एसपी के क़रीबी लोगों के संस्मरणों का संग्रह है.

इस मौके पर रामबहादुर राय ने एसपी को याद करते हुए उन्हें सही सरोकारों और जनपक्षधर पत्रकार बताया. राय ने कहा कि एसपी ने ही सही मायने में हिंदी और अंग्रेजी पत्रकारिता के बीच की दूरी को ख़त्म किया. इस मौके पर संतोष भारतीय, केसी त्यागी, आशुतोष, पुण्य प्रसून वाजपेयी आदि भी मौजूद थे.

चौथी दुनिया
हिन्दी का पहला साप्ताहिक अख़बार

आर एन आई रजि.न.45843/86

वर्ष 23 अंक 17, 6-12 जुलाई 2009

प्रधान संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनाट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन
चौधरी बिल्डिंग
कनाट प्लेस
नई दिल्ली 110001

फोन न.
संपादकीय +91 011 47149999
विज्ञापन +91 011 47149916
प्रसार +91 011 47149905
फैक्स न. +91 011 47149906

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

सिख विरोधी दंगों की अनकही कहानी

अर्जुन भगत

हम 1984 के सिख विरोधी दंगों पर अपनी श्रृंखला में इस बार एच एस फूलका का इंटरव्यू दे रहे हैं. इससे उस विरोधाभास का पता चलता है, जो तत्कालीन सरकार ने दोषियों को सज़ा से बचाने के लिए अपनी कार्रवाई में दिखाया था. 28 वर्ष की उम्र से ही हरविंदर सिंह फूलका अथक प्रयास कर 1984 नरसंहार के पीड़ितों को न्याय दिलाने और दोषियों को सज़ा दिलाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं. फूलका ने पीड़ितों को संगठित कर गवाही दिलाई. वैसे मामलों को आगे बढ़ाया, जिनके सुलझने की कोई उम्मीद तक नहीं थी. वह अभी 53 वर्षों के हैं और दिल्ली कोर्ट में वरिष्ठ अधिवक्ता हैं. वह 1984 दंगों पर लिखी किताब-व्हेन अ ट्री शूक डेल्ही-के लेखक भी हैं.

कई वर्षों से कांग्रेस ने 1984 के दंगों की व्याख्या त्वरित प्रतिक्रिया के तौर पर की है. कुछ तो इसको सफलतापूर्वक कहने में सफल भी रहे हैं. आप इसको कैसे देखते हैं?

यह दरअसल तत्कालीन सरकार के प्रयास थे, जिसने इसे त्वरित प्रतिक्रिया बताया. यह सिद्धांत दरअसल बनाया गया है. सच पूछें तो, जब आप इसकी गहराई में जाएंगे, तो पाएंगे कि यह एक सोची-समझी रणनीति थी. किसी स्वत:स्फूर्त प्रतिक्रिया में दंगे किसी सुनसान या एक स्थान पर ही शुरू होंगे, लेकिन यहां पहले जिस सिख पर हमला हुआ, वह भारत के राष्ट्रपति थे. उनके क़ाफ़िले पर पथराव हुआ. यह ज़ाहिर तौर पर सुनियोजित तैयारी को दिखाता है. अगर राष्ट्रपति पर हमला हो सकता है, तो आम सिख की हालत क्या रही होगी?

हमें यह बताइए कि 31 अक्टूबर से लेकर तीन नवंबर तक के छोटे समय में क्या हुआ? क्या आप सोचते हैं कि पुलिस और प्रशासन के पास हालात को क़ाबू में लाने का पर्याप्त समय था?

दिल्ली कोई अस्थिर शहर नहीं है. यह दूसरे शहरों में हो सकता है, लेकिन दिल्ली हमारे देश की राजधानी है. यहां पर हमें देश के इतिहास का सबसे डरावना जनसंहार देखना पड़ा. यहां तक कि कोलकाता में भी सिखों के ऊपर 31 अक्टूबर की दोपहर कुछ हमले हुए, पर शाम तक सेना की मदद से इसे क़ाबू में कर लिया गया. दिल्ली में लोगों को इकट्ठा करने के लिए पहले तो उन्होंने राष्ट्रपति पर हमला किया. इस हमले से बिल्कुल साफतौर पर तीन संदेश दिए गए. पहला, कोई भी सिख-भले ही कितना ऊंचा हो-बच नहीं पाएगा. दूसरे, दंगाइयों को यह संदेश दिया गया कि पुलिस उनको नहीं छूएगी. तीसरा संदेश पुलिस को दिया गया कि वह हस्तक्षेप न करे. 31 को तो लूट और आगजनी की कुछ ही घटनाएं हुईं थीं, लेकिन हिंसा की बड़ी वारदातें नहीं हुईं. 31 तारीख़ की रात को ही स्थानीय कांग्रेस नेताओं ने बैठक की और सिख घरों की सूची बांटी. उसी रात उन्होंने अपने तरीक़े भी निर्धारित किए. अगली सुबह भीड़ दिल्ली की गलियों में सिखों का ख़ून कर रही थी. भीड़ का नेतृत्व स्थानीय सांसद, विधायक और पार्षद कर रहे थे. एक रणनीति के तहत पहले गुरुद्वारों पर हमला किया गया, ताकि सिख इकट्ठे होकर अपने बचाव का रास्ता न ढूंढ़ सकें. यहां तक कि पुलिस ने भी सिखों से हथियार छीन लिए. कहा गया, कि पुलिस उनकी हिफ़ाज़त करेगी और सिखों को चिंता करने की ज़रूरत नहीं है.

सेना को क्यों नहीं बुलाया गया?

इसलिए, क्योंकि ख़ून की यह होली या सिखों से लिया गया बदला, सुनियोजित था. सेना की पहली टुकड़ी को मेरठ से के पी सिंहदेव (तत्कालीन रक्षा राज्यमंत्री) ने बुलाया. वह शायद योजना से वाक़िफ़ नहीं थे. वह टुकड़ी 31 अक्टूबर की शाम सात बजे पहुंची और उसे दिल्ली सीमा पर ही तीन घंटे तक इंतज़ार कराया गया. अगर इसे प्रवेश की अनुमति दी गई होती, तो हिंसा उनको देखते ही उसी वक़्त बंद हो गई होती. बेहद महत्वपूर्ण समय को बर्बाद कर दिया गया. उनको इंतज़ार के बाद भी उन इलाक़ों में भेजा गया, जहां कमतर हिंसा हो रही थी. सेना को सचमुच के दंगाग्रस्त इलाक़ों में तो अगली शाम को ही भेजा गया और तीसरे दिन से ही सेना प्रभावी ढंग से काम कर सकी. तब तक हज़ारों निर्दोष मारे जा चुके थे.

भीड़ किस तरह कत्लेआम कर रही थी. ख़ासकर त्रिलोकपुरी में, जहां दिनदहाड़े 400 लोगों को बस दो छोटी गलियों में मार डाला गया.

जैसा आपने कहा, नरसंहार दिनदहाड़े हुआ. भीड़ को निर्देश मिल रहे थे, और उन्हें कोई जल्दी नहीं थी. वे सिखों के घरों में जाते, उनकी टीवी, मोटरसाइकिल वग़ैरह लेते और कहते कि हम आपको बचा लेंगे. विडंबना तो यह कि इलाक़े के अधिकतर सिख कांग्रेस के समर्थक थे और भीड़ की अगुआई स्थानीय नेता कर रहे थे. इसी वजह से वह असल में सिखों को आश्वासन देते थे कि उनका कोई नुक़सान नहीं होगा और सिख अपने घरों में ही रहें. यह दूसरा षड्यंत्र था ताकि सिख अपना बचाव नहीं कर सकें. एक बार सिखों का सारा सामान लेने के बाद भीड़ दुबारा आती थी और एक-एक कर सिखों का संहार किया.

दिल्ली पुलिस की क्या भूमिका थी?

पुलिस तो दंगाइयों के साथ थी. सच पूछिए तो कई घटनाएं ऐसी भी हुईं जहां पुलिस के वरिष्ठ अधिकारियों ने इस बात को सुनिश्चित किया कि भीड़ को मनमानी करने की छूट हो. एक नवंबर को पुलिस उन इलाक़ों में गई, जहां सिख बहादुरी से अपनी रक्षा कर रहे थे. पुलिस ने कई को गिरफ़्तार किया और उनके हथियार छीन लिए. दंगाइयों को कुछ नहीं कहा गया. कल्याणपुरी में भी इलाक़े के थाना प्रभारी ने निजी हथियार छीन लिए. पुलिस ने 24 सिखों को गिरफ़्तार किया. पहली एफआईआर सिखों के ख़िलाफ़ ही हुई. इधर भीड़ सिखों पर हमले करती रही और ख़ून बहाती रही. इसी से सरकार और पुलिस की नासमझी या हिस्सेदारी बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है. सरकारी रिकॉर्ड बताते हैं कि पहली और दूसरी नवंबर को 1026 सिख मारे गए थे. पुलिस ने सिखों की मौत का हिसाब ही नहीं रखा.

राजीव गांधी 1985 में भारी अंतर से जीते थे. 17 जनवरी को उन्होंने और राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह ने प्रेस कांफ्रेस की. उन्होंने कहा कि पुलिस ने प्रभावी और कड़े क़दम उठाए थे. इसके बावजूद 3000 लोग मारे गए.

लोगों को बताया गया था कि यह सब कुछ तीन दिनों चलेगा. तीन दिनों तक सबक़ सिखाया गया. उसके बाद तीसरी दोपहर को अचानक ही सब कुछ नियंत्रण में आ गया, क्योंकि सेना और पुलिस सक्रिय हो गई. इस तरह हिंसा रुक गई. वे पूरी तरह हालात को नियंत्रित कर सके, जैसे ही उन्होंने करना चाहा. यह तो इतिहास ही फ़ैसला करेगा कि कार्रवाई प्रभावी थी या नहीं, या फिर वह कार्रवाई संभावित कम समय में की गई.

पुलिस तो दंगाइयों के साथ थी. सच पूछिए तो कई घटनाएं ऐसी भी हुईं जहां पुलिस के वरिष्ठ अधिकारियों ने इस बात को सुनिश्चित किया कि भीड़ को मनमानी करने की छूट हो. एक नवंबर को पुलिस उन इलाक़ों में गई, जहां सिख बहादुरी से अपनी रक्षा कर रहे थे. पुलिस ने कई को गिरफ़्तार किया और उनके हथियार छीन लिए. दंगाइयों को कुछ नहीं कहा गया. कल्याणपुरी में भी इलाक़े के थाना प्रभारी ने निजी हथियार छीन लिए.

आपके हिसाब से राजीव गांधी की क्या भूमिका थी? आख़िर उन्होंने अपनी मां को खोया था और प्रधानमंत्री पद की शपथ भले उन्होंने ले ली हो, लेकिन शोकग्रस्त तो वह होंगे ही. क्या कोई उनको सचमुच दिल्ली और देश भर में हुई घटनाओं का ज़िम्मेदार ठहरा सकता है?

जब किसी की हत्या होती है, तो बदले में दूसरों की हत्या नहीं की जाती. यह किसी आम इंसान से अपेक्षित नहीं है. प्रधानमंत्री का कर्तव्य है कि वह नागरिकों की रक्षा करे. इस तरह का कुछ देश के शासक से अपेक्षित नहीं है, भले ही हालात और स्थितियां कितनी ही दुखद और त्रासद क्यों न हों.

कई कांग्रेसी नेताओं पर 1984 के दंगों को उकसाने का आरोप लगा, लेकिन किसी को भी सज़ा नहीं मिली. आपके हिसाब से आख़िर इसकी वजह क्या रही?

इससे तो केवल यही अनुमान लगाया जा सकता है कि हिंसा राजीव गांधी सरकार के आदेश पर की गई. जो सांसद इसमें संलिप्त थे, उनको फिर से उम्मीदवार बनाया गया, ईनाम दिए गए. टाइटलर को पहली बार कैबिनेट में लाया गया. इसीलिए यह सर्वोच्च कार्यालय की शह और आदेश पर की गई कार्रवाई थी.

आधिकारिक तौर पर कहा गया कि दिल्ली में उन तीन दिनों में 2733 लोगों की हत्या हुई. हालांकि यह संख्या 3500 से 4000 के बीच थी. इस जनसंहार के लिए कितने लोगों को अभियुक्त बनाया गया? क्या किसी को भी इन हत्याओं के लिए फांसी दी गई?

किसी को फांसी नहीं दी गई. आठ मामलों में अभियोग चला और उसे हाईकोर्ट ने भी बरक़रार रखा. केवल 17 को उम्रक़ैद दी गई.

क्या यह आपको निराश करता है? आप तो क़ानूनविद हैं. क्या यह आपको अवसादग्रस्त करता है?

यह निश्चित तौर पर दुखद है. हालांकि मैं इस हद तक कुंठित नहीं हूं कि संघर्ष ही छोड़ दूं. यही तो दोषी चाहते हैं. मामले को दबा दो, ताकि लोग इसे भूल जाएं.

क्या पुलिस और प्रशासन ने दंगे और हत्या जैसे मामलों के लिए सबूत इकट्ठा करने की कोशिश की. क्या जनसंहार के कुछ ही दिनों के बाद बयान दर्ज़ किए गए?

यह करने के बजाय उन्होंने पीड़ितों को भगा दिया और एफआईआर भी नहीं लिखी. जैसे, त्रिलोकपुरी में -जहां तीन दिनों में 400 लोगों की हत्या हुई, केवल एक एफआईआर दर्ज़ हुई. यह पूरी दिल्ली में हुआ. एफआईआर केवल पांच-छह वाक्यों की लिखी गई. कहा गया कि लोग इंदिरा गांधी की हत्या के बाद से गुस्से में थे. यही एफआईआर पूरी दिल्ली में हुई. जानबूझकर कोशिश की गई कि मामले को दबा दिया जाए, ताकि लोग सबकुछ भूल जाएं.

तो फिर, उन कई सारे आयोगों-जैसे नानावती या मिश्र आयोग-का क्या हुआ?

सरकार ने नवंबर 1984 में वेद मारवाह समिति गठित की, ताकि पुलिस की भूमिका की जांच की जा सके. वेद मारवाह बाद में पुलिस कमिश्नर भी बने. वह पुलिसवालों की भूमिका पर अपनी रिपोर्ट देने ही वाले थे जब सरकार ने उनको रोक दिया और सारे काग़ज़ात मिश्र आयोग को सौंप दिए. मिश्र आयोग ने सभी को बचाने की कोशिश में सबको क्लीनचिट दे दी. उनको कांग्रेस की तरफ़ से इसका ईनाम भी मिला. मिश्र ने यह प्रक्रिया शुरू की. जब किसी पीड़ित ने किसी मंत्री या पुलिस अधिकारी का नाम लिया, तो एफआईआर या तो लिखी नहीं गई या उस मंत्री या अधिकारी का नाम हटा दिया गया. कमीशन की रिपोर्ट में कहा गया कि सरकार ज़िम्मेदार नहीं थी, केवल निचले स्तर के लोग ज़िम्मेदार थे. मिश्र की रिपोर्ट में यह निष्कर्ष दिया गया कि वह किसी का नाम नहीं लेंगे क्योंकि यह उनका काम नहीं है, किसी और आयोग का इस काम के लिए गठन किया जाए. इस तरह सब लीपापोती कर दी गई. यह प्रस्ताव दिया गया कि सज्जन कुमार के ख़िलाफ़ मामला दर्ज़ किया जाए. यह बात हाईकोर्ट तक गई और नियुक्ति को ही तकनीकी आधार पर चुनौती दे दी गई. इस तरह समिति को 1989 में भंग कर दिया गया. पांच साल बीतने के बाद भी कुछ नहीं हुआ. थोड़ी बहुत जानकारी भी नानावती आयोग की वजह से आ सकी. बाक़ी सब बस दिखावे के थे.

क्या यह कहना ठीक नहीं होगा कि जनसंहार के बारे में मिथ गढ़े गए?

इसमें लिप्त लोगों को बचाया गया और तथ्यों के साथ घालमेल किया गया. यहां तक कि न्यायिक व्यवस्था के साथ भी खिलवाड़ हुआ. दूसरा उदाहरण तो जस्टिस वेद का है. एक विधवा ने अपने बयान में कहा कि सज्जन कुमार उस भीड़ का नेतृत्व कर रहे थे, जिसने उसके पति की हत्या की. एफआईआर दर्ज़ करने के लिए इतना पर्याप्त था.

सरकारी वकील ने पंद्रह दिनों की मोहलत मांग ली और इसी बीच सरकार ने नए मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति कर दी,जिन्होंने जस्टिस वेद से मामला वापस ले लिया. यही बात हर मामले के साथ लागू होती है. कुछ न्यायाधीशों ने अच्छे फ़ैसले भी दिए, लेकिन मोटे तौर पर सरकार के हरेक हिस्से ने दोषियों को बचाया.

मुआवज़ा कितना मिला, क्योंकि दंगों के बाद राजीव गांधी ने इसकी घोषणा तो की थी?

घर जलाए गए, गहने, पैसे और व्यापार का नुक़सान हुआ. इसके बावजूद एक व्यक्ति की मौत की क़ीमत 10,000 रुपये लगाई गई. अगर घर पूरी तरह नष्ट हो गया, तो 10,000 रुपये और बुरी तरह टूटने-फूटने पर 5,000 रुपयों की घोषणा की गई. मानवीय ज़िंदगी का मूल्य ऐसे आंका गया.

आपने पीड़ितों के लिए अपना जीवन ही समर्पित कर दिया. क्या इससे आपको एक तरह की संतुष्टि मिलती है?

चूंकि न्याय मिलना अभी शेष है, इसलिए संतुष्टि का तो सवाल ही नहीं है. लेकिन इससे संतुष्टि मिलती है कि हमने इसके लिए कोशिश की.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

निशंक उत्तराखंड के लिए नरेंद्र मोदी के छोटे भाई

नए मुख्यमंत्री रमेश पोखरियाल निशंक के साथ पूर्व मुख्यमंत्री खंडूरी

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

राजकुमार शर्मा

उत्तराखंड में भारतीय जनता पार्टी ने भुवन चंद्र खंडूरी की विदाई करके संघ के एजेंडे पर नई सरकार को चलाने के लिए कट्टर हिंदूवादी छवि के धनी डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक को मुख्यमंत्री की गद्दी सौंप कर गुजरात की राह पर चलने को हरी झंडी दे दी है. डॉ. निशंक जहां संघ परिवार की पहली पसंद है, वहीं उनकी पहचान गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी की भांति ही कट्टर हिंदूवादी नेता की भी है. इसलिए तय है कि प्रदेश को मोदी मॉडल की सरकार और प्रशासन देना उनकी प्राथमिकता होगी. कहा जा रहा है कि संघ परिवार एवं भाजपा के कट्टर हिंदूत्ववादी छवि वाले लोग राज्य के प्रशासनिक एवं सरकारी ढांचे को मोदी मॉडल पर चलाने का खाका भी नए मुख्यमंत्री को सौंप चुके हैं. यानी तय है कि उत्तराखंड में शासन का गुजरात मॉडल चलेगा. इस तरह प्रदेश में अब तक की गंगा–जमुना संस्कृति के बजाय हिंदूत्ववादी नीतियों को अधिक अहमियत मिलेगी.

हालांकि 2007 में भुवन चंद्र खंडूरी को राज्य की सत्ता सौंपते समय संघ परिवार ने उनसे भी यही उम्मीद की थी. सोचा था कि खंडूरी देवभूमि उत्तराखंड को संघ के फ़ार्मूले पर मॉडल प्रदेश बनाएंगे, किंतु अपने फौजी स्वभाव के कारण खंडूरी इसमें चूक गए. प्रथम चरण से ही संघ का ट्रैक छोड़कर उन्होंने प्रदेश को फौजी शासक की भांति चलाना शुरू कर दिया. एक वर्ष के शासन के बाद उन्हें संघ की राय कम भाने लगी, दूसरा वर्ष बीतते–बीतते उन्होंने अपने सलाहकारों में से संघ परिवार के लोगों को बॉय–बॉय कह दिया. देखते ही देखते खंडूरी फौजी शासक की तरह व्यवहार करने लगे और उसी ढर्रे पर शासन चलाना भी शुरू कर दिया, जो आगे चलकर उनके लिए पूरी तरह से आत्मघाती साबित हुआ. सत्तारूढ़ भाजपा के लगभग दो दर्जन से अधिक विधायक उनसे नाराज़ होकर निज़ाम बदलने की मांग करते हुए दिल्ली दरबार में दस्तक देने लगे. दिल्ली दरबार (भाजपा हाईकमान) में आम चुनाव के पूर्व से जो खेमेबंदी का दलदल तैयार हुआ था, उसका पूरा लाभ खंडूरी ने अपनी राजनैतिक चातुर्य से लिया. इसका परिणाम था कि पूर्व मुख्यमंत्री भगत सिंह कोश्यारी की अगुआई में रची गई बग़ावत को खंडूरी ने नाकाम कर दिया. टी.पी.एस. रावत को कांग्रेस से तोड़ कर उपचुनाव में प्रत्याशी बनाने का खेल जिस तरह से जनरल खंडूरी ने खेला, वह भी भाजपा के लिए आत्मघाती सिद्ध हुआ. खंडूरी ने उपचुनाव में सत्ता की ताक़त के बल पर रावत को सांसद तो बना लिया, किंतु जनता में यह सवाल उठ गया कि सबसे बड़े घोटालेबाजे के रूप में बदनाम कांग्रेसी नेता टी.पी.एस.रावत भाजपा में आदरणीय कैसे बन गए. खंडूरी जी की अगुआई में इसी तरह का खेल मेयर के चुनाव में भी रजनी रावत की जीत को हार में बदलने का खेला गया. इससे जहां उनकी ईमानदार छवि पर धूमिल हो गई, वहीं उनका फौजी की तरह शासन करना एक ख़राब शासक का जुमला बन गया. इसे संसदीय चुनाव के दौरान कांग्रेस के युवा नेता राहुल गांधी ने जमकर इस्तेमाल किया.

जनरल खंडूरी का जाना और डॉ. निशंक का आना इन दिनों भाजपा के लिए भले उपलब्धि लग रही हो, किंतु आम जनता के लिए विश्व पर्यटन के महत्व की इस स्थली में कट्टर हिंदूत्ववादी छवि वाले डॉ. निशंक के आगमन में कोई ख़ास बात नहीं दिख रही है. वैसे प्रदेश में भारतीय जनता पार्टी ने मुखिया भले बदल दिया, किंतु राजनीति के जानकार अब भी कहते हैं कि सत्ता की बागडोर अदृश्य रूप से अभी भी खंडूरी के हाथ में ही होगी. हालांकि इस बात से लोगों को ज़्यादा संतोष है कि जिस तरह जनरल खंडूरी सत्ता को आईएएस अधिकारियों के ज़रिए चलाते थे, उसमें भारी सुधार की संभावना अब दिखाई दे रही है. वैसे मुख्यमंत्री बदलने के बावजूद प्रदेश भाजपा में ऐसा बहुत कुछ अभी भी बाक़ी है, जो उसकी सेहत के लिए ठीक नहीं है. इस संदर्भ में कोश्यारी समर्थकों के रुख़ को देखा जा सकता है. यानी कहा जा सकता है कि इस हिमालयी प्रदेश में राजनीतिक गर्माहट के साथ पार्टी का अंदरूरी उठापटक समाप्त नहीं होगा. किंतु निशंक के व्यक्तित्व के बारे में नज़दीक से जानने वाले कहते हैं कि सब कुछ बदलेगा और चमत्कृत कर देने वाले परिणाम भी होंगे.

निशंक के भविष्य को लेकर ज्योतिषी आदि भी सक्रिय हो गए हैं. उत्तराखंड के ज्योतिष विज्ञान के मर्मज्ञ निशंक के सत्तारूढ़ होने पर कहते हैं कि सफलताएं तो उनके पांव चूमेंगी, किंतु उनके अपने दिखने वाले उन्हीं की पार्टी के लोग उन्हें उद्वेलित करते रहेंगे. इन ज्योतिषियों का मानना है कि सूबे की सत्ता की धुरी की चूल को हिलाने की प्रक्रिया अंदर से जारी रहेगी. सूबे के मुख्य विपक्षी दल कांग्रेस के दिग्गज नेता हरीश रावत को जिस तरह यूपीए सरकार में मंत्री का ओहदा दिया जा चुका है उससे राजनीति के मर्मज्ञ मानते हैं कांग्रेस की ओर से निशंक सरकार को कोई ख़ास तंग नहीं किया जाएगा. सहयोगी दलों के समर्थन बनाए रखने की प्रक्रिया एवं सदन में भाजपा का पूर्ण बहुमत निशंक को ख़ासा राहत दे रही है. बड़ी बात यह है कि अपने मनमाने फ़ैसले के कारण जिस तरह जनरल खंडूरी संघ परिवार की आंख की किरकिरी बन गए थे और एक के बाद एक ऐसी स्थिति बन गई थी कि संघ भी उनके फौजी शासन से पार्टी व जनता को बचाने की वकालत करने लगा था. इतना ही नहीं, कांग्रेस के राष्ट्रीय महासचिव राहुल गांधी ने भी संसदीय चुनाव में जनरल खंडूरी के फौजी राज को निशाने पर लिया था. अब इन तमाम बातों को देखते हुए यह स्थिति साफ हो गई है कि निशंक को अपने पत्रकारिता की दृष्टि, कवि के हृदय और भारतीयता के भाईचारा पर आधारित सोच के आधार पर शासन करना होगा.

सत्तारूढ़ भाजपा के लगभग दो दर्जन से अधिक विधायक उनसे नाराज़ होकर निज़ाम बदलने की मांग करते हुए दिल्ली दरबार में दस्तक देने लगे. दिल्ली दरबार (भाजपा हाईकमान) में आम चुनाव के पूर्व से जो खेमेबंदी का दलदल तैयार हुआ था, उसका पूरा लाभ खंडूरी ने अपनी राजनैतिक चातुर्य से लिया. इसका परिणाम था कि पूर्व मुख्यमंत्री भगत सिंह कोश्यारी की अगुआई में रची गई बग़ावत को खंडूरी ने नाकाम कर दिया.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

अब क्या मध्य प्रदेश में मुख्यमंत्री बदलेगा ?

संध्या पाण्डे

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ मध्य प्रदेश में आख़िर चाहता क्या है ? भारतीय जनता पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी में हुई बहस ने दल में चल रहे विभिन्न वैचारिक असंतोषों को ज़ाहिर कर दिया है? अब यदि भाजपा संयुक्त रहना चाहती है तो क्या इसे पूरी तरह संघ की शरण में जाना ही होगा? इस प्रश्न के उत्तर को मध्य प्रदेश में संभावित सत्ता परिवर्तन की प्रक्रिया से जोड़कर देखा जा रहा है. ग़ौरतलब है कि जल्द ही पड़ोसी राज्य महाराष्ट्र में विधानसभा चुनाव होने हैं और संघ परिवार एक बार फिर से सत्ता पर क़ब्ज़ा जाना चाहता है. लेकिन संघ यदि महाराष्ट्र की राजनीति पर क़ाबिज़ होना चाहता है तो उसे गुजरात के बाद मध्य प्रदेश में संघ समर्पित भाजपाई मुख्यमंत्री की ज़रूरत है. भाजपा के आंतरिक संकट ने संघ के राजनैतिक एजेंडे को लगभग समाप्त कर दिया है. शायद इसीलिए उत्तराखंड के बाद संघ मध्य प्रदेश को भारतीय जनता पार्टी के माध्यम से ही अपने पूरे राजनैतिक नियंत्रण में लेने के लिए तत्पर है.

उत्तराखंड में सत्ता परिवर्तन के बाद अब मध्य प्रदेश में भी इस तरह के बदलाव की अफ़वाहें ज़ोर पकड़ती जा रही हैं. राज्य में सत्ता और संगठन दरअसल संघ समर्पित राजनीति को मदद कर पाने में सक्षम नहीं हैं. लोकसभा चुनाव में प्रदेश में भाजपा की घटी हुई सीटों और चुनाव प्रचार के दौरान संघ व भाजपा कार्यकर्ताओं के स्पष्ट विभाजन ने संघ को नई चेतना दी है. संघ नेतृत्व आज भाजपा को जो भी सलाह दे रहा है, वे कुछ उदाहरणों और प्रमाणों पर आधारित हैं और ये सब मध्य प्रदेश से ही एकत्रित किए गए हैं. पिछले चुनाव के दौरान संघ और भाजपा ने अलग–अलग होकर अपने अस्तित्व को संकट में डाल लिया है. महाराष्ट्र चुनाव के दौरान सीमावर्ती राज्यों में कमज़ोर प्रशासन और राजनीति संघ के लिए विशेष तौर पर चिंता का विषय है. संघ यह महसूस करता है कि मध्य प्रदेश में जिस क्षेत्र को भाजपा ने खोया है, वह महाराष्ट्र की राजनीति पर सर्वाधिक प्रभाव डालने वाला है. मालवा और निमाड़ के इस क्षेत्र में भाजपा को मुंह की खानी पड़ी है.

भाजपा के कई मंत्री कमज़ोर राजनैतिक नेतृत्व के चलते निरंकुश हो चुके हैं. इन मंत्रियों ने राज्य की राजनीति को अपने–अपने तरीक़े से चलाना शुरू कर दिया है. गौरी शंकर बिसेन जैसे मंत्री राज्य में उपजातीय संघर्ष की व्यूहरचना करने में जुटे हुए हैं. भ्रष्टाचार का आलम यह है कि लगभग पूरे मंत्रिमंडल पर ही इसे लेकर आरोप लग रहे हैं. परिणाम यह है कि निरंकुश सत्ता संघ के लिए एक समानांतर सत्ता का कारण बन चुकी है. शायद यही कारण है कि मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने प्रशासनिक कसावट के नाम पर टाइम–टेबल का पालन कराना पहली ज़रूरत समझ लिया है. राजनैतिक तौर पर संघ अपनी गतिविधियों के लिए वर्तमान सरकार को असहयोगी ही पाता है. मध्य प्रदेश की राजनीति के भरोसे संघ महाराष्ट्र में किसी मदद की उम्मीद नहीं रखता. पिछले दिनों राष्ट्रीय कार्यकारिणी में भाजपा के वरिष्ठ नेताओं के बीच हुई बहसबाज़ी को भी संघ ने गंभीरता से लिया है. संघ के लिए यह आवश्यक है कि महाराष्ट्र का चुनाव किसी तरह से भाजपा के पक्ष में जाए, ताकि पार्टी अपनी खोई हुई साख को फिर से पाने की दिशा में आगे बढ़ सके. महाराष्ट्र की विजय संघ को भी अपने कार्यक्रमों को संचालित करने में मदद करेगी. ऐसी स्थिति में आज संघ की ज़रूरत है कि मध्य प्रदेश में सत्ता परिवर्तन किया जाए. किसी ऐसे व्यक्ति को जो मुख्यमंत्री बनाया जाए, जो यहां की संगठन क्षमता से परिचित हो. साथ ही जो प्रदेश में संघ की गतिविधियों को बख़ूबी संचालित भी कर सके.

उत्तराखंड में मुख्यमंत्री पद पर परिवर्तन राजनैतिक नहीं, कूटनीतिक प्रक्रिया का भाग था. इसी क्रम में यदि भाजपा शासित राज्यों के मुख्यमंत्रियों की ज़िम्मेदारियों का निर्धारण कर परिवर्तन किया जाता है, तो राष्ट्रीय स्तर पर संघ समर्थित भाजपा के स्वरूप को जीवित किया जा सकता है. वास्तव में भाजपा की समूची राजनीति में अब समन्वय की राजनीति सिर्फ़ संघ के निर्देश पर ही शेष बची है. राष्ट्रीय नेतृत्व तो भाजपा को संगठित रखने में असफल हो ही चुका है.

मध्य प्रदेश में परिवर्तन की संभावनाएं बलवती होती जा रही हैं, इसका प्रमाण राज्य के वरिष्ठ मंत्रियों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में अपने ही दल के विरुद्ध बयानबाज़ी है. यह सिलसिला थमने के बजाय जारी है, जिसके परिणाम भाजपा को अपनी संगठित राजनीति निर्मित करने के दौरान भुगतने पड़ रहे हैं.

संकेत तो यहां तक मिल रहे हैं कि मध्य प्रदेश का अगला मुख्यमंत्री भाजपा से कहीं अधिक संघ के लिए समर्पित होगा. इस व्यक्ति का निर्धारण पूरी तरह संघ कार्यालय द्वारा ही किया जाना है.

उत्तराखंड में सत्ता परिवर्तन के बाद अब मध्य प्रदेश में भी इस तरह के बदलाव की अफ़वाहें ज़ोर पकड़ती जा रही है. राज्य में सत्ता और संगठन दरअसल संघ समर्पित राजनीति को मदद कर पाने में सक्षम नहीं है. लोकसभा चुनाव में प्रदेश में भाजपा की घटी हुई सीटों और चुनाव प्रचार के दौरान संघ व भाजपा कार्यकर्ताओं के स्पष्ट विभाजन ने संघ को नई चेतना दी है.

भ्रष्टाचार का आलम यह है कि लगभग पूरे मंत्रिमंडल पर ही इसे लेकर आरोप लग रहे हैं. परिणाम यह है कि निरंकुश सत्ता संघ के लिए एक समानांतर सत्ता का कारण बन चुकी है. शायद यही कारण है कि मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने प्रशासनिक कसावट के नाम पर टाइम–टेबल का पालन कराना पहली ज़रूरत समझ लिया है. राजनैतिक तौर पर संघ अपनी गतिविधियों के लिए वर्तमान सरकार को असहयोगी ही पाता है. मध्य प्रदेश की राजनीति के भरोसे संघ महाराष्ट्र में किसी मदद की उम्मीद नहीं रखता.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

लालगढ़ में माओवादियों ने क़दम खींचे

लालगढ़ के जंग-ए-मैदान के ऊपर मंडराता हेलीकॉप्टर, ज़मीन पर पसीना पोंछते-रेंगते हुए आगे बढ़ रहे सुरक्षा बल. साथ में बिना पानी-पीए और सांप-बिच्छू खाकर भी ज़िंदा रहने की कूबत वाले कोबरा फोर्स के प्रशिक्षित जवान. लालगढ़ के बाद रामगढ़ और 29 जून को कांटापहाड़ी पर भी क़ब्ज़ा हो गया. पहले ऐसा लगा था कि माओवादी सुरक्षा बलों को जंगलों की ओर खींच रहे हैं और एक भीषण युद्ध होगा, पर संयुक्त बलों की ताक़त का उन्हें पूरा पता है और 13 दिनों की जंग के बाद इलाक़े के सभी प्रमुख शहरों व क़स्बों पर सुरक्षा बलों के क़ब्ज़े के बाद अब साफ लग रहा है कि माओवादी पीछे हट रहे हैं. हालांकि कई रूटों, जैसे बेलटिकरी से बीनपुर, लच्छीपुर से बेलटिकरी, लालगढ़ से धेरुआ तथा गोआलतोड़ से पीराकाटा में माओवादियों के ख़िलाफ़ अभियान अगले कुछ दिनों में तेज़ होगा.

माओवादी पीछे हट रहे हैं, पर उन पर जनता का जमा-जमाया विश्वास ख़त्म न हो जाए, इसलिए वे अपनी 202 और 302 बोर की बंदूकों से अंधाधुंध फायरिंग कर जंग का माहौल बनाए हुए हैं. 51 एमएम के मोर्टारों से लैस सीआरपीएफ जवानों के साथ माइनस्वीपर भी हैं. बारूदी सुरंगों का पता लगाकर उन्हें नष्ट किया जा रहा है. पिंगगनी और कादासोले में अब तक सुरक्षा बलों पर सात बार आईईडी विस्फोट किए गए हैं, जबकि समय रहते पता चलने के बाद दो को निष्क्रिय किया जा चुका है. किसी को भी संयुक्त बलों की ताक़त पर संदेह नहीं है, पर सुरक्षा बलों को माओवादियों के बड़े अड्डों को खोजने में अगर परेशानी हो रही है तो इसकी वजह प्रशासन की ओर से पर्याप्त ख़ुफ़िया सूचनाएं नहीं मिल पाना है. उधर, आदिवासी संघर्ष समिति अपनी जनता का मनोबल बहाल कर व सुरक्षा बलों के बारे में सूचनाएं मुहैया कराकर माओवादियों की अप्रत्यक्ष रूप से मदद कर रही है. हाल ही में संघर्ष समिति के प्रमुख छत्रधर महतो ने कांटापहाड़ी और धरमपुर में दो जनसभाएं कीं, जिनमें सुरक्षा बलों के अभियान को जनता पर अत्यचार कहा गया.

बंगाल में जिस तरह मानसून की आवक टल रही है, उसी रफ़्तार से सुरक्षा बलों का निर्णायक हमला भी टलता जा रहा है. हालांकि यह भी संभव है कि निर्णायक हमला हो ही नहीं और जंग जीत ली जाए. वैसे राइटर्स बिल्डिंग के बाबुओं ने गूगल अर्थ से लालगढ़ व आसपास का नक़्शा डाउनलोड कर लिया है और रणनीतिक जगहों पर निशान लगाए हैं. अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि पूरे इलाक़े के भौगोलिक नक़्शे से उसका प्रशासन कितना अचीन्हा है. किसी भी जंग को जीतने के लिए ख़ुफ़िया सूचनाओं की अहमियत बताने की जरूरत नहीं है, पर उजाड़ लालगढ़ में सरकार का अपना इस तरह का तंत्र ही नहीं है. पुलिस अत्याचार के ख़िलाफ़ आदिवासियों का कमेटी बनने के बाद सरकारी सूचना तंत्र पूरी तरह ध्वस्त हो गया है. वैसे इस तंत्र को मज़बूत करने के लिए सरकार युवकों की बहाली भी कर रही है और इसमें मुख्यतः ग़ैर-आदिवासी उत्साह दिखा रहे हैं. कुछ सूचनाएं इसरो का रिसैट-2 उपग्रह की तस्वीरें दे रही हैं. रात की इन्हीं तस्वीरों से लालगढ़ के बाद रामगढ़ जीतने में सुरक्षा बलों को काफी मदद मिली.

अभी आधी जंग बाक़ी है. गांव के गांव सुनसान हैं. लोगों की नाराज़गी का आलम यह है कि दो जून की रोटी के लिए लोग तृणमूल के राहत शिविर में जा रहे हैं और सरकारी राहत का एक तरह से बॉयकाट किया हुआ है. सुरक्षा बलों को परेशानी माओवादियों की पहचान को लेकर है. स्वात घाटी में जैसे तालिबानी जनता से घुल-मिलकर कुछ समय के लिए सुस्त पड़ गए हैं, उसी तरह माओवादी भी सुरक्षा बलों का अभियान ख़त्म होने का इंतज़ार कर रहे हैं, ताकि कुछ समय बाद वे फिर सक्रिय हो सकें. गांवों में लोगों को आतंकित कर माओवादियों के बारे में सूचनाएं उगलवाने जैसे काम बंगाल पुलिस को मिला है. रामगढ़ के पास एक गांव की महिलाओं ने अपने कपड़े हटाकर मीडिया को वे घाव दिखाए जो उन्हें पुलिस ने दिए हैं. माओवादियों के नाम पर निर्दोष लोगों की गिरफ़्तारियों के भी आरोप लग रहे हैं. माओवादी आसपास के घने जंगलों में छिपे हैं और आदिवासी संघर्ष समिति उनके लिए भोजन-पानी व सुरक्षा बलों की हरक़तों की सूचनाएं पहुंचा रही है. छापामार लड़ाई में माहिर माओवादी सीधे-सीधे सुरक्षा बलों का सामना नहीं करना चाहते और वे उन्हें उन इलाक़ों की ओर खींच रहे हैं, जहां वे सुरक्षा बलों को पीछे हटने पर मजबूर कर सकें. पर 25 जून को सीआरपीएफ की 66 वीं बटालियन की छह कंपनियों की तैनाती से संयुक्त अभियान को और बल मिला है. सुरक्षा बल फ़िलहाल सड़क संपर्क टूटने से रोकने के उपायों और पुलों की सुरक्षा में लगे हैं. लालगढ़ से आगे कांटापहाड़ी, रामगढ़, कादाशोले और गोलतोड़े के इलाक़े माओवादियों के गढ़ माने जाते थे, पर वहां अब सुरक्षा बलों का क़ब्ज़ा हो गया है.

बहुत पहले से लाल है लालगढ़

बंगाल में क्रांतिकारियों की धरती की पहचान वाले पश्चिमी मेदिनीपुर जिले का छोटा-सा क़स्बा लालगढ़ बग़ावत का प्रतीक बन गया है. झाड़ग्राम अनुमंडल के बीनपुर प्रखंड का मुख्यालय लालगढ़ पहले से क्रांति के बीज सुलगाता रहा है. 2001 की जनगणना के मुताबिक जिले की क़रीब 16 लाख की आबादी में अनुसूचित जनजाति के लोगों की तादाद 432660 और आदिवासी की 242317 थी. अनुपात में कम होने के बावजूद यहां पूरी तरह आदिवासी संस्कृति ही हावी है. शक्ति की प्रतीक मां मेदिनी के नाम पर बने मेदिनीपुर जिले ने देश को आज़ादी की लड़ाई के कई सिपाही दिए. कभी खुदीराम बोस, सत्येंद्रनाथ बसु, मातंगिनी हाजरा व ईश्वरचंद विद्यासागर जैसे स्वतंत्रता सेनानियों व महापुरुषों की धरती रहे इस जिले में अब बारूद की गंध जैसे पूरी तरह रच-बस गई है. 16 वीं सदी में कलिंग-उत्कल साम्राज्य के अंतिम हिंदू राजा गजपति मुकुंद देव के पतन के बाद उड़ीसा पर पांच सरकारों का क़ब्ज़ा रहा. शाहजहां के शासन काल में मेदिनीपुर पर बहादुर ख़ान ने राज किया, जिसे बाद में शाहजहां के बेटे शाह सूजा ने पराजित कर दिया. उसके बाद इसके कुछ हिस्से पर मराठों का क़ब्ज़ा रहा. 1756 में मराठों के हमले में अलीवर्दी की मौत के बाद यहां सिराजुद्दौला का शासन बहाल हुआ. उसके बाद प्लासी के युद्ध में मीर जाफ़र की दग़ाबाज़ी के चलते 20 जून 1757 को मेदिनीपुर ईस्ट इंडिया कंपनी के क़ब्ज़े में आया. 1766 से 1767 के बीच के संथाल विद्रोह व 1799 के चारू विद्रोह का गवाह रहा, मेदिनीपुर का कॉलेजियट स्कूल क्रांतिकारियों का एक बड़ा केंद्र था. हेमचंद्र क़ानूनगो ने यहीं से छात्रों को आज़ादी की जंग का पाठ पढ़ाया. कई ब्रिटिश मजिस्ट्रेटों की हत्या के बाद अंग्रेजों को यहां एक बड़ी सेना भेजनी पड़ी और उसके बाद कोलकाता के बाद मेदिनीपुर क्रांतिकारियों का दूसरा बड़ा केंद्र बन गया.

बिमल राय
feedback.chauthiduniya@gmail.com

लालगढ़ के पास एक गांव में बुद्धिजीवियों के एक दल के साथ छत्रधर महतो

राजनीतिक जंग भी जारी है

बिमल राय

लालगढ़ के समानांतर दिल्ली और कोलकाता में एक अलग राजनीतिक जंग लड़ी जा रही है. ममता को वाया जन संघर्ष समिति माओवादियों का समर्थन मिल रहा है, इसका सबूत नंदीग्राम में मिला और लालगढ़ में भी मिल रहा है. लालगढ़ में ममता के नरम रुख़ ने एक बार फिर साबित किया है कि वह राष्ट्रीय सुरक्षा के इस अहम मसले को लेकर भी राजनीति करने से बाज नहीं आ रही हैं. 29 जून को कांटापहाड़ी पर सुरक्षा बलों का क़ब्ज़ा होने की ख़बर आने के तुरंत बाद उन्होंने बयान दिया कि लालगढ़ में तुरंत अभियान स्थगित किया जाए. हालांकि उन्होंने यह बात जोड़ दी है कि पूरे पश्चिमी मिदनापुर जिले में माकपा समर्थकों के घरों व ठिकानों में रखे गए अवैध हथियारों की बरामदगी का अभियान भी चलाया जाए. वित्त मंत्री और बंगाल कांग्रेस के मुखिया प्रणव मुखर्जी को पत्र लिखकर ममता ने पूरा विवरण दिया है कि लालगढ़ अभियान के बहाने माकपा ने किस तरह सरकारी आतंकवाद का नमूना पेश किया है. दरअसल मुख्यमंत्री बुद्धदेव भट्टाचार्य ने जब से तृणमूल पर माओवादियों से सांठगांठ का आरोप लगाया है, तभी से ममता का गुस्सा चढ़ा हुआ है. ममता पिछले एक सप्ताह से कह रही हैं कि सुरक्षा बल, ख़ासकर पुलिस गांववालों पर अत्याचार कर रही है. जंग शुरू होने के तुरंत बाद सुरक्षाबलों और माओवादियों के बीच क्रास फायरिंग में एक तृणमूल कर्मी की मौत के बाद जब कुछ तृणमूल नेताओं ने वहां का दौरा करना चाहा तो प्रशासन ने रोक दिया. ममता ने इसके विरोध में कोलकाता में एक रैली भी की. प्रभावित इलाक़ों में राहत शिविर खोलकर तृणमूल पुण्य कार्य करने के साथ-साथ जनाधार को भी जकड़े हुई है. माकपा भी पीछे नहीं है. सुरक्षा बल जिन इलाक़ों पर क़ब्ज़ा कर आगे बढ़ रहे है, उन इलाक़ों में कैडरों की मोटरसाइकिल मार्च निकल रही है. आइला प्रभावित इलाक़ों में पीएम-टू-डीएम के फ़ार्मूले को नकारने के बाद से खीझीं ममता को तक़लीफ़ इस बात को लेकर है कि पूरा आपरेशन शुरू करने से पहले प्रधानमंत्री या गृहमंत्री ने उनसे किसी तरह का विचार-विमर्श नहीं किया, जबकि केंद्र ने अपना रुख़ साफ रखा है. ममता ने राज्य के बुद्धिजीवियों के एक वर्ग का भी समर्थन हासिल किया है. नंदीग्राम कांड के समय से ही माकपा का विरोध करने वाले बुद्धिजीवी सक्रिय हैं. महाश्वेता देवी से लेकर राष्ट्रीय स्तर पर मेधा पाटकर तक ने उस समय मानवाधिकारों की रक्षा के बहाने तृणमूल की हौसला आफ़जाई की थी. रेलमंत्री की कुर्सी संभालने से पहले अग्निकन्या ने कोलकाता में बुद्धिजीवियों के साथ एक डिनर किया और इस तरह का सिलसिला नियमित रूप से चलाने का फ़ैसला किया. इन्हीं बुद्धिजीवियों का एक दल फिल्मकार अपर्णा सेन, सांवली मित्रा और कवि जय गोस्वामी की अगुआई में लालगढ़ गया और वहां पुलिस अत्याचार के ख़िलाफ़ बनी जन संघर्ष समिति के मुखिया छत्रधर महतो से मुलाक़ात की. देखा कि कहीं मानवाधिकार का उल्लंघन तो नहीं हो रहा है? खार खाई राज्य सरकार ने निषेधाज्ञा का उल्लंघन करने के लिए अपर्णा व दूसरों पर मुक़दमा दायर कर दिया. हालांकि इस बार बुद्धिजीवियों का दांव उल्टा पड़ा. माकपा समर्थक बचे-खुचे बुद्धिजीवियों ने व्यंग्य वाणों से उन पर निशाना साधा है. सवाल उठता है कि जिन इलाक़ों में बारूदी सुरंगों के डर से पुलिस फूंक-फूंक कर क़दम उठा रही है, उन इलाक़ों में इनके जाने का मकसद क्या था? एक सज्जन ने तो कह दिया कि क्या बारूदी सुरंगें बुद्धिजीवियों को सूंघ लेगी और फटने से इनकार कर देंगी? माना कि बुद्धिजीवी समाज की क्रूर हलचलों से निरपेक्ष नहीं रह सकते, पर उन्हें सीधे जंग-ए-मैदान के बीचोबीच जाने की क्या ज़रूरत थी? केंद्र सरकार की भी अपनी मजबूरियां हैं. उसके सामने कई राज्यों की नक्सली समस्या मुंह बाए खड़ी है और वह सबके लिए समान रणनीति अपनाना चाहती है. केंद्र एक कड़ा संदेश देना चाहता है. पश्चिम बंगाल के अलावा सात राज्यों- छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश,आंध्र पद्रेश, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश के 33 जिले नक्सल प्रभावित हैं. प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कुर्सी संभालते ही साफ कर दिया था कि वह ग़ैर-कांग्रेसी सरकारों से किसी तरह के भेदभाव की बू तक नहीं आने देंगे. इसे ऐसे समझा जाए कि वह किसी राज्य सरकार को केंद्र पर उपेक्षा का आरोप लगाने का मौका नहीं देना चाहते. देख ही रहे हैं कि आधे से ज़्यादा राज्यों में ग़ैर-कांग्रेसी सरकारें हैं. वहां वापसी की भी रणनीति है. लालगढ़ मामले में भी राज्य सरकार की सलाह पर ही केंद्र ने सीपीआई-माओवादी पर पाबंदी लगाई. बंगाल सरकार ने जितने सुरक्षा बलों की मांग की, केंद्र ने तुरंत मुहैया कराए. गृहमंत्री पी चिदंबरम ने तो साफ-साफ कहा कि सबसे ऊपर राष्ट्रीय हित है और सबको राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर दलीय राजनीति से ऊपर उठकर सोचना चाहिए. यह एक तरह से ममता के लिए संदेश था. पर 2011 के विधानसभा चुनावों की रणनीति रचने में मशगूल ममता को इस पर सोचने की फ़ुर्सत कहां है?

सभी फोटो- *देबज्योति चक्रवर्ती*

जब बाबा ही बदनाम हो तो धर्म को कौन बचाए

जापानी महिला आईकावा के साथ पायलट बाबा

उत्तराखंड आदिकाल से गंगा-जमुना और बदरी-केदारनाथ जी के पावन धामों के कारण देवभूमि के रूप में विख्यात रहा है. यहां भारत की सीमाओं का प्रधान प्रहरी नागराज हिमालय सदियों से भगवान शिव के निवास स्थान के रूप में श्रद्धालुओं द्वारा पूजित है. लेकिन इस पावन देवभूमि को इन दिनों कई आडंबरी और धोखेबाज बाबाओं ने शरणस्थली बना लिया है. दुर्भाग्य से ऐसे बाबाओं को राज्य सरकार के ज़िम्मेदार लोगों का सहयोग भी मिल रहा है. ऐसे ही एक बाबा हैं- पायलट बाबा. इन दिनों बदरीनाथ से लेकर उत्तरकाशी-गंगोत्री तक इनके बारे में कई तरह की चर्चाएं चल रही हैं. आरोप तो यहां तक लगाया जा रहा है कि वह चीन सरकार के प्रतिनिधि के रूप में सक्रिय हैं. उनके आसपास विदेशियों की जमघट देखकर उन्हें लोग विदेशी एजेंट भी प्रचारित करने लगे हैं. ऐसे में राज्य की भाजपा सरकार के ओहदाधारी सूरत सिंह नौटियाल से उनके गहरे रिश्तों ने पूरे इलाक़े में जितने मुंह उतनी बातों को जन्म दे दिया है. ग़ौरतलब है कि इस बदनाम छवि के भगवा वेषधारी संत के साथ गठजोड़ करने वाले नौटियाल चार धाम विकास परिषद के उपाध्यक्ष हैं और इस कारण उन्हें राज्य मंत्री का दर्जा हासिल है. पायलट बाबा के ख़िलाफ़ ज्योलीकोट थाने में करोड़ों की धोखाधड़ी का एक मामला दर्ज़ है. इतना ही नहीं, वह गंगोत्री मार्ग पर स्थित अपने एक धार्मिक आश्रम की आड़ में सरकार की 15 नाली ज़मीन पर क़ब्ज़ा करने के लिए भी दोषी हैं. इस मामले में उत्तरकाशी प्रशासन ने अवैध अतिक्रमण के आरोप में पीपी एक्ट के तहत चालान भी काटा है. दरअसल पायलट बाबा ने सनातन धर्म की दुकान की तरह एक ऐसा आश्रम निर्मित किया है, जिसके मुख्य द्वार पर ही अनेक देवी-देवताओं की बड़ी मूर्तियों को चौकीदार की तरह लगा रखा है. इन देव मूर्तियों की आड़ में क्या हो रहा है, यह शुरू से ही जनचर्चा का विषय बना हुआ है. दिखाने को तो इस आश्रम में योग और पूजा की बात की जाती है, पर इस आश्रम में आने वाले विदेशी नागरिकों की नियमों को ताक पर रख कर दी जाने वाली इंट्री ही अपने में पूरे प्रकरण को संदिग्ध बना देती है. भारत में विदेशी नागरिकों के मामले के जानकारों का मानना है कि मित्र या शत्रु राष्ट्र के किसी नागरिक को कहीं भी रात में रुकने से पूर्व इसकी सूचना इलाक़े के थाने को नियमत: दी जानी चाहिए. लेकिन राज्य में सत्तारूढ़ भाजपा के साथ बाबा के नज़दीकी संबंधों के कारण पुलिस या जिला प्रशासन उनकी ओर नज़र उठाने का साहस नहीं कर पाता . इस आश्रम में संदिग्ध चीनी महिलाएं और अनेक विदेशी नागरिक बाबा के अकथ कहानी की स्वयं पोल खोल रहे हैं.

पायलट बाबा के ख़िलाफ़ 42 करोड़ रुपये के आईकावा इंटरनेशनल पब्लिक स्कूल के नाम पर हज़ारों नागरिकों की थाली-लोटा बिकवा कर बर्बादी की कहानी रचने का मामला भी अदालत में विचाराधीन है. आरोप है कि बाबा ने जनता को एक रुपये में कंप्यूटर की शिक्षा देने का ढिंढोरा पीट कर उत्तराखंड समेत आठ राज्यों के हज़ारों नागरिकों को अपनी ठगी का शिकार बनाया. आरोपों के मुताबिक, जनता की गाढ़ी कमाई को हलाल करने के इस गोरखधंधे का तानाबाना भी इसी पायलट बाबा की देखरेख में रचा गया था. बाबा ने नैनीताल जनपद के हल्द्वानी से क़रीब 25 किलोमीटर दूर गेठीया में पहले से एक आश्रम बना रखा है. बाहर से सनातन धर्म की दुकान की तरह दिखने वाले इस आश्रम में ही जापानी महिला केईकों आईकावा ने पायलट बाबा से दीक्षा ग्रहण की. दीक्षा के बाद आईकावा बाबा की ख़ास शिष्या बन गई. बाबा की कृपा इस ग़ैर सनातनी महिला पर इतनी बरसी की बाबा एंड कंपनी ने उसे महामंडलेश्वर की महान उपाधि से अलंकृत कर दिया.

देवभूमि की भोली-भाली पहाड़ी जनता के साथ ठगी करने वाली आईकावा इंटरनेशनल दरअसल एक स्वयं सेवी संस्था (एनजीओ) है, जिसके रजिस्ट्रेशन से लेकर इसकी फ्रेंचाइजी का उद्घाटन करने तक के तमाम मामलों में बाबा द्वारा निभाई गई प्रमुख भूमिका ने कई शंकाओं को जन्म दिया है. कहते हैं कि इस एनजीओ ने जनता को आईटी प्रोग्राम, कंप्यूटर शिक्षा और छात्रवृत्ति, विद्यारत्न प्रोग्राम (ए टेंपल आफ लर्निंग), मुफ्त कंप्यूटर शिक्षा (एक रुपये प्रति माह और साल भर में प्रशिक्षण कार्यक्रम संपन्न) के नाम पर जमकर चूना लगाया है. आठ राज्यों की जनता से अपनी लगभग सात हज़ार शाखाओं के माध्यम से उसने लगभग 42 करोड़ रुपये वसूले. बाद में उन हज़ारों शाखाओं को चलाने के लिए बाबा की ओर से चेक के ज़रिए राशि भेजी गई. लेकिन वे सारे चेक जब बाउंस होने लगे, तब धोखाधड़ी का खुलासा हो गया. ठगे गए लोगों ने उनकी संस्था के कर्मचारियों को जगह-जगह घेरना शुरू कर दिया. जब हालात बेक़ाबू होने लगे तो 25 नवंबर 2008 को हल्द्वानी के बरेली रोड-गौजाजाली निवासी हरीश पाल की तहरीर पर ज्वोलीकोर्ट चौकी में आईकावा इंटरनेशनल के अध्यक्ष पायलट बाबा, जापानी महिला व संस्था की उपाध्यक्ष केईको आइकावा, चेयरमैन हिमांशु राय, प्रबंध निदेशक इशरत ख़ान, विजय यादव, पीसी भंडारी, इरफान ख़ान, मंगल गिरी सहित आठ लोगों के ख़िलाफ़ धोखाधड़ी का मुक़दमा दर्ज़ किया गया. कहते हैं कि बाबा और उनसे जुड़े एनजीओ के ख़िलाफ़ अन्य प्रदेशों में भी आपराधिक मुक़दमे दर्ज़ किए गए हैं. इस घटना के बाद से ही बाबा अपनी विदेशी चेली के साथ फरार हो गए. इस प्रकरण में शामिल बाबा के ख़िलाफ़ बढ़ रही जन शिकायतों को एक साथ देखने के लिए तल्लीताल पुलिस से पूरे प्रकरण को हल्द्वानी विवेचना सेल को अप्रैल 2009 सौंप दिया गया. लेकिन राज्य सरकार से बाबा की नज़दीकी देखते हुए पुलिस उन पर हाथ रखने का साहस ही नहीं जुटा पाई. बाद में जनता के साथ ठगी के आठों आरोपियों ने उत्तराखंड हाई कोर्ट से स्थगन आदेश हासिल कर लिया. राज्य सरकार से बाबा की नज़दीकी रिश्ते का खुलासा तब और हो गया, जब गंगोत्री के कपाट खुलने के अवसर पर वह अपनी विदेशी शिष्या के साथ सरकारी मेहमान की तरह मटकते दिखे. ठगे गए लोग बाबा को सरकारी मेहमान की तरह देख कर हैरत में पड़ गए. इससे आगे भी एक घटना यह घटी की राज्य मंत्री का ओहदाधारी और चार धाम यात्रा परिषद के उपाध्यक्ष सूरत सिंह नौटियाल ने पायलट बाबा के साथ एक सरकारी होर्डिंग में स्वागत की अपील लगवा कर अपनी अनुतंरगता का खुलासा कर दिया. इस बारे में पूछे जाने पर नौटियाल जी जो सफाई देते हैं, वह हास्यास्पद है. इनका कहना है कि मेरी यात्रा कार्यक्रम में जो भी सहयोग करेगा, इसके साथ हमें खड़ा होने में परहेज नहीं होगा. नौटियाल जी को सदैव यह याद रखना चाहिए कि जनता को लूट का शिकार बनाने वाले को मसीहा बनाने का प्रयास उचित नहीं है.

ग़ौरतलब है कि उत्तराखंड की सीमा चीन और नेपाल से सटी हुई है. इसलिए लोग शंकित हैं कि विदेशी ताक़तें देश में गड़बड़ी फैलाने के लिए इस पहाड़ी राज्य में घुसपैठ करने के मक़सद से इन भगवा वेषधारी तथा कथित बाबाओं को अपना हथियार तो नहीं बना रही है? केंद्र सरकार को इसकी गहन जांच अवश्य करानी चाहिए.

राजकुमार शर्मा

feedback.chauthiduniya@gmail.com

विशेष क़ानून : अगाथा ने भी मिलाया शर्मिला से सुर

एस. बिजेन सिंह

पूर्वोत्तर की दो शीर्ष महिलाएं आपस में मिलीं. दोनों ने एक-दूसरे के दुख-दर्द बांटे थे. कई दिनों से आर्म्ड फोर्स स्पेशल पावर एक्ट-1958 के चलते मणिपुर में व्याप्त अशांति का जायज़ा लेने केंद्र की सबसे युवा सांसद अगाथा संगमा पिछले दिनों तीन दिनों की यात्रा पर मणिपुर आई थी. जेएन अस्पताल के विशेष तौर पर सुरक्षित वार्ड में इस एक्ट के विरोध में ज़िंदगी और मौत से लड़ रही इरोम शर्मिला से मुलाकात की. इस मुलाक़ात में शर्मिला ने मणिपुर से यह क़ानून हटाने में अगाथा की मदद की आस लगाई.

आर्म्ड फोर्सेस स्पेशल पावर एक्ट को रद्द करवाने को लेकर पिछले आठ साल से अनशन पर बैठी इरोम शर्मिला से मुलाकात के बाद पत्रकारों को संबोधित करती हुई अगाथा ने कहा कि इस काले क़ानून को रद्द करने को केंद्र सरकार से वह मांग ज़रूर करेंगी. उन्होंने कहा कि वह जनता को आश्वासन देती हैं कि जितना हो सके, वह इस मुद्दे को प्राथमिकता देंगी. उसके कुछ ही समय बाद उन्होंने प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से इसी मसले पर मुलाक़ात कर अनशन पर बैठी शर्मिला को बचाने की अपील की. उनकी इस मुलाक़ात से प्रदेश की जनता को उम्मीद है कि पिछले कई सालों से प्रदेश में इस क़ानून के सहारे जो मनमानी की जा रही है, उसका अंत होगा. यूपीए सरकार की सबसे युवा मंत्री अगाथा संगमा ने लिखित ज्ञापन देकर शर्मिला की ज़िंदगी बचाने की मांग की. अगाथा की इस मुलाक़ात से प्रदेश में कई सालों से आस लगा रही जनता को उम्मीद की नई किरण दिखी हैं. इसकी वजह यह है कि कई सालों से शर्मिला के इस संघर्ष को किसी राजनेता या किसी अधिकारी ने न तो जानने की कोशिश की और न ही इस मामले का जायज़ा लिया. इस मसले पर केंद्र सरकार ने हर वक़्त कठोर क़दम उठाए हैं. केंद्र यह मानने को तैयार नहीं है कि पूर्वोत्तर राज्यों से विशेष सशस्त्र बल क़ानून हटाया जाए. इस मामले को लेकर राज्य सरकार का रुख़ भी वैसा ही है, जैसा केंद्र का है. राज्य सरकार कई मुद्दों पर मजबूर हो जाती है और केंद्र के इशारों का इंतज़ार करती रहती है.

मणिपुर की जनता तो इस क़ानून को जंगल का क़ानून मानती है, जिसके मुताबिक कभी भी किसी को मार गिराया जा सकता है. इस क़ानून को लोग बेहद ख़राब नज़र से देखते हैं. 2004 में कथित तौर पर असम रायफल्स के जवानों ने सामाजिक कार्यकर्ता मनोरमा देवी की हवालात में बलात्कार के बाद हत्या कर दी थी. उसके विरोध में समूचे प्रदेश में आग लग गई, जो अभी भी सुलग रही है.

इस क़ानून को लेकर शर्मिला का मानना है कि इस दुनिया में मनमानी से कोई किसी को मार नहीं सकता. यह सोचने-समझने वाले मनुष्य की दुनिया है, जानवरों की नहीं. शर्मिला देश के शासक वर्ग से यह सवाल पूछ रही हैं कि जंगलराज के भीतर कब तक आम आदमी बिना डर के जी सकता है? शर्मिला कहती हैं कि यह भूख-हड़ताल तभी ख़त्म होगी, जब सरकार बग़ैर किसी शर्त के आर्म्ड फोर्सेस स्पेशल पावर एक्ट को हटाएगी.

आतंकवादी समस्या पूर्वोत्तर राज्यों के लिए एक आंतरिक और स्थायी समस्या है. इसके अलावा सबसे बड़ी समस्या है विशेष सशस्त्र बल क़ानून-1958, जिसको हथियार बनाकर आतंकवाद को कुचलने के नाम पर निर्दोष लोगों पर जुल्म हो रहे हैं. इससे आमजन का अमन-चैन छिन रहा है. अगाथा की शर्मिला से मुलाक़ात को लोगों ने बहुत सराहा. मणिपुर की आम जनता ने इसके पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य न देखकर उनकी संजीदगी देखी. उनको ऐसा लगा कि परिवार की कोई बहन अपनी बड़ी बहन से मिल रही हो.

ग़ौरतलब है कि असम रायफल्स के जवानों ने 2000 में 10 निर्दोषों को मार दिया था. इसके विरोध में ही शर्मिला आमरण अनशन पर बैठ गई. उसी वक़्त राज्य सरकार ने इंफाल शहर के कई विधानसभा क्षेत्रों से यह क़ानून हटा दिया था. केंद्र के मना करने के बावजूद मणिपुर सरकार ने एक प्रयोग के तौर पर कुछ ख़ास इलाक़ों में इस एक्ट को रद्द करना शुरू किया था. क़ानून-व्यवस्था अगर दुरूस्त रही, तो इस एक्ट को अन्य जगहों से भी हटाने की घोषणा राज्य सरकार ने की. मगर शर्मिला ने इस एक्ट को राज्य से पूरी तरह से हटाने की मांग की. इस बात को लेकर वह अड़ी रहीं. उल्लेखनीय है कि इस एक्ट के विरोध में मणिपुर से लेकर उत्तर पूर्व के अन्य राज्यों और देश के कुछ हिस्सों में अप्रिय घटना घटने के बाद केंद्र सरकार ने जस्टिस जीवन रेड्डी के नेतृत्व में एक समिति बनाई. समिति ने भी इस एक्ट को आपत्तिजनक बताया था.

दूसरी तरफ़ शर्मिला को बचाने के लिए पिछले छह महीने से शर्मिला बचाव समिति पीडीए कांप्लेक्स, इंफाल में अनशन कर रही है. इस अभियान में सिने एक्टर्स गिल्ड मणिपुर के सदस्यों ने भी जून 28 से शिरकत करने का फ़ैसला किया. कुल मिला कर अगाथा संगमा की मणिपुर यात्रा और इस मुद्दे पर प्रधानमंत्री से उनकी मुलाक़ात से लगता है कि राज्य से इस काले क़ानून को हटा दिया जाएगा.

क्या है आर्म्ड फोर्स स्पेशल पावर एक्ट?

आर्म्ड फोर्स स्पेशल पावर एक्ट को 11 सितंबर 1958 को संसद में पारित किया गया था. यह पूर्वोत्तर के राज्यों-अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड और त्रिपुरा जैसे अशांत क्षेत्रों में- सेना को विशेष ताक़त देने के लिए पारित किया गया था.

यह क़ानून लागू होने वाले इलाक़े में सेना क्या-क्या कर सकती है

1. भले ही मौत का कारण बने, फिर भी इसके तहत किसी पर देखते ही गोली चलाई जा सकती है.
2. इस एक्ट के अनुसार किसी को भी शक़ के आधार पर ही वारंट के बिना भी ज़बरदस्ती गिरफ़्तार किया जा सकता है.
3. किसी को गिरफ़्तार करने के लिए सेना किसी भी इलाक़े की तलाशी ले सकती है.

इस एक्ट के विरोध में कौन-कौन

पूरे देश के सौ से भी अधिक मानवाधिकार कार्यकर्ताओं और एशिया से भी आए मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने इंफाल में विरोध प्रदर्शन कर इस एक्ट को हटाने के लिए संघर्ष कर रही शर्मिला का समर्थन किया. भारत की कई महत्वपूर्ण संस्थाएं इस एक्ट का समर्थन करती हैं. वे हैं- आशा परिवार, नेशनल कैंपेन फॉर पीपल्स राइट टू इंफोर्मेशन, राइट टू फूड कैंपेन, एसोसिएशन ऑफ पैरेंट्स ऑफ डिसअपियर परशंस, नेशनल कैंपेन फॉर दलित ह्यूमन राइट्स, एकता पीपल्स यूनियन ऑफ ह्यूमन राइट्स, इंसाफ, लोकराज संगठन, हिंद नव जवान एकता सभा, ऑल इंडिया कैथोलिक यूनियन, ऑल इंडिया प्रोग्रेसिव वूमन असोसिएशन, ऑल इंडिया स्टूडेंट्स एसोसिएशन, फोरम फॉर डेमोक्रेटिक इनिसिएटिव्स और भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) आदि.

विदेशों से भी समर्थन

केवल भारत ही नहीं, पूरी दुनिया के मानवाधिकार संगठनों और एनआरआई ने भी इस एक्ट का विरोध किया है. द पीस कॉलिशन ऑफ पीपल ऑफ साउथ एशिया, फ्रेंड्स ऑफ साउथ एशिया, एनआरआई फॉर ए सेकुलर एंड हारमोनिअस इंडिया, पाकिस्तान ऑर्गेनाइजेशंस, पीपल्स डेवलपमेंट फाउंडेशन, इंडस वैली थिएटर ग्रुप और इंस्टीट्यूट फॉर पीस एंड सेकुलर स्टडीज.

bijen.chauthiduniya@gmail.com

पंजाब में पड़ा मज़दूरों का अकाल

संजीव पांडेय

पंजाब की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था पर मज़दूरों का संकट हावी हो गया है. बिहार में नीतीश कुमार के विकास कार्य ने इस बार पंजाब में मज़दूरों की कमी संबंधी संकट को और गहरा दिया है. मज़दूरों की कमी ने राज्य में हत्या तक की स्थिति ला दी है. इसकी ज़िम्मेवारी बिहार और उत्तर प्रदेश पर आई है. वहां से आने वाले मज़दूरों की, ख़ासकर बिहार से आने वाले मज़दूरों, की संख्या में इस बार भारी कमी राज्य में हुई है. हालांकि मज़दूरों की कमी का संकट पिछले तीन सालों से चल रहा था, लेकिन इस बार संकट और बढ़ गया है. इसका सीधा प्रभाव राज्य में धान की बुआई पर पड़ा है. आरामपसंद हो चुके पंजाबी किसानों के लिए यह संकट भारी पड़ रहा है. धान की बुआई के समय में प्रवासी मज़दूरों से भरे पड़े रेलवे स्टेशन इस बार ख़ाली हैं. उधर मज़दूरों की कमी के कारण बुआई का ख़र्च काफी बढ़ गया है. यह पिछले दो सालों के मुक़ाबले दो-तीन गुना हो चुका है. पहली बार राज्य में बुआई प्रति एकड़ तीन हज़ार रुपये तक पहुंच गई है. राज्य में मज़दूर संकट की गंभीरता तब नज़र आई, जब 13 जून को मुक्तसर के वाटू गांव में मज़दूरों की शेयरिंग को लेकर हुए विवाद में हत्या की घटना हो गई. एक भाई ने अपने रिश्ते में लगने वाले भाई की हत्या कर दी. हत्या का कारण शेयरिंग के आधार पर बुआई के लिए लाए गए प्रवासी मज़दूरों को समय पर नहीं भेजना था. पुलिस के अनुसार वाटू में गुरमीत सिंह ने अपने रिश्ते में लगने वाले भाई हरदीप सिंह की हत्या कर दी, हत्या तब हुई जब गुरमीत सिंह ने प्रवासी मज़दूरों को हरदीप सिंह के खेत में बुआई से भेजने से इंकार कर दिया. पुलिस के अनुसार मज़दूरों को खेत मे भेजने को लेकर दोनों भाइयों में जोरदार बहस हुई और गुरमीत सिह ने हरदीप सिंह की हत्या अपने पिता के 12 बोर के गन से कर दी.

राज्य में प्रवासी मज़दूरों को लेकर हत्या का यह पहला मामला सामने आया है, ज़ाहिर है राज्य में मज़दूरों का संकट काफी बढ़ गया है और बुआई प्रभावित हो गई है. बुआई प्रभावित होने का सबसे बड़ा कारण बिहार और यूपी के मज़दूरों का ही बुआई के काम में विशेषज्ञ होना है.

सामान्य रूप से पंजाब देश का सबसे बड़ा धान उत्पादक राज्य है, लेकिन इसकी बुआई के लिए स्थानीय मज़दूर प्रशिक्षित नहीं हैं. फिर जो स्थानीय मज़दूर इस काम में कुशल हैं वे ज़रूरत से ज़्यादा मज़दूरी मांग रहे हैं. राज्य में इस बार 27.5 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर धान की बुआई होनी है. बुआई की शुरुआत दस जून से हो चुकी है, पर बिहार और यूपी से आने वाली ट्रेनों में मज़दूरों की भीड़ नहीं है.

एक अनुमान के अनुसार राज्य को इस समय धान की खेती के लिए ही 7.5 लाख मज़दूर चाहिए जो सिर्फ़ धान की बुआई कर सकें. इनमें से 90 फीसदी बुआई के मज़दूर बिहार और यूपी से आते हैं. इनमें भी सबसे ज़्यादा संख्या उत्तरी बिहार के सुपौल, मधेपुरा, सीतामढ़ी, मुजफ़्फ़रपुर, दरभंगा, सहरसा आदि जिलों के मज़दूरों की होती है. सामान्य रूप से मज़दूरों का संकट पिछले तीन सालों से आया है, पर इस बार यह संकट ज़्यादा गहरा गया है. पहले अमृतसर से उत्तरी बिहार के विभिन्न जिलों के लिए चलने वाली ट्रेनों में इतनी भीड़ होती थी कि पैर रखने की जगह नहीं होती थी, लेकिन इस बार ऐसी स्थिति नहीं है. अमृतसर से अंबाला के बीच पड़ने वाले रेलवे स्टेशन राजपुरा, लुधियाना, जालंधर समेत अन्य स्टेशनों पर किसान मज़दूरों की प्रतीक्षा कर रहे हैं पर मज़दूरों की कम संख्या इन्हें निराश कर रही है. पिछले साल मई और जून में ठीक इसी तरह की समस्या का सामना पंजाब के किसानों को करना पड़ा था. ऐसे में स्थानीय मज़दूरों की मांग बढ़ गई थी. हालांकि वे प्रवासी मज़दूरों से दोगुने पैसे मांग रहे थे और धान की रोपाई में कुशल भी नहीं थे.

सामाजिक कार्यकर्ता और कृषि विशेषज्ञ हमीर सिंह के अनुसार इस समय राज्य का पूरा धान की उपज वाला क्षेत्र मज़दूरों की कमी झेल रहा है.

राज्य में कपास क्षेत्र और कंडी बेल्ट जिसमें मानसा, भटिंडा और फिरोज़पुर, रोपड़ और होशियारपुर के कुछ क्षेत्रों को छोड़ दें, तो धान की खेती हर जगह होती है. इस बार धान के क्षेत्र में बुआई की दर 1500 रुपये से 2000 रुपये प्रति एकड़ पहुंच गई है, जो पहले ज़्यादा से ज़्यादा 600 से 800 रुपये प्रति एकड़ होती थी. गुरदासपुर के भट्टीवाल के मेजर सिंह के अनुसार उनके गांव में इस बार लगभग 100 प्रवासी मज़दूर आए हैं, पर इनकी मज़दूरी काफी ज़्यादा है. अब ये प्रति एकड़ 1500 रुपये की मांग कर रहे हैं, जबकि पिछले साल यही मज़दूर 1000 रुपये प्रति एकड़ बुआई कर गए थे. इसी तरह तीन साल पहले 500 रुपये प्रति एकड़ की बुआई मज़दूरों ने की थी.

संगरूर जिले के घघड़पुर गांव के निवासी हरदीप सिंह के अनुसार पिछले साल की तरह इस बार भी धान बुआई के लिए मज़दूरों का संकट है. बिहार से आने वाले मज़दूरों की कमी हुई है. इससे राज्य में बुआई के रेट बढ़ गए हैं और प्रति एकड़ 2000 रुपये तक पहुंच गया है. राज्य के कृषि विभाग के आंकड़ों के अनुसार इस बार 27.5 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर धान की बुआई होनी है और इसके लिए सात लाख धान बुआई मज़दूरों की ज़रूरत है, लेकिन फ़िलहाल राज्य में दो से ढाई लाख मज़दूर ही उपलबध हैं, जो पहले से काफी कम हैं. राज्य के श्रम मंत्री तीक्ष्ण सूद के अनुसार मज़दूरों का संकट बढ़ चुका है. उसका कारण कई राज्यों मे राष्ट्रीय रोज़गार गारंटी अधिनियम (नरेगा) शुरू होना है. इसका असर कितना होगा यह कुछ समय बाद पता चलेगा, पर राज्य के उद्योग और कृषि दोनों क्षेत्र मज़दूरों की कमी से प्रभावित हो रहे हैं. तीक्ष्ण सूद के अनुसार राज्य में अभी तक ज़्यादातर मज़दूर बिहार, झारखंड आदि से आते रहे हैं. बिहार में विकास कार्य में तेज़ी के कारण लोगों को वहीं कामकाज और रोज़गार मिलना शुरू हो गया है. इस बार गेहूं की कटाई के वक्त भी मज़दूरों का संकट नज़र आया. जो लोग कंबाइन से गेहूं नहीं कटवाते थे वे भी इस बार कंबाइन से गेहूं कटवाने को मजबूर हुए. अब यही संकट धान की बुआई के समय में है. सूद के अनुसार मज़दूरों की कमी असल में कितनी है, इसका आंकड़ा श्रम विभाग जुटा रहा है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

मानसून ने दिया धोखा, भाखड़ा से पानी आपूर्ति में कटौती

मानसून ने इस बार ख़ासा धोखा दिया है. पंजाब में बारिश अभी तक न के बराबर हुई है. धान की सारी रोपाई नहर के पानी और ट्यूबवेल पर निर्भर हो गई है, जबकि राज्य में प्रतिदिन दस घंटे की बिजली कटौती ने ट्यूबवेल से सिंचाई की व्यवस्था भी छीन ली है. राज्य में अभी सामान्य से 56 प्रतिशत कम बारिश हुई है. उधर, कम बारिश के कारण भाखड़ा बांध में पानी का स्तर भी नीचे जा रहा है. फ़िलहाल भाखड़ा का जलस्तर 459 मीटर तक पहुंच चुका है. अगर अगले कुछ दिनों में हिमाचल प्रदेश और पंजाब में बारिश नहीं हुई तो जलस्तर और नीचे जा सकता है. मानसून की बेरूखी से परेशान भाखड़ा-व्यास प्रबंधन बोर्ड ने 10 जुलाई तक 600 क्यूसेक पानी की कटौती का फ़ैसला किया है. 25 जून को चंडीगढ़ में हुई बैठक में फ़ैसला लिया गया कि रोज़ाना भाखड़ा से 28 हज़ार क्यूसेक पानी छोड़ा

जाता है, उसे घटाकर 10 जुलाई तक 22 हज़ार क्यूसेक कर दिया जाए. बांध में अभी तक प्रतिदिन सतलज नदी से 30 हज़ार क्यूसेक और व्यास से 8400 क्यूसेक पानी आता रहा है. इनमें से 28 हज़ार क्यूसेक विभिन्न राज्यों में सिंचाई के लिए छोड़ा जाता रहा है. राजस्थान को 5600 क्यूसेक और हरियाणा को 9200 क्यूसेक पानी मिलता रहा है, पर सतलज और व्यास से कम पानी आने के कारण छह हज़ार क्यूसेक पानी की कटौती का फ़ैसला लिया गया है.

बढ़ रहा धान की खेती का रकबा

मज़दूरों के संकट के साथ जल संकट भी है. इन दोनों समस्याओं से जूझने के बावजूद राज्य में धान की खेती का रकबा बढ़ता जा रहा है. इस बार राज्य में 27.5 लाख हेक्टेयर भूमि में धान की बुआई होने की उम्मीद है. 2008 के आंकड़े से पचास हज़ार हेक्टेयर की बढ़ोतरी हुई है, जबकि 2007 में राज्य में 26 लाख हेक्टेयर में धान की बुआई हुई थी. धान की खेती की तरफ़ बढ़ते झुकाव से राज्य में जल संकट भी गहराया है. कई जिलों में जलस्तर काफी नीचे चला गया है, पर धान के न्यूनतम समर्थन मूल्य में बढ़ोतरी के कारण राज्य के किसानों का लाभ बढ़ा है. राज्य के कृषि विभाग के निदेशक बीएस सिद्धू के अनुसार पिछले साल राज्य में कुल 162 लाख मीट्रिक टन धान का उत्पादन हुआ था, जबकि 2007 में राज्य में 147 लाख मीट्रिक टन धान उपजा था. उधर, ख़राब मानसून और भूजल के गिरते स्तर ने राज्य में सिंचाई व्यवस्था को भारी परेशानी में डाल दिया है. राज्य के अधिकतर जिलों में भूजल ख़तरनाक स्तर पर पहुंच गया है. पांच ब्लॉक भूजल स्तर के हिसाब से क्रिटिकल जोन में घोषित किए गए हैं, जबकि राज्य के 114 ब्लॉक डार्क जोन में आ गए है. राज्य के सबसे बड़ा धान उत्पादक जिला संगरूर में भूजल ख़तरनाक स्तर पर पहुंच गया है. जबकि पटियाला, लुधियाना, जालंधर, अमृतसर, तरनतारन, गुरदासपुर के इलाक़ों में भी धान की खेती ख़ूब हो रही है. उल्लेखनीय है कि राज्य में धान का उत्पादन किसान अपने खाने के लिए नहीं करते, बल्कि सरकारी एजेंसियों को बेचने के लिए करते हैं. सामान्य रूप से धान के न्यूनतम समर्थन मूल्य में बढ़ोतरी के कारण धान की खेती के रकबे में बढ़ोतरी हुई है.

धान रोपाई के लिए पैडी ट्रांसप्लांटेशन मशीन

कृषि विभाग ने धान की बुआई के समय मज़दूरों के आए संकट से निपटने के लिए पैडी ट्रांसप्लांटेशन मशीन का उपयोग राज्य में बढ़ाने का फ़ैसला लिया है. कृषि विभाग ने पैडी ट्रांसप्लांटेशन मशीन आयात करने शुरू भी कर दिए हैं. ये मशीनें कोरिया, चीन और जापान से आयात की जा रही है. 300 से ऊपर मशीनों को राज्य के किसानों ने ख़रीदा भी है. फ़िलहाल मशीन का महंगा होना किसानों के लिए भारी समस्या है. मशीन की क़ीमत 1.75 लाख से लेकर 16 लाख रुपये तक है. हालांकि कृषि विभाग ने इस पर सब्सिडी देने की घोषणा की है. कृषि विभाग ने मशीन की क़ीमत का पचास प्रतिशत या अधिकतम 1.5 लाख रुपये तक की सब्सिडी की घोषणा की है. कृषि विभाग के निदेशक बीएस सिद्धू के अनुसार धान बुआई करने वाली मशीन के लिए किसानों से आवेदन मंगवाए हैं और 662 आवेदन कृषि विभाग के पास आ चुके हैं. 260 मशीन किसानों के पास जा भी चुकी हैं. बाक़ी मशीन जल्द ही किसानों के पास पहुंच जाएगी. जापान की बनी हुई इन मशीनों को फ़िलहाल पंजाब के किसानों में लोकप्रिय होने में समय लगेगा. हालांकि पिछले साल ही राज्य में आए मज़दूर संकट से कृषि विभाग सचेत हो गया था और मशीनों को मज़दूरों के विकल्प के तौर पर उपयोग में लाने की योजना बना ली गई थी.

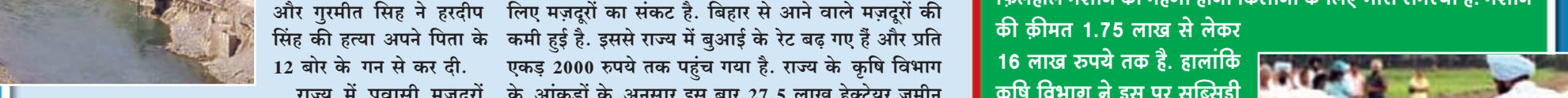

पानी चाहिए तो जल संरक्षण सीखिए

बिमलेश झा

आज भारत ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में गिरता भू-जलस्तर एक बहुत बड़ी समस्या है. पानी की समस्या को लेकर हर कोई चिंतित तो है, लेकिन सिर्फ़ इससे कुछ होने वाला नहीं है. इस मसले पर गहन चिंतन की ज़रूरत है. पानी की जो समस्या हम देख रहे हैं, वह भविष्य में और गंभीर होने वाली है. इसका परिणाम हमारी आने वाली पीढ़ी को भुगतना पड़ेगा. आज गांव से लेकर शहर तक, हर जगह पानी का स्तर नीचे गिर रहा है. पानी की समस्या भारत के कई हिस्सों में विकराल रूप धारण कर चुकी है. हालांकि इससे बचने के कई प्रस्ताव भी आ चुके हैं. नदियों को जोड़ने जैसी योजनाएं सुझाई जा चुकी हैं, लेकिन ये परियोजनाएं बहुत महंगी और बड़े स्तर की हैं. साथ ही पर्यावरण की दृष्टि से भी ख़तरनाक साबित हो सकती हैं. हालांकि, कुछ उपाय ऐसे भी हैं, जिनके लिए न तो इतना पैसा ख़र्च करने की ज़रूरत है, न ही पर्यावरण को ख़तरे में डालने की. कहते हैं कि बूंद- बूंद से सागर भरता है. अगर इस कहावत को सही मानकर कुछ प्रयास किए जाएं, तो निश्चित रूप से यह एक दिन बड़े समाधान में बदल सकता है. इस तरह से पानी को बचाने का सबसे नायाब तरीक़ा है-बारिश के पानी का संरक्षण करना, यानी वर्षा-जल संरक्षण (रेन वाटर हार्वेस्टिंग). शायद नदियों को जोड़ने की अपेक्षा आकाश से बह रही गंगा का संचय करना आसान है. रेन-वाटर हार्वेस्टिंग सिस्टम से भविष्य में पानी की समस्या तो दूर होगी ही, साथ ही आपके घर के आसपास का भू-जलस्तर भी बढ़ जाएगा. महज़ एक घंटे की बारिश आपको एक साल तक का पानी उपलब्ध करा सकती है. इसे ऐसे समझा जा सकता है यदि 1000 फीट की छत है और एक सेंटीमीटर बारिश हुई है तो लगभग 1000 लीटर पानी जमा हो जाएगा. अगर साल में 40 इंच बारिश होती है तो एक लाख लीटर पानी भू-जल में जाएगा. इससे भू-जल की गुणवत्ता भी बढ़ेगी. यह मिनरल वाटर से भी ज़्यादा शुद्ध होता है.

क्या है वर्षा-जल संरक्षण (रेन-वाटर हार्वेस्टिंग)

वर्षा जल को जमा या एकत्रित करना ही वर्षा-जल संरक्षण है. जब बारिश हो रही हो तो उस पानी को हम लोग अपने गांव, घर और शहर में किसी निश्चित स्थान पर जमा कर लेते हैं. जिससे भू-जलस्तर में वृद्धि होती है. इसके साथ ही पीने के लिए साफ पानी भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहता है, लेकिन पानी एकत्रित करते समय इस बात का भी ख़याल रहे कि वह प्रदूषित पानी न हो. यानी उस पानी में गंदगी न हो.

आप इन तरीक़ों से कर सकते हैं जल संरक्षण-

1. घर की छत पर जमा बारिश के पानी को नीचे बहाकर किसी स्थान पर एकत्रित कर लें.
2. स्थानीय जलग्रहण क्षेत्र से पानी को बहाकर एक जगह इकठ्ठा कर लें.
3. बाढ़ के पानी को स्थानीय नहर के ज़रिए एकत्रित करें.
4. वाटरशेड प्रबंधन द्वारा जल का संरक्षण करें.

इन तरीक़ों को अपनाने के हैं बहुत से फ़ायदे-

1. पीने योग्य पानी की उपलब्धता
2. सिंचाई के लिए पानी की समुचित व्यवस्था
3. भू-जलस्तर रिचार्ज में वृद्धि
4. रेतीले पानी, बाढ़ और संयंत्र पर भार में कमी
5. समुद्री पानी को तटीय क्षेत्र में प्रवेश करने से रोकना

भू-जल संरक्षण (वाटर हार्वेस्टिंग) द्वारा जमा किए गए बारिश के पानी का उपयोग हम प्रत्यक्ष रूप से कर सकते हैं. इसके साथ ही ग्राउंड वाटर को भी रिचार्ज कर सकते हैं. बारिश का पानी, पानी का पहला रूप है. इसी के द्वारा हम विभिन्न स्रोतों से पीने योग्य पानी प्राप्त करते हैं. इसे हम लोग हाइड्रोलॉजिकल साइकिल के

रेन-वाटर हार्वेस्टिंग सिस्टम से हम अपने घर की छत पर वर्षा के पानी को जमा कर बोरवेल रिचार्ज कर सकते हैं, जिससे भविष्य में पानी की समस्या तो दूर होगी ही, साथ ही आपके घर के आसपास का भू-जल स्तर भी बढ़ जाएगा. महज़ एक घंटे की बारिश आपको एक साल तक का पानी उपलब्ध करा सकती है. इसे ऐसे समझा जा सकता है यदि 1000 स्क्वायर फीट की छत है और एक सेंटीमीटर बारिश हुई है तो लगभग 1000 लीटर पानी जमा हो जाएगा.

रूप में जानते हैं. अत: हमलोगों के लिए यह पानी का प्राथमिक स्रोत है. नदियां, झीलें और भू-जल (ग्राउंड वाटर) सभी पानी के द्वितीय स्रोत हैं, लेकिन हाल के वर्षों में हम लोग मुख्य रूप से पानी के द्वितीय स्रोतों पर निर्भर हो गए हैं. जिसके चलते भू-जलस्तर दिनोंदिन नीचे गिरता जा रहा है. इस प्रक्रिया में हम यह भी भूल जाते हैं कि बारिश का पानी ही पानी के सभी स्रोतों का मुख्य स्रोत है. हम उसके बारिश के पानी के महत्व को भूल रहे हैं. जल संरक्षण का मतलब उसके महत्व को समझना और बारिश के पानी का अधिक से अधिक उपयोग करना है.

जल संरक्षण के तहत कितना पानी एकत्रित किया जा सकता है?

शहरी परिदृश्य : एक इलाक़े में पानी की कुल मात्रा, जो बारिश के पानी के रूप में प्राप्त की जाती है. उसे हम उस क्षेत्र का रेनवाटर इंडॉवमेंट कहते हैं. इस पानी को प्रभावी तरीके से एकत्रित करना ही वाटर हार्वेस्टिंग पोटेंशियल है.

वाटर हार्वेस्टिंग पोटेंशियल : बारिश (एमएम)Xपानी एकत्रित करने की क्षमता.

जितनी बारिश एक इलाक़े में हुई है, उसे पूरी तरह से एकत्रित नहीं किया जा सकता है. इसका कारण वाष्पीकरण आदि प्राकृतिक प्रक्रियाएं हैं. मान लीजिए की आपके घर की छत का क्षेत्रफल 100 स्क्वायर मीटर है. आप के क्षेत्र में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 600 एमएम (24 इंच) हो. अगर छत को अभेद्य माना जाए और इस पर जितनी बारिश हुई है, वह वाष्पीकरण के बावजूद बची हुई हो, तब एक साल में छत पर जमा बारिश के पानी की ऊंचाई 600 एमएम होगी.

ग्रामीण परिदृश्य : भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में समुदाय आधारित वर्षा जल का संचय अतीत की मिसाल है और आज भी इसमें बहुत अधिक संभावना है. इससे हम पानी की समस्या को दूर कर सकते हैं. वास्तव में जहां पानी की कमी है, वहां इस प्रारंभिक तकनीक से ही लोग जीवित हैं. शायद इन्हीं तथ्यों को जानते हुए हमारे पूर्वजों ने जल संचय के बहुत से तरीक़े अपनाए.

- वे सीधे तौर पर बारिश के पानी को एकत्रित करते थे. जैसे घर की छत पर वे जल जमा करते थे और उसका संचय आंगन में बने तालाब में करते थे.
- वे सामुदायिक जमीन पर मानव निर्मित कुएं में भी इस जल को जमा करके रखते थे.
- वे मानसून के दौरान बहकर जाने वाले पानी की धारा को रोककर जल संचय के विभिन्न स्रोतों का उपयोग कर उसे एकत्रित करते थे.
- वे बाढ़ के पानी का उपयोग जल संचय के रूप में किया करते थे.

हमारा देश कृषि प्रधान देश है जहां 70 प्रतिशत लोग कृषि से जुड़े हैं. इनमें अब भी 60 फीसदी किसान मानसून पर निर्भर हैं. अगर मानसून आने में देर हो जाए तो हायतौबा मच जाती है. हो भी क्यों न, आख़िर देश की अर्थव्यवस्था का जो सवाल है. अगर बारिश नहीं हुई तो किसानों के सामने फ़सलों की सिंचाई के लिए समस्या उत्पन्न हो जाती है, जबकि फ़सलों की सिंचाई के लिए भी वे मुख्य रूप वर्षा जल पर ही निर्भर रहते हैं. ऐसे में अगर पानी का संचय नहीं किया गया दो तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ेगा. एक तो वर्तमान जल संकट है ही, दूसरा भू-जल का स्तर तेजी से नीचे जा रहा है. नहरें सूखी पड़ी हैं. ऐसे में फ़सलों की सिंचाई कैसे हो पाएगी, यह एक ज्वलंत प्रश्न है. इस प्रश्न का उत्तर ऐसे प्रसासों में ही छिपा है. यह प्रयास सिर्फ़ सरकार की ज़िम्मेदारी नहीं है. इसके लिए हमें भी मिलजुल कर आगे आना होगा. बूंद-बूंद को इकट्ठा करने की ज़िम्मेदारी उठानी होगी, तभी आने वाली पीढ़ी के लिए हम सागर छोड़ जाएंगे.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

उच्च न्यायालय ने आदिवासी गिरिवासी की याचिका को यह कहते हुए ख़ारिज़ कर दिया कि किसी एक जाति समुदाय को दो वर्गों का लाभ नहीं दिया जा सकता है. इसके बाद विजय सिंह गोंड़ ने सुप्रीम कोर्ट में इस मामले को लेकर एसएलपी दाख़िल की है जो अभी भी विचाराधीन है.

आरक्षण ने बिगाड़ा खेल चुनाव लड़ने में हुए फेल

उत्तर प्रदेश के अति नक्सल प्रभावित जनपद सोनभद्र के क़रीब दर्जन भर गांवों में अनुसूचित जनजातियों की संख्या आधे से अधिक है. लेकिन ये जातियां ग्राम पंचायत से लेकर लोकसभा तक का चुनाव नहीं लड़ सकतीं. इस वजह से सोनभद्र के क़रीब आधा दर्जन ग्राम पंचायतों में बीते चार सालों से ग्राम-सभा का गठन नहीं हो पाया है. और, न ही 22 जून को हुए ग्राम पंचायत के उप चुनाव में हो पाएगा. ऐसा मुलायम सिंह सरकार में लागू हुए अनुसूचित जनजाति प्रावधानों के कारण हुआ है. मुलायम सिंह सरकार ने अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति वर्ग के प्रावधानों में संशोधन करते हुए 30 सितंबर 2003 को शासनादेश संख्या-3483/26-3-2003 -0(7)/2003 जारी किया था. इसके तहत अनुसूचित जाति वर्ग में शामिल गोंड़, धूरिया, नायक, ओझा, पठारी तथा राजगोंड़ जाति को महाराजगंज, सिद्धार्थनगर , बस्ती, गोरखपुर, देवरिया, मऊ, आजमगढ़, जौनपुर, बलिया, गाजीपुर, वाराणसी, मिर्जापुर और सोनभद्र में अनुसूचित जनजाति में शामिल कर दिया गया. इस वजह से सोनभद्र में निवास करने वाली गोंड़ और राजगोंड़ जाति अनुसूचित जनजाति वर्ग में शामिल हो गईं. दुद्धी विकास खंड का जाबर गांव इसका उदाहरण है. यहां एक भी परिवार अथवा व्यक्ति अनुसूचित जाति का नहीं है. अगर कुछ गांवों में अनुसूचित जाति वर्ग के व्यक्ति हैं भी तो वर्ष 2001 की जनगणना के आधार पर ग्राम पंचायतों में आरक्षित हुई अनुसूचित जाति की सीटों के लिए पर्याप्त नहीं हैं. दुद्धी विकास खंड का करहिया ग्राम पंचायत इसका उदाहरण है. अनुसूचित जाति की संख्या के अभाव में अभी भी ग्राम पंचायत सदस्यों के पांच पद रिक्त हैं.

ये सभी रिक्तियां मुलायम सिंह सरकार में लागू अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति वर्ग के प्रावधानों की वजह से हैं. मुलायम सिंह सरकार ने गोंड़, धुरिया, नायक, ओझा पठारी और राजगोंड़ जाति को अनुसूचित जाति वर्ग से अनुसूचित जनजाति वर्ग में शामिल तो कर दिया लेकिन ग्राम पंचायतों समेत विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों की संख्या के आधार पर सीटों के आरक्षण की व्यवस्था (निर्धारण) नहीं की. इस वजह से सोनभद्र के विधानसभा क्षेत्र (दुद्धी) और ग्राम पंचायतों में अनुसूचित जनजातियों की संख्या अधिक होने के बाद भी इस वर्ग के लोग चुनाव नहीं लड़ सकते. दुद्धी विधानसभा सीट से क़रीब 27 साल तक विधायक रहे पूर्व मंत्री विजय सिंह गोंड़ मुलायम सिंह सरकार में लागू अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का शिकार हो गए. वह पिछली विधानसभा का चुनाव नहीं लड़ सके. ग़ैर-सरकारी संगठन-आदिवासी गिरिवासी-ने शासन के फ़ैसले को चुनौती देते हुए इलाहाबाद उच्च न्यायालय में जनहित याचिका दाख़िल की. उच्च न्यायालय ने आदिवासी गिरिवासी की याचिका को यह कहते हुए ख़ारिज़ कर दिया कि किसी एक जाति समुदाय को दो वर्गों का लाभ नहीं दिया जा सकता है. इसके बाद विजय सिंह गोंड़ ने सुप्रीम कोर्ट में इस मामले को लेकर एसएलपी दाख़िल किया है जो अभी भी विचाराधीन है. उधर, अनुसूचित जाति वर्ग से अनुसूचित जनजाति वर्ग में शामिल हुई जातियों के कुछ लोगों ने वर्ष 2005 के पंचायत चुनाव में लड़ने के लिए चुनाव आयोग से गुहार लगाई. चुनाव आयोग ने जिला प्रशासन को पत्र लिखकर अनुसूचित जाति से अनुसूचित जनजाति वर्ग में शामिल जातियों को चुनाव लड़ने देने का निर्देश दिया. लेकिन जिला प्रशासन ने हाईकोर्ट के फ़ैसले को तरजीह देते हुए अनुसूचित जाति के लोगों को ही आरक्षित सीटों पर चुनाव लड़ने दिया और गोंड़ तथा राजगोंड़ सहित अन्य अनुसूचित जनजातियां एक बार फिर अपने अधिकारों (चुनाव लड़ने का अधिकार) से वंचित हो गईं. इसके चलते दुद्धी, म्योंरपुर, बभनी, नगवां विकास खंडों के दर्जनों ग्राम पंचायतों में ग्राम-पंचायत सदस्यों के पद ख़ाली रह गए. क़रीब आधा दर्जन ग्राम पंचायतों में ग्राम सभा के गठन के लिए अनिवार्य दो-तिहाई सदस्यों का चुनाव नहीं हो पाया. इस वजह से इन पंचायतों में आज तक ग्राम सभा का गठन नहीं हो पाया है. न ही 22 जून को हुए ग्राम पंचायत उप चुनाव के बाद हो पाएगा. क्योंकि इन ग्राम पंचायतों में ख़ाली पड़ी ग्राम-पंचायत सदस्य की सीटों पर किसी भी व्यक्ति ने आवेदन नहीं किया है. जिला पंचायत राज अधिकारी कार्यालय से प्राप्त जानकारी पर ग़ौर करें तो नगवां विकास खंड का पल्हारी, बैजनाथ, रामपुर, बभनी विकास खंड का जिगनहवा, भीसुर, म्योरपुर ब्लॉक का बभनडीहा, और दुद्धी ब्लॉक का जाबर ग्राम पंचायत में ग्राम सभा का गठन नहीं हुआ है. 13 ग्राम पंचायत सदस्यों वाले पल्हारी गांव में 1006 वोटर हैं, लेकिन अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित ग्राम पंचायत सदस्य के 12 पद रिक्त हैं. 11-11 ग्राम पंचायत सदस्यों वाले बैजनाथ और रामपुर ग्राम पंचायत में भी कुछ ऐसा ही हाल है. यहां ग्राम पंचायत सदस्यों के क्रमश: आठ और छह पद रिक्त हैं. ग्राम पंचायत जिगनहवा और भीसुर के ग्राम पंचायत सदयों के 11 पद में से क्रमश: नौ और आठ पद रिक्त हैं. बभनडीहा और जाबर का हाल भी यही है. यहां ग्राम पंचायत सदस्यों के 13 पदों में से क्रमश: आठ और सात पद रिक्त हैं. ये सभी पद अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित होने की वजह से खाली हैं, जबकि इन गांवों में अनुसूचित जनजातियों की संख्या आधे से अधिक है.

अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित ग्राम प्रधान की सीटों पर भी स्थिति विकट हो गई थी. ग्रामीणों ने अनुसूचित आति के व्यक्ति को खोजकर ग्राम प्रधान का चुनाव लड़वाया और वह निर्विरोध निर्वाचित हुआ. दुद्धी विकास खंड का करहिया गांव पिछले पंचायत चुनाव में चर्चा का विषय बना रहा. 700 वोटरों वाले इस गांव में अनुसूचित जाति के दो परिवार हैं. शेष परिवार गोंड़ और पनिका जाति के हैं. वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार ग्राम प्रधान सहित ग्राम पंचायत सदस्यों का पद अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित है. 2005 के चुनाव में ग़ैर-अनुसूचित जाति के लोगों ने पंचायत चुनाव का बहिष्कार कर दिया. इसके चलते यहां मात्र 13 वोट पड़े. नौ वोट पाकर अनुसूचित जाति का एक व्यक्ति ग्राम प्रधान बना. साथ ही छह व्यक्ति ग्राम पंचायत सदस्य बने. ये सभी गांव में निवास करने वाले दो अनुसूचित जाति परिवारों के हैं और आपस में रिश्तेदार भी हैं. शेष ग्राम पंचायत सदस्य के पांच पद अभी भी रिक्त हैं. शासन स्तर पर संवैधानिक संशोधन नहीं होने और सुप्रीम कोर्ट का फ़ैसला नहीं आने के कारण सोनभद्र में गोंड़ और राजगोंड़ जाति सहित अनुसूचित जनजाति के लोगों का अधिकार दम तोड़ रहा है. जनपद की 3,78,442 अनुसूचित जनजाति के लोगों का अधिकार 2011 में होने वाली जनगणना तक ख़तरे में है. इसके बावजूद, समाजवादी पार्टी सैनी, कहार, केवट निषाद, मल्लाह, प्रजापति कुम्हार, बिंद पाल आदि 17 अति पिछड़ी जातियों को अनुसूचित जाति में शामिल करने का खेल खेल रही है. इधर, वोट बैंक की राजनीति कर रही बसपा सरकार ने भी अनुसूचित जनजाति के चुनाव लड़ने के अधिकार के लिए कुछ नहीं किया. शासन की ओर से प्रमुख सचिव ने 2008 में पत्र लिखकर गोंड़ तथा राजगोंड़ जाति समेत अन्य जनजातियों को चुनाव लड़ने देने का निर्देश जिला प्रशासन को दिया. लेकिन जिला प्रशासन ने एकबार फिर हाईकोर्ट के आदेश को प्राथमिकता दी. इस बावत सोनभद्र के जिला पंचायत राज अधिकारी रामरतन यादव का कहना है कि जब तक सुप्रीम कोर्ट का फ़ैसला नहीं आता है अथवा सरकार अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति वर्ग के क़ानून के तहत सीटें आरक्षित नहीं करती है. तब तक उच्च न्यायालय का आदेश ही मान्य होगा. इससे वर्ष 2010 में होने वाले ग्राम पंचायत चुनाव में भी गोंड़ तथा राजगोंड़ जाति समेत अन्य जनजातियों को चुनाव लड़ने का अधिकार मिलता दिखाई नहीं दे रहा है.

शिव दास

feedback.chauthiduniya@gmail.com

ख़तरनाक और बकवास है नदियों को जोड़ने की योजना

नदियों को एक-दूसरे से जोड़ने की योजना वाजपेयी सरकार के ज़माने में ख़ासी परवान चढ़ी. कावेरी नदी जल विवाद के तेज़ होने के साथ ही सरकार ने एक नया खेल नदियों को जोड़ने के रूप में खेलना शुरू किया. वैसे आम तौर पर सरकारी तंत्र ने यह दिखाने की कोशिश की है कि यह विचार दरअसल स्वीकृत है और काफी समय से रुका पड़ा था. ऐसा भी दिखाया गया मानो यह दशकों से रुका हुआ मामला था, जिस पर ध्यान देने की ज़रूरत थी. इसमें शक़ नहीं कि यह विचार काफी पुराना है, लेकिन यह भी उतना ही सच है कि हमेशा से ही इसकी उपयोगिता और अनुकूलता पर सवाल उठाए गए हैं. नहरों की श्रृंखला (गार्लैंड कनाल) का विचार कैप्टन दस्तूर ने दिया था. यह विचार काफी महान लगता था, लेकिन शायद ही यह कभी समझदार लोगों के बीच सम्मान पा सका. भारत सरकार ने 70 के दशक में ही विशाल गंगा-ब्रह्मपुत्र नहर का प्रस्ताव बांग्लादेश को दिया था, लेकिन कई वजहों से बांग्लादेश की तत्कालीन सरकार ने उसे ख़ारिज़ कर दिया था. इनमें से कई कारण उस समय भी जायज़ थे और आज भी उनकी प्रासंगिकता बरकरार है. वह प्रस्ताव ख़त्म हो गया. एक वैकल्पिक नहर-जो भारतीय सीमा के अंदर से होकर गुज़रे (सिलीगुड़ी चिकेन नेक)-के लिए काफी चढ़ाव और उतार की ज़रूरत होगी. यह एक साथ अव्यावहारिक भी लगता है और कई दृष्टिकोण से सवाल खड़े करता है, चाहे हम इसे भौतिक तौर पर संभव भी कर लें या पैसे ही जुटा लें. हमें इस मुग़ालते में नहीं रहना चाहिए कि ब्रह्मपुत्र को पश्चिम या दक्षिण की ओर मोड़ा जा सकता है. हम अधिकतम ब्रह्मपुत्र के प्रवाह में बहुत छोटे बदलाव की ही सोच सकते हैं. (यानी कि तीस्ता के संबंध में). डॉक्टर के एल राव ने गंगा और कावेरी को जोड़ने का प्रस्ताव दिया था, जिसे जल संसाधन मंत्रालय ने बहुत पहले ही नाकाम बताते हुए ख़ारिज़ कर दिया था. तकनीकी और आर्थिक प्रासंगिकता (जिसके आधार पर इसे छोड़ दिया गया) के अलावा इसके अंतरराष्ट्रीय परिणाम भी होंगे. गंगा के पानी के बंटवारे को लेकर भारत और बांग्लादेश की दिसंबर 1996 की संधि में भारत ने फरक्का तक आने वाली धारा की सुरक्षा का वचन दिया है, जो साझा करने का मुख्य बिंदु है. सवाल उठता है कि गंगा की धारा को दक्षिण की तरफ़ मोड़ना इस संधि के अनुकूल कैसे होगा? क्या फरक्का के प्रवाह पर इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा? और क्या उत्तर प्रदेश और बिहार पर ही इसका असर नहीं पड़ेगा, जहां से होकर गंगा गुज़रती है. बिहार को पहले ही इस बात का मलाल है कि उसके हितों की पर्याप्त देखभाल नहीं हो रही है. इसके अलावा, भारत-बांग्लादेश वार्ता के संदर्भ में दोनों ही पक्षों ने इस बात पर सहमति जताई थी कि गंगा में पानी कम हो रहा है और उसके जलस्तर को बढ़ाने की ज़रूरत है. हालांकि, दोनों ही पक्ष इस वृद्धि का अपना-अपना मतलब लगाते हैं. अगर इसको छोड़ भी दें, तब भी गंगा के प्रवाह को बदलने की गुंजाइश कहां है. हम काफी दूरी पर स्थित नदियों को जोड़ने की तो बड़ी योजना बना रहे हैं, लेकिन पड़ोस के दो राज्यों को तो एक ही बेसिन के पानी की साझेदारी पर नहीं मना पाते (उदाहरण के लिए, रावी-व्यास, कावेरी आदि). राष्ट्रीय जल विकास एजेंसी पेनिसुलर नदियों (महानदी-गोदावरी-कृष्णा-पेन्नार-कावेरी) को जोड़ने की संभावना का पता तो लगा रही है, लेकिन उड़ीसा इस बात से सहमत नहीं कि महानदी में अधिक पानी है और आंध्र प्रदेश इस बात से इत्तफाक नहीं रखता कि गोदावरी में ज़रूरत से अधिक पानी है. सिद्धांत की अगर हम बात करें तो हम एक ही साथ यह नहीं कह सकते कि कोई भी योजना बेसिन को प्राकृतिक जलस्रोत मानकर की जानी चाहिए और हमें घाटियों को काटकर उनको जोड़ना चाहिए. इससे जुड़ी तकनीकी चुनौतियों के अलावा इसके और भी पहलू हैं. इसका मतलब यह भी हुआ कि हम देश का भूगोल फिर से बनाएंगे. हम तकनीकी चुनौतियों या प्रोमेथेनिज़्म (प्रकृति की सर्वोच्चता) को भले ही कोई रोमांटिक कल्पना कह ख़ारिज़ कर दें, लेकिन इससे जुड़ी व्यावहारिक दिक़्क़तों को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता. एक से दूसरे बेसिन तक पानी को ले जाने में घाटियों (बेसिन) के बीच बने प्राकृतिक अवरोधों (जिसकी वजह से वह घाटी बनती हैं) के पार पानी को ले जाने की भी चुनौती है. यह काम या तो लिफ्ट के ज़रिए या फिर सुरंगों के माध्यम से किया जा सकता है. एक उपाय यह भी है कि पहाड़ों के चारों ओर से खाई खोदकर पानी दूसरी जगह लाया जाए, बशर्ते इसकी कोई गुंजाइश हो. इसमें भारी मात्रा में पूंजीनिवेश और ऊर्जा की खपत होगी. इसके साथ ही, बड़े बांध, रिजर्वायर और परिवहन व्यवस्था को भी बनाने की ज़रूरत होगी. इससे न केवल व्यापक पूंजी का निवेश होगा, बल्कि ख़ासी मात्रा में पर्यावरण पर कुप्रभाव और विस्थापन व पुनर्वास की समस्या भी पैदा होगी. हरेक मामले में ही इस पर कड़ी नज़र रखने की ज़रूरत होगी. हरेक परियोजना शायद ही इस तरह से काम कर सके. इससे भी बड़ी समस्या तो कोष (फंड) की है. चल रही परियोजनाओं के लिए ही राशि का आवंटन बमुश्किल पर्याप्त है. इसी वजह से यह साफ दिखता है कि नदी जोड़ने की बड़ी योजनाओं को-जिनमें काफी बड़ी रकम चाहिए- शायद ही फंड मिल सके. हम शायद समय के साथ ही धन की भी बर्बादी करेंगे, वह भी उन योजनाओं के नाम पर जिनका भविष्य ही कठिन दिख पड़ता है. हमें शायद दूसरी ज़रूरी और आवश्यक गतिविधियों के लिए योजना बनाने में समय और धन लगाना चाहिए. जैसे कि, पूरे देश में (जहां भी संभव हो) जल के भंडारण और दक्षिण में बड़े तालाबों की स्थापना और इसी तरह के परंपरागत स्रोतों पर ज़ोर देना चाहिए. अंत में, नदियों को जोड़ने की योजना पर पहले ही एक उच्चस्तरीय राष्ट्रीय आयोग (इंटीग्रेटेड वाटर रिसोर्सेज़ डेवलपमेंट प्लान) ने अध्ययन कर लिया है और इसे बहुत बेहतर नहीं बताया है. क्या हमें कम से कम कमीशन की रिपोर्ट को नहीं देख लेना चाहिए और यह तय करना चाहिए कि इस विचार को अमली जामा पहनाया जाए या नहीं?

रामास्वामी अय्यर

(लेखक पूर्व केंद्रीय जल संसाधन सचिव हैं)

feedback.chauthiduniya@gmail.com

नदियों को जोड़ना : निगमीकरण को आमंत्रण

वंदना शिवा

तमिलनाडु और कर्नाटक के बीच कावेरी विवाद के बाद ही नदियों को जोड़ने की धारणा को बल मिला. दूरदृष्टि नहीं रखने वाले लोगों ने फिर से इस मसले को हवा दे दी, जो काफी बड़े और अलग तरह के मानवीय, पारिस्थितिकीय और आर्थिक समस्याओं को पैदा करेंगे. गंगा, कावेरी और कृष्णा जैसी उत्तर-दक्षिण की महत्वपूर्ण नदियों को जोड़ना इन प्रस्तावों का अहमतरीन हिस्सा है. दूसरा विचार दक्षिण की तीन महत्वपूर्ण नदियों- गोदावरी, कृष्णा और कावेरी को आपस में जोड़ने का है, ताकि पूरा तटीय (पेनिसुलर) भारत इनका पानी इस्तेमाल कर सके. यह प्रस्ताव दरअसल उस मानसिकता से उपजा है जिसका यक़ीन है कि समस्या सुलझाने का एकमात्र रास्ता पानी खोजना और उसका इस्तेमाल करना है, भले ही उसके नकारात्मक परिणाम कुछ भी हों.

पेनिसुलर नदियों को जोड़ने की योजना मानवीय तौर पर घातक होगी और इसकी तुलना केवल मोहम्मद-बिन-तुगलक के उसकी राजधानी को दिल्ली से दौलताबाद ले जाने से की जा सकती है. यह तबाही लाने वाला इसलिए भी होगा कि अगर हम समझदारी से इस्तेमाल करें, तब तो पर्याप्त पानी है, वरना कभी भी यह पर्याप्त नहीं है यदि हम इसका नासमझी से प्रयोग करें. यही बात खेती के साथ भी लागू होती है. अगर आप अधिक पानी खाने वाली फ़सलों पर ज़ोर देंगे, तो निरर्थक ही पानी की बर्बादी होगी. बहुफ़सली खेती के साथ भी यही बात लागू होती है. अगर हम साल में तीन फ़सलें उगाएंगे और उसमें भी ईख जैसी पानी खाने वाली फ़सल उपजाएंगे, तो कुछ वैसा ही संकट पैदा होगा, जैसा मांड्या और तंजावुर इलाक़ों में कावेरी के साथ हुआ.

दरअसल सरकार की योजना यही है कि नदियों को जोड़ो, पानी को एक से दूसरी जगह ले जाओ और सूखे इलाक़े ख़ुद ही सिंचित हो जाएंगे. ऐसे में किसान अनायास मिले अधिक पानी की वजह से ऐसी फ़सलों की ओर आकर्षित होंगे, जो अधिक पानी खाती हैं और स्थानीय मिट्टी के उपयुक्त नहीं हैं. अनावश्यक और अधिकतम सिंचाई ही तब व्यवस्था बन जाएगी. इसके बाद तो यह केवल समय का सवाल रहेगा, जब पानी की कमी होने लगेगी और आज के तनाव कल हज़ार गुणा अधिक हो जाएंगे.

नदियों को जोड़ना तबाही को आमंत्रण होगा, क्योंकि यह विशालकाय योजना कम-से-कम आधी सदी तो पूरा होने में लेगी. इससे भारी पैमाने पर विस्थापन भी होगा. हज़ारों किलोमीटर लंबी नहरों को बनाने के लिए जो खुदाई होगी, उससे गांव के गांव उजड़ेंगे. शहरों में बाढ़ आएगी और हज़ारों एकड़ खेती के लायक ज़मीन बर्बाद होगी. यह लाखों लोगों को जड़ से उखाड़ देगा. यह महाकाय योजना इस वजह से भी बर्बादी लाएगी, क्योंकि इसमें हज़ारों करोड़ रुपये ख़र्च होंगे. इसका लाभ या तो ठेकेदारों को मिलेगा या राजनीति से जुड़े लोगों को, जो करोड़पति बनेंगे.

यह संभव है कि हम अपने संसाधनों का उपयोग ऐसी फ़सलों की खोज में लगाएं, जो कम पानी खाती हों तो फिर हमारे पास पर्याप्त पानी होगा. एक नहर बनाने में दो दशक से कम नहीं लगते हैं और इसकी वजह से लाखों किसान विस्थापित तो होते ही हैं. इसी वजह से कह सकते हैं कि नदियों को जोड़ने की यह योजना आज़ाद भारत की सबसे बड़ी मानवीय, पारिस्थितिकीय और आर्थिक त्रासदी होगी, तो कुछ ग़लत नहीं होगा.

संक्षेप में इसकी चार वजहें होंगी. पहली तो यह, कि इसमें इतना अधिक धन जुड़ा है कि वह बड़ी त्रासदी होगी. दूसरे, योजना के प्रभाव से राज्य भी आशंकित हैं. तीसरी और सबसे अहम बात यह कि कई नहरों को राष्ट्रीय पार्कों और अभयारण्यों से गुज़ारना होगा. इससे पर्यावरण की अपार हानि होगी. अंतिम और बेहद गंभीर बात यह कि जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा विस्थापित होगा और उसका पुनर्वास बेहद कठिन और समय लेने वाला होगा.

अंत में हम यही कह सकते हैं कि तीस साल पहले तत्कालीन सिंचाई मंत्री के एल राव का यह विचार व्यावहारिक नहीं है. नदियों का जोड़ना कोई नेशनल हाइवे बनाना नहीं हैं. समस्या राजनीतिक इच्छाशक्ति और तकनीकी ज्ञान की नहीं हैं. इसके अंतर्राज्यीय से लेकर अंतरराष्ट्रीय प्रभाव हैं. किसी भी हालत में यह एक व्यावहारिक और उचित क़दम नहीं होगा.

(लेखिका मशहूर पर्यावरणविद् हैं)

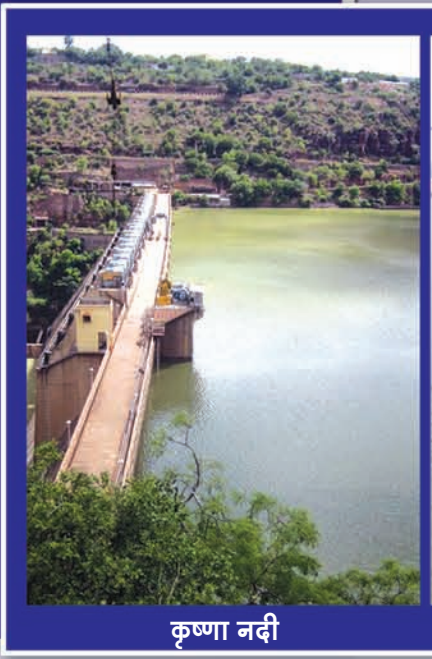

कृष्णा नदी

गंगा नदी

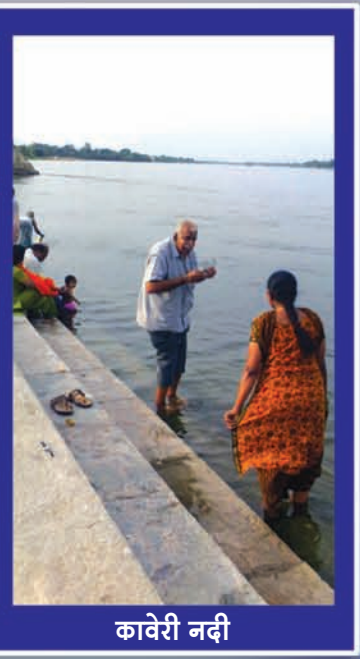

कावेरी नदी

हर साल पड़ेगा सूखा

वे आसमान की तरफ़ टकटकी लगा कर देख रहे हैं. शायद बादल अपनी कंजूसी छोड़ रिमझिम बरसात कर दें. वे हमारे अन्नदाता हैं. वे किसान हैं, जिनकी फ़सल इस साल तबाह होने के पूरे आसार हैं. ज़ाहिर तौर पर मानसून में देरी हमारी फ़सलों को और उसके दाम को प्रभावित करेगी. सरकार भी मानसून में कमी को लेकर सोच में पड़ी है. प्रधानमंत्री इस बात को स्वीकार कर चुके हैं और अपनी चिंता भी प्रकट कर चुके हैं. लू के थपेड़े चल रहे हैं और आसमान से मानो आग बरस रही है. इसी सप्ताह सरकार ने स्वीकार भी किया है कि मानसून सामान्य से कम रहेगा. हालांकि विज्ञान और तकनीकी मंत्री पृथ्वीराज चौहान ने दावा किया कि यह सूखे की स्थिति नहीं है और कम बारिश होने के बावजूद फ़िलहाल कोई भी इलाक़ा अकालग्रस्त नहीं है. मंत्री महोदय ने यह भी कहा कि उत्तर-पश्चिमी भारत में जुलाई के पहले सप्ताह तक मानसून आ जाएगा. उसी तरह भारतीय मौसम विभाग ने 93 फीसदी औसत मानसून का दावा किया है. मौसम विभाग ने 19 फीसदी कम बारिश का ऐलान किया है. किसी भी इलाक़े को सूखाग्रस्त घोषित कर दिया जाता है, अगर उस इलाक़े में 20 से 59 फीसदी बारिश दर्ज़ होने पर सूखा घोषित किया जाता है. कृषि वैज्ञानिकों का यह भी कहना है कि अगर जुलाई में 49 फीसदी से कम बारिश हो, तो खेती के लिहाज़ से वह इलाक़ा सूखा घोषित किया जाता है.

ज़ाहिर तौर पर ये आंकड़े सरकारी दावों को झुठला रहे हैं. कई बार पूरे देश में सामान्य मानसून दर्ज़ होने पर भी कई इलाक़े सूखे की चपेट में आते हैं. इस लिहाज़ से हालात ख़तरनाक हैं. पंजाब, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, चंडीगढ़, उत्तरांचल और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में इस बार सूखे का ख़तरा साफ तौर पर मंडरा रहा है.

पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में कुल मिलाकर पूरे देश के खाद्यान्न का आधे से अधिक उगाया जाता है. यही हाल उड़ीसा का भी है, जहां जमकर धान की खेती होती है. मानसून में अगर

कमी हुई, तो ज़ाहिर तौर पर खाद्यान्न के दाम बढ़ेंगे. पंजाब के कृषि विभाग के निदेशक बी एस सिद्धू आशंका जताते हैं कि मानसून की देरी और लू से धान की फ़सल को ख़ासा नुक़सान पहुंचेगा. इसी तरह उड़ीसा में लगभग चार मिलियन हेक्टेयर जमीन पर धान की खेती होती है. इसमें से 62 फीसदी पूरी तरह बारिश पर यानी मानसून पर आधारित है. मौसम विभाग ने मानसून के जल्द आने की बात कही थी, और उसी आस में किसानों ने बुआई जल्द कर दी थी. अब मानसून में देरी से वे बिचड़े तो सूखेंगे ही. उत्तर प्रदेश भी भीषण गर्मी और लू की चपेट में है. तापमान बढ़ता जा रहा है और किसान टकटकी लगाए आसमान की ओर देख रहे हैं. राज्य सरकार के कृषि विभाग के आंकड़ों के मुताबिक पिछले साल 15 जून तक 3.44 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर बुआई हो गई थी. इस बार यह घटकर महज़ 2.53 लाख हेक्टेयर रह गई है. मध्य प्रदेश में भी पानी का ज़बर्दस्त अकाल है. यहां एक बाल्टी पानी दो रुपए से पांच रुपये में बिक रहा है. यह हाल तब है, जब सरकार ने 115 क़स्बों और शहरों में वाटर की राशनिंग शुरू की है.

आंध्र प्रदेश में जिस इलाक़े को धान के कटोरे के रूप में जाना जाता है, में भी मानसून में देरी से खेती प्रभावित होने के आसार हैं. लगभग सारे डैम और नहरों में पानी न्यूनतम स्तर तक पहुंच चुका है और इसी वजह से सिंचाई के लिए पानी नहीं छोड़ा जा सका है.

हालात इतने ख़राब हो चुके हैं कि झारखंड में तो अब तक 20 से अधिक लोग लू की चपेट में आ चुके हैं. यहां तक कि शिमला और हिमाचल जैसे पहाड़ी इलाक़ों में भी गर्मी चरम पर है. कहने की ज़रूरत नहीं कि हमारे लालच और जल स्रोतों के अंधाधुंध दोहन ने ही पानी का ऐसा संकट पैदा किया है. हालात अगर ऐसे ही रहे, तो आश्चर्य नहीं कि सूखा हरेक साल ही पड़े.

व्यालोक

vyalok.chauthiduniya@gmail.com

एम जे अकबर

शांति के लिए समय की नहीं, समझ की ज़रूरत है

दूसरे ग्रहों के ख़ुफ़िया सूत्रों ने–जो भविष्य में देख सकते हैं–अगले निर्गुट सम्मेलन के दौरान भारतीय और पाकिस्तानी विदेश सचिवों के बीच होने वाली बातचीत के पूरे ब्योरे का खुलासा किया है. आइए आपको इसके कुछ अंशों से वाक़िफ़ कराएं–

भारतीय विदेश सचिव (आईएफएस): और जनाब. कहिए क्या हाल हैं, सब ठीक.

पाकिस्तानी विदेश सचिव (पीएफएस): (कंधे उचकाकर) बातचीत की शुरुआत ताना मारने से करने की आपकी आदत है या इसे आप भारत–पाक बातचीत के लिए ही बचा कर रखते हैं.

आईएफएस : दिल्ली में हम व्यंग्य नहीं करते, ख़ासकर तब, जब एक पूरा मानसून ही रास्ते में कहीं खो गया हो.

पीएफएस : आप मुझे बेवकूफ तो बना ही सकते थे. ख़ैर, जहां तक तालिबान के होते हुए सब ठीक–ठाक होने की बात है, उसे आप अख़बारों में पढ़ लीजिए. वैसे आपके अपने नक्सलियों के साथ चल रही छोटी सी लड़ाई के क्या हाल हैं?

आईएफएस : कम से कम हमने नक्सलियों को बेगुनाहों को मारने और पाकिस्तान में होटलों को उड़ाने के लिए पैसे तो नहीं दिए थे.

पीएफएस : दरअसल, इस काम के लिए हम ख़ुद ही काफी हैं, हमें बाहरी मदद की ज़रूरत नहीं है. वैसे, सच कहूं तो तालिबान एक बड़ी ग़लती साबित हुआ. जिस हाथ ने उसे खिलाया, उसी हाथ को काट लिया ...

आईएफएस : कहीं काटे का यह घाव, नासूर तो नहीं बन गया...

पीएफएस : अगर...ईमानदारी से कहूं तो...

आईएफएस : आह..अगर ऐसा हो तो यह एक ख़ुशनुमा बदलाव होगा.

पीएफएस : बहुत ख़ूब...अच्छा मज़ाक कर लेते हैं आप. पिछली बार जब हम मिले थे, उस वक़्त से आपने इस मामले में बड़ी तरक़्क़ी की है...बहुत अच्छे...आपने यह विदेश सचिवों के नियमों की किताब से तो नहीं सीखा होगा.

आईएफएस : हा–हा. मैं आपकी बात समझ गया. वैसे हमारे महान उपमहाद्वीप के सभी देशों में, शायद प्यारे भूटान को छोड़कर, एक गृहयुद्ध चल रहा है. लगता है, थोड़े आपसी सहयोग का वक़्त आ गया है?

पीएफएस : मैं भी बिल्कुल यही सोच रहा था. दरअसल शुरुआत से ही हम दुनिया का सबसे ग़रीब हिस्सा थे–आप मानेंगे कि यहीं से नक्सली भी आए– और अब दुनिया का सबसे हिंसक और ख़ूनख़राबे वाला हिस्सा भी बन गए हैं.

आईएफएस : मत भूलिए कि जो ख़ून बहा वह मासूमों का था. भारत के लिए आपका एकमात्र निर्यात आतंकवाद रहा है. आपके आतंकवादियों की आपूर्ति आप अपने देश की राजनीतिक जीडीपी की मांग के आधार पर बढ़ाते–घटाते रहते हैं. मुंबई के बाद आप बचाव की मुद्रा में थे, लेकिन अब लगता है आपने फिर उन्हें काम पर लगा दिया है.

पीएफएस : आप हमें कुछ ज़्यादा ही क्रेडिट दे देते हैं. इन आतंकियों का अपना एजेंडा है. जब तक आप असल मुद्दे –कश्मीर–को...

आईएफएस : लगता है, यह बात आपकी समझ में अब तक नहीं आई है कि दुनिया–और आपके पुराने दोस्त अमेरिका के लिए भी–यह मूल मुद्दे वाला राग अब पुराना हो चुका है. अगर आप इसी पर अटके रहना चाहते हैं, तो बेहतर होगा कि हम आगे की बातचीत आपकी देखी पिछली फिल्म के बारे में ही करें.

पीएफएस : पिछले दिनों आपके अख़बारों में एंजेलिना जोली की एक सेक्सी तस्वीर देखी. बहुत बढ़िया. हमारे अख़बार आपके अख़बारों के सामने पूरे शाकाहारी हैं. यह उन मुल्लाओं की वजह से है. न ख़ुद मज़े करते हैं और न हमें करने देते हैं.

आईएफएस : हमारे यहां भी कुछ लोग नैतिक पुलिस बनाना चाह रहे थे, लेकिन शुक्र है कि चुनाव ने उन्हें किनारे कर दिया. वैसे, मेरे दोस्त, बात बदलने में आप बड़े माहिर हैं, लेकिन यह मेरे सामने नहीं चलेगा. जब भी लश्कर के चीफ हाफिज़ सईद और उसके सहयोगी कर्नल नाज़िर अहमद की बात होती है तो आपकी पूरी सरकार की याददाश्त क्यों खो जाती है? उन्हें इसलिए छोड़ दिया गया था क्योंकि आप अल–क़ायदा को आतंकी संगठन घोषित करना भूल गए. सरबजीत सिंह के लिए जो वकील आपने रखा वह कोर्ट में आना भूल गया. भूल गया! क्या आपके यहां वकीलों को भूलने के ज़्यादा पैसे मिलते हैं?

पीएफएस : आह, फिर से वही तोहमत लगाने का खेल, हम इससे आगे क्यों नहीं बढ़ते. हम सरहद के दोनों तरफ़ पांच मील तक को ग़ैर–फौजी इलाक़ा घोषित करने को तैयार हैं. ज़रा सोचिए, इससे अमन का कितना बड़ा मैसेज जाएगा और आपको कश्मीरियों के सामने से अपनी फौज हटाने का मौका भी मिल जाएगा. अब इस बारे में मुझे ज़्यादा बोलने की ज़रूरत तो नहीं है, ख़ासकर शोपियां के बाद? ग़ैर–फौजी इलाक़े के बनने से कश्मीरी बिजली बांट सकेंगे, आपस में व्यापार कर सकेंगे और ख़ास परमिटों पर दोनों ओर आ–जा सकेंगे.

आईएफएस : और आपके लिए भी आसानी हो जाएगी..हमारी सेना पीछे जाती है और आपके पैदा किए गए आतंकी और जिहादी चैन की सांस लेते हैं. साथ ही आप चाहते हैं कि हम भारतीय संप्रभुता के सारे चिह्न ख़त्म कर दें, लेकिन आप आपने पूरे कश्मीर के रुख़ से नहीं हटेंगे. हम ऐसा क्यों नहीं करते कि लाइन ऑफ कंट्रोल को सीमा घोषित करें और आगे बढ़ें? इससे सारा मुद्दा ही ख़त्म हो जाएगा और शांति क़ायम होगी.

पीएफएस : अमन. क्या नेक ख़याल है. लेकिन हम एलओसी को सरहद नहीं मान सकते. इसके मायने तो यहीं होंगे कि हम 60 साल से बिना बात के लड़ते रहे.

आईएफएस : मैं जानता हूं और आप भी जानते हैं, कि यही एकमात्र जवाब है. बाक़ी सबकुछ महज़ दुनिया को–अगर ख़ुद को भी नहीं–बेवकूफ बनाने की कोरी कवायद है.

पीएफएस : (नरमी से) यह फ़ैसला हमारा तो नहीं होगा न?

आईएफएस : सच है.

पीएफएस : (मुस्कुराकर) एक बात बताएं, अगर हमारे सियासी आका सच में अमन चाहें तो इसमें कितनी देर लगेगी.

आईएफएस : क़रीब छह मिनट

पीएफएस : और अगर हम आज की तरह ही बात करते रहे तो?

आईएफएस : 60 साल और

पीएफएस : बिल्कुल. आपसे अगली मीटिंग में मुलाक़ात होगी.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

रवि किशोर

पर्यावरण और क़ानून

आज पर्यावरण को हमारे जीवन के सबसे अहम पहलू के तौर देखा जाता है और इसकी बढ़ती अहमियत से यह बात भी साफ हो गई है कि इसकी सुरक्षा का ज़िम्मा महज़ सरकार का ही नहीं है बल्कि हर नागरिक का है. भारत में पर्यावरण की सुरक्षा और बचाव से संबंधित कई नियम और मार्गदर्शन हैं जो विस्तृत और कठोर हैं, लेकिन उनको लागू करने का तरीक़ा अब तक कारगर और असरदार नहीं रहा है और न ही उसके अपेक्षित परिणाम मिल पाए हैं. विधायिका क़ानून तो बनाती रही है लेकिन उनको सही ढंग से लागू नहीं किया गया है. एक उदाहरण गंगा और यमुना जैसी नदियों की स्थिति है, जो संरक्षण के नाम पर करोड़ों ख़र्च होने के बाद भी दयनीय हालत में हैं. भारत में पर्यावरण से जुड़े न्यायिक मामलों का विकास मुख्यत: सर्वोच्च न्यायालय के प्रयासों से ही हुआ है.

सरकारी संस्थाओं के पास उद्योगों, खानों और अन्य प्रदूषकों को नियंत्रित करने की शक्ति है, लेकिन उसका इस्तेमाल ज़्यादा नहीं हुआ है. अरावली पहाड़ों में खुदाई का मामला ऐसा ही उदाहरण है जहां सर्वोच्च न्यायालय को हस्तक्षेप करना पड़ा.

न्यायपालिका ने इस तरह के मामलों में सक्रिय भूमिका अपनाई है, सर्वोच्च न्यायालय ने एक नीति–निर्धारक की भूमिका निभाते हुए एस जगन्नाथ बनाम भारतीय संघ के मामले में समुद्री तटों के आसपास अपारंपरिक जलजीवन के ख़िलाफ़ निर्देश दिए. ऐसा ही उसने एम सी मेहता बनाम भारतीय संघ के मामले में भी किया. सर्वोच्च न्यायालय ने शिक्षक की भूमिका निभाते हुए पर्यावरण से जुड़े कार्यक्रम प्रसारित करने संबंधी निर्देश भी दिए. साथ ही सर्वोच्च न्यायालय ने प्रशासक–नियामक की भूमिका निभाते हुए राष्ट्रीय वन क़ानूनों के लागू करने में न्यायिक देखरेख की व्यवस्था भी दी. हालांकि न्यायपालिका की सक्रियता के बाद भी अधिकतर जगहों पर पर्यावरण की स्थिति बिगड़ी है, (दिल्ली में सीएनजी लाने जैसे कुछ उदाहरणों को छोड़कर). इसके पीछे की असल वजह क़ानूनों को लागू करने की अक्षमता और कम बजट, राजनीतिक हस्तक्षेप जैसी चीज़ें रही हैं.

> **भारत में पर्यावरण की सुरक्षा और बचाव से संबंधित कई नियम और मार्गदर्शन हैं जो विस्तृत और कठोर हैं, लेकिन उनको लागू करने का तरीक़ा अब तक कारगर और असरदार नहीं रहा है और न ही उसके अपेक्षित परिणाम मिल पाए हैं.**

भारतीय संविधान के राज्य की नीतियों और मूल कर्तव्यों से जुड़े अध्याय में पर्यावरण संरक्षण से जुड़े कई नियम दिए गए हैं. अनुच्छेद 48ए में राज्य और 51ए में नागरिकों को पर्यावरण संरक्षण से संबंधित निर्देश दिए गए हैं. सर्वोच्च न्यायालय ने इंटेलैक्चुअल्स फोरम, तिरुपति बनाम आंध्र सरकार के मामले में भी दोहराया कि क़ानून बनाते समय इन दोनों अनुच्छेदों में दी गई व्यवस्थाओं का ध्यान रखा जाए. हालांकि, सर्वोच्च और उच्च न्यायालयों ने पूर्ण पर्यावरण के अधिकार को अनुच्छेद 21 में दिए गए जीवन के अधिकार से जोड़ दिया. अनुच्छेद 21 के मुताबिक किसी भी व्यक्ति से उसके जीवन से जुड़ी आज़ादी बिना किसी क़ानूनी कारण के नहीं छीनी जा सकती.

क्षेत्रीय प्रदूषण मुक्ति समिति बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के मामले में न्यायालय ने कहा कि हर व्यक्ति को अनुच्छेद 21 में दिए गए बेहतर जीवन जीने का मूल अधिकार है और इसके अनुच्छेद 32 के तहत वह इसके संरक्षण की मांग कर सकता है. हालांकि यह पर्यावरण के लिए संरक्षण के लिए होना चाहिए, किसी व्यक्तिगत कारण से नहीं.

रतलाम नगरपालिका बनाम वर्धी चंद और अन्य के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने प्रदूषण मुक्त समाज वातावरण के अधिकार को मानवाधिकार का दर्जा दिया. तरुण भारती संघ, अलवर बनाम भारत संग(सरिस्का मामला) में टिप्पणी करते हुए न्यायालय ने कहा कि पर्यावरण के मामले को न्यायालय का सबसे अधिक ध्यान मिलना चाहिए. वीरेंद्र गौर बनाम हरियाणा राज्य के मामले में न्यायालय ने व्यवस्था दी–

पर्यावरण, पारिस्थिकी, हवा, पानी आदि के प्रदूषण को अनुच्छेद 21 के उल्लंघन के तौर पर देखा जाना चाहिए. अत:, स्वच्छ वातावरण स्वस्थ जीवन का अभिन्न अंग है और बिना मानवीय व स्वच्छ वातावरण के मानवीय प्रतिष्ठा के साथ जीना असंभव है. राज्य सरकारों और नगरनिगमों और पालिकाओं की न केवल पर्यावरण की रक्षा की संवैधानिक ज़िम्मेवारी है बल्कि मानव–निर्मित और प्राकृतिक पर्यावरणीय स्थितियों के संरक्षण और विकास की भी अनिवार्यता है.

हालांकि पर्यावरण क़ानूनों को लागू करने में सबसे बड़ा रोड़ा हितों के टकराव–सबसे हित में पर्यावरण संरक्षण या सबके फ़ायदे का औद्योगिक उत्पादन–का है.

पर्यावरण से जुड़े मामलों में सबसे अच्छा क़ानूनी तरीक़ा इस टकराव को ख़त्म करने का होगा. सबसे अच्छा तो यह होगा कि पर्यावरण क़ानूनों के नियामक और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर रहे औद्योगिक उत्पादक एक ही हों. तभी कोई क़ानून सही मायनों में अच्छा कहलाएगा.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बाज़ारवादी ताक़तों की साज़िश है समलैंगिक आंदोलन

भारतीय लोकतंत्र अपनी 60 वर्ष की आयु में इतना परिपक्व हो गया है कि देश की उच्च शिक्षित, संपन्न और जागरूक जनता के लिए समलैंगिकता के समर्थन में जनमत तैयार करने में कोई शर्म या झिझक नहीं रह गई है. खुलकर सड़कों पर गे–परेड का आयोजन किया जा रहा है. इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया पर बहस चलाई जा रही है कि इस देश के चंद नागरिकों की बात मान ली जाए और भारतीय अपराध दंड संहिता की धारा–377 ख़त्म कर दी जाए.

दिल्ली में एक राष्ट्रवादी *गे* (समलैंगिक), जो ख़ादी का कुर्ता और जींस पेंट पहनते हैं, अपने अधिकारों की मांग के समर्थन में बड़ी शान से यह तर्क देते सुनाई दिए कि भारतीय दंड संहिता अंग्रेजों ने बनाई थी और अंग्रेजों के शासन के ख़त्म होने के 62 साल बाद ही स्वतंत्र भारत की सरकार इसे बनाए हुए है. वह नाराज़ हैं कि हमारी सरकार भी अंग्रेजों की तरह सोचती–विचारती है. आज़ादी के माहौल में जनता के *गे* वर्ग को भी आज़ादी मिलनी चाहिए. इनके लिए आज़ादी का मतलब टोटल फ्रीडम है. समलैंगिक अपनी मांग के समर्थन में संस्कृति, धर्म, सामाजिक परिवर्तन, नैतिक मूल्यों में बदलाव और जाने क्या–क्या अजब–गजब तर्क दे रहे हैं.

एक ओर देश में *गे* आंदोलन चल रहा है, तो बाज़ारवादी ताक़तें मीडिया के ज़रिए इस आंदोलन के लिए हवा बनाने का काम कर रही हैं. एक फिल्म में अभिषेक बच्चन, जॉन अब्राहम के साथ मटकते हुए यह कहते दिखाई दिए थे– हम *गे* हैं, यह मेरा बॉय फ्रैंड है. हिंदी फिल्म उद्योग के कई सफल और स्थापित निर्माता–निर्देशकों ने समलैंगिकता के विषय पर फिल्में बनाकर अच्छी कमाई की है.

पुरुष ही नहीं, नारी सशक्तीकरण के इस दौर में कई महिलाएं भी समलैंगिकता के पक्ष में खुलकर सामने आ रही हैं. 19 वीं सदी में एक अर्थशास्त्री ने कहा था कि पूंजीवाद में पुरुष को श्रम के लिए और स्त्री को श्रम और सेक्स के दोनों के लिए शोषण का शिकार बनाया जाता है. लेकिन आज 21वीं सदी में गे–आंदोलनों को देखते हुए लगता है कि इस निर्मम और अमानवीय पूंजीवादी दौर में तो स्त्री और पुरुष दोनों को श्रम और सेक्स के लिए शोषण का शिकार बनाया जा रहा है. बाज़ार में जब किसी के पास बेचने के लिए कुछ नहीं होता है, तब ख़रीददार की मांग पर व्यक्ति अपने आप को बेचने के लिए मजबूर हो जाता है. पुरुष प्रधान समाज ने वेश्यावृत्ति की समस्या पर खूब आंसू बहाए हैं, फ़र्ज़ी हमदर्दी भी जताई है, लेकिन यही पुरुष समाज सदियों से इस अमानवीय और अनैतिक बुराई को नए–नए रूप में जारी भी रखे हुए है.

पश्चिम के कुछ देशों में विकृत सेक्स प्रेमियों ने गे सेक्स की मंडी क़ायम कर रखी है, लेकिन भारत में क़ानून और समाज के डर से गे सेक्स मंडी नहीं बन सकी है. फिर भी चोरी छुपे असंगठित रूप से देश के कई शहरों में गे–देह व्यापार का कारोबार चल रहा है. हो सकता है कि हमारे *गे* आंदोलन के ध्वजधरों के लिए निजी शारीरिक–मानसिक सुख और संतोष के लिए समलैंगिकता ज़रूरी हो, लेकिन क्या वे इसकी गारंटी दे सकते हैं कि धारा 377 समाप्त हो जाने और समलैंगिक संबंधों को वैधानिक मान्यता मिल जाने पर ग़रीबी और बेरोज़गारी की समस्या से जूझ रहे भारतीय समाज में आज की अर्थलोलुप और महत्वाकांक्षी युवा पीढ़ी को पश्चिम की तर्ज़ पर समलैंगिक सेक्स व्यापार से बचाया जा सकेगा.

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पश्चिमी सभ्य देश मानव अधिकार और मानव मूल्यों के नाम पर ग़रीब एशियाई देशों पर उद्योग व्यापार के लिए कई कठोर शर्तें लादते हैं. वे महिलाओं और बच्चों के शारीरिक–मानसिक शोषण के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाते हैं और वैश्विक मंचों पर ग़रीब–पिछड़े एशियाई और अफ्रीकी देशों को मानवता और सभ्यता का पाठ पढ़ाते हैं, लेकिन उन्हीं पश्चिमी सभ्य देशों ने अफ्रीका, चीन और दक्षिणी पूर्वी एशियाई देशों को सेक्स पर्यटन उद्योग का बाज़ार बना रखा है. अत: पश्चिम के गे–आंदोलन से प्रभावित भारतीयों को समझ लेना चाहिए कि आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण के इस नए युग में कोई भी सामाजिक आंदोलन बाज़ार की ताक़तों पर ही चलाया जाता है. *गे* आंदोलन भी बाज़ार की ताक़तों की एक साज़िश है.

विनय दीक्षित

(लेखक विख्यात पत्रकार एवं विचारक हैं)

feedback.chauthiduniya@gmail.com

जब तोप मुक़ाबिल हो

बिजली-पानी पर अब भी चेत जाएं

> सन सतहत्तर में जब जनता पार्टी की सरकार बनी थी तब राजनारायण ने, जो उस सरकार में स्वास्थ्य मंत्री थे, कहा था कि उनकी सरकार की प्राथमिकता लोगों को पीने का साफ पानी उपलब्ध कराना है. राजनारायण जी का अख़बार वालों ने, कुछ राजनीतिक दलों ने उस समय मज़ाक बनाया था क्योंकि उन्हें लगता था कि पीने का पानी तो है ही, सिंचाई योजनाओं पर ज़ोर देना चाहिए.

सालों पहले नारा गूंजता था–रोटी कपड़ा दे न सके जो, वह सरकार निकम्मी है. आज यह नारा नहीं गूंजता, क्योंकि प्राथमिकताएं पिछले सालों में बदली हैं. बदली प्राथमिकताएं सरकार कितनी समझती है यह सवाल खड़ा है, क्योंकि बदली प्राथमिकताओं पर आधारित सौ दिन के एजेंडे का आना अभी बाक़ी है.

सन सतहत्तर में जब जनता पार्टी की सरकार बनी थी तब राजनारायण ने, जो उस सरकार में स्वास्थ्य मंत्री थे, कहा था कि उनकी सरकार की प्राथमिकता लोगों को पीने का साफ पानी उपलब्ध कराना है. राजनारायण जी का अख़बार वालों ने, कुछ राजनीतिक दलों ने उस समय मज़ाक बनाया था क्योंकि उन्हें लगता था कि पीने का पानी तो है ही, सिंचाई योजनाओं पर ज़ोर देना चाहिए. अस्सी के दशक में चंद्रशेखर ने भारत की पदयात्रा की थी, तब उन्होंने भी पीने के पानी का सवाल ज़ोर–शोर से उछाला था. ये ऐसे नेता थे जिन्होंने बीस या तीस साल बाद उठने वाली समस्या को समझ लिया था. देश के कई हिस्सों में पीने का पानी सालों से उपलब्ध नहीं है, राजस्थान जैसे प्रदेशों में तो बीस–बीस मील से सर पर ढोकर कर पीने का पानी लाना पड़ रहा है. पर यह स्थिति मैदान में, पहाड़ में, जंगल में, हर जगह आ जाए तो इसे किन शब्दों में व्यक्त करेंगे! यही कहा जा सकता है कि उन समस्याओं पर न सरकार ने, न नौकरशाही ने और न न्यायालय ने ध्यान दिया, जो समस्याएं विकराल रूप लेकर देश में रहने वालों को परेशान कर सड़क पर उतरने को मजबूर कर सकती हैं.

इसी तरह बिजली है. बिना बिजली के जीवन की कल्पना करना मुश्किल है. खेती के लिए बिजली इसलिए आवश्यक है कि सिंचाई और कटाई बिना उसके हो ही नहीं सकती. उद्योग भी बिना बिजली नहीं चल सकते. डीज़ल इसका विकल्प नहीं है. पिछले बीस सालों से सरकार बिजली को लेकर ज़ुबानी जमा ख़र्च करती रही है. मेमोरेंडम ऑफ अंडरस्टैंडिंग पर दस्तख़त हुए, ज़मीन दी गई लेकिन बिजली घर नहीं बने. क्यों नहीं बने, सरकारों ने इस पर ध्यान ही नहीं दिया.

पानी और बिजली की समस्या ने अब देश की राजधानी को अपनी जकड़ में ले लिया है. छोटे शहर, क़स्बे और गांव तो सालों से इसकी चपेट में थे. आज भी दिल्ली से सटे उत्तर प्रदेश के गाज़ियाबाद या नोएडा में बिजली लगातार इतनी देर भी नहीं आती कि वहां इन्वर्टर रखने वाले उसे चार्ज भी कर सकें. और इन्वर्टर रखने वाले हैं कितने? सालों से ग़रीबों के मोहल्ले में, विशेषकर मुस्लिम बस्तियों में बिजली–पानी का संकट किसी की चिंता का विषय रहा ही नहीं है. ओखला और पुरानी दिल्ली के उन इलाक़ों में, जहां मुसलमानों की घनी बस्ती है, बिजली और पानी कब जाता है, कब आता है, पता ही नहीं चलता. इनकी सुनवाई सालों से नहीं हो रही थी, अब बड़े लोगों की बस्तियों में रहने वालों की सुनवाई भी नहीं हो रही.

राजधानी में सबसे महंगा इलाक़ा माना जाने वाला क्षेत्र भी आज पीने के पानी को तरस रहा है और वे जो कभी अपने वातानुकूलित कमरों से नहीं निकलते थे, आज बच्चों के साथ बिजली दफ़्तर पर धरना दे रहे हैं. अब पानी के सवाल पर ग़रीबों के बीच मारपीट आम हो चली है और कहीं–कहीं हत्याएं भी हो रही हैं.

> **सुप्रीम कोर्ट का यह कहना कि जो सरकार पीने का पानी नहीं दे सकती उसे राज करने का हक़ नहीं है, बतलाता है कि समस्या कितनी बढ़ गई है. इसलिए ज़रूरी है कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से आग्रह किया जाए कि वह अपनी सरकार की सबसे पहली प्राथमिकताओं में पानी और बिजली को रखें. सांसदों से कहना चाहिए कि वे सरकार से बिजली और पानी को लेकर सक्षम योजनाएं बनाने को कहें.**

सुप्रीम कोर्ट का यह कहना कि जो सरकार पीने का पानी नहीं दे सकती उसे राज करने का हक़ नहीं है, बतलाता है कि समस्या कितनी बढ़ गई है. इसलिए ज़रूरी है कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से आग्रह किया जाए कि वह अपनी सरकार की सबसे पहली प्राथमिकताओं में पानी और बिजली को रखें. सांसदों से कहना चाहिए कि वे सरकार से बिजली और पानी को लेकर सक्षम योजनाएं बनाने को कहें. क्यों न लोग सीधे प्रधानमंत्री को ख़त लिखें कि वह इन समस्याओं को अनदेखा न करें. प्रधानमंत्री को बताना चाहिए कि जहां पानी था भी वहां जलस्तर इतना नीचे चला गया है कि बोरिंग और ट्यूबवेल बेकार हो गए हैं.

यह इसलिए ज़रूरी है कि बारिश का मौसम आ गया है. सरकार को पूरी ताक़त से लोगों को बताना चाहिए कि किन तरीक़ों से जल संरक्षण किया जा सकता है. इसके लिए जो अभियान चलाना हो चलाएं, साथ ही अगली बारिश के लिए पानी को संरक्षित करने की योजना आज से ही बनाएं. योजना बनाने के लिए और कार्यरूप में परिणत करने के लिए तत्काल विशेषज्ञों को इसमें शामिल करना चाहिए.

बिजली के सवाल को, सौर ऊर्जा के सवाल को अब अनदेखा करना अपराध जैसा होगा. देश में नदियों का जाल है. वहां छोटे–छोटे बिजली घर बनाए जा सकते हैं. जिन्होंने सहमति पत्र पर दस्तख़त किए हैं, उन पर दबाव डाल कर उन प्रोजेक्ट्स को पूरा कराना चाहिए.

लेकिन यह तभी हो सकता है जब भारत सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता पानी और बिजली हो. इन दोनों विभागों का पहले सौ दिन और फिर तीन साल का एजेंडा सामने आना चाहिए. ये दोनों विषय बुनियादी तौर पर इंफ्रास्ट्रक्चर से संबंधित हैं, क्योंकि जब ये दोनों नहीं होंगे तो न सड़कें बनेंगी और न संचार का तंत्र बन पाएगा. इन्हें सालों पहले हल कर लिया जाना चाहिए था, पर आज भी शुरुआत हो तो स्वागत होना चाहिए. पिछला रोने से तो काम चलेगा नहीं.

सरकार को यह ज़रूर बताना चाहते हैं कि अगर इन्हें वह अनदेखा करेगी तो वह विरोधी दलों को नहीं, जनता का अपने ख़िलाफ़ खड़े होने का मौका दे देगी. रोटी बिना तो कुछ दिन काम चल सकता है, लेकिन पानी बिना नहीं. आज तो पानी के क्षेत्र में माफिया जैसा तंत्र बन गया है जो पानी को बेच रहे हैं. इन सब स्थितियों से जनता सरकार और सरकारी अधिकारियों को अपने गुस्से का शिकार बना सकती है.

मनमोहन सिंह सरकार, आडवाणी की पार्टी, संसद के सदस्य अगर नहीं चेतते हैं तो उन्हें बिना पानी और बिना बिजली वालों के गुस्से का शिकार बनने के लिए तैयार रहना चाहिए, ऐसे लोग कुछ लाख नहीं हैं, बल्कि सारा देश है. अब भी वक़्त है, कि चेत जाएं.

संपादक

editor.chauthiduniya@gmail.com

संपादक महोदय,

आपका पांच जुलाई का अंक देखने को मिला. आवरण कथा बेहद पसंद आई. लालगढ़ में जो कुछ भी हुआ, या जो हो रहा है, वह निश्चय ही चिंताजनक है. सरकार ने जिस तरह से पूरे मसले पर कार्रवाई की, वह निश्चय ही स्थितियों को और बिगाड़ने वाला रहा.

आपने सही लिखा है कि सरकार को भूख को और ग़रीबी को मारना चाहिए, न कि भूखों को. सवाल यह है कि एक पूरा इलाक़ा आख़िर माओवादियों का साथ क्यों देता है, सरकार को और तंत्र को नकार देता है? ज़ाहिर है कि कहीं–न–कहीं चूक तो हुई ही है.

वंदना शिवा का आलेख आंखें खोलने वाला था. सरकार तो अब सब कुछ बेच देने पर आमादा हो गई है. अगर हम जल्द नहीं चेते, तो मामला बिगड़ेगा ही. खेल पर आपका पन्ना बेहतर था. सायना नेहवाल की जीत ने दिखा दिया है कि अगर इरादे बुलंद हों, तो कोई भी काम मुश्किल नहीं. काश, केवल क्रिकेट पर ही ध्यान न देकर हमारी सरकार और दूसरे खेलों पर भी ध्यान देती. वैसे क्रिकेट पर लिखा आलेख भी पसंद आया.

दिल्ली शहर के बारे में कुछ जानकारी भरी बातों को भी जगह दें.

कीर्ति जैन
सिविल लाइंस
नई दिल्ली

हर संशोधन के साथ कुचली गई संविधान की आत्मा

हमें 25 जून 2009 के अख़बारों की सुर्ख़ियों में बताया गया कि हमारे शक्तिहीन प्रधानमंत्री, जिनकी नियुक्ति हमारे अतिशक्तिसंपन्न राष्ट्रपति के द्वारा की गई है, 1973 के संविधान की आत्मा को पुनर्जीवित करना चाहते हैं. उनका ज़रिया वह कमेटी बनी, जो शायद हमेशा बनी रहे, जिसका काम संविधान में संशोधन करके ज़ुल्फिकार अली भुट्टो के वास्तविक संविधान को वापस लाना है.

1973 में युवा यूसुफ रज़ा गिलानी कहां थे, जब 14 अगस्त को संविधान की इसी आत्मा पर से पर्दा हटाया जा रहा था? उस वक़्त वह संसद में उपस्थित नहीं थे. क्या उन्हें याद है कि जिस व्यक्ति ने इस संविधान की घोषणा की, उसे मार्शल क़ानून लागू करने वाले नागरिक प्रशासक के रूप में याद रखा जाएगा. क्या वह जानते थे कि इसे बहुमत से स्वीकार किया गया था, एकमत से बिल्कुल भी नहीं जैसा कि दावा किया जाता है? उस राष्ट्रीय सम्मेलन में अधिकतर सदस्य संविधान बनाने के लिए काफी उत्सुक थे और किसी भी संविधान से काम चल जाता. इसी वजह से अगले दिन पूरी ख़ुशी और उत्साह से इसकी घोषणा स्वतंत्रता दिवस के दोपहर में कर दी गई. हमारे कितने संविधान विशेषज्ञों और संशोधकों को याद है कि उस मूल संविधान की उम्र महज़ चार घंटे थी? उसी दिन शाम को चार बजे प्रधानमंत्री भुट्टो ने अपने आज्ञाकारी राष्ट्रपति फैजल इलाही चौधरी को एक आदेश पर पर दस्तख़त करने को कहा, जिसकी जानकारी पाकिस्तान के गजट, एक्सट्रा, 15 अगस्त 1973, न. एफ. 24(1)/73 में प्रकाशित है.

> **1973 में युवा यूसुफ रज़ा गिलानी कहां थे, जब 14 अगस्त को संविधान की इसी आत्मा पर से पर्दा हटाया जा रहा था? उस वक़्त वह संसद में उपस्थित नहीं थे. क्या उन्हें याद है कि जिस व्यक्ति ने इस संविधान की घोषणा की, उसे मार्शल क़ानून लागू करने वाले नागरिक प्रशासक के रूप में याद रखा जाएगा.**

इस आदेश के तहत 23 नवंबर 1971 को लगे आपातकाल को तब भी लागू करार दिया गया. इसके पीछे का कारण यह दिया गया था कि जब तक यह आपातकाल लागू था, राष्ट्रपति के पास अपने मूल अधिकारों को बचाने के लिए संवैधानिक उपचारों के अधिकार को निलंबित करने की शक्ति थी और यह निलंबन आपातकाल लागू रहने तक जारी रहता है. अपने अधिकारों को वापस लागू कराने के लिए कोई भी कोर्ट के पास नहीं जा सकता था, क्योंकि उसको वापस बहाल नहीं किया जा सकता था. इस तरह लोगों को उस चार घंटे के अंदर ही दस अहम बुनियादी हक़ों से महरूम कर दिया गया जो 14 अगस्त 1973 को उन्हें दिए गए थे. यह एक सोचा–समझा धोखा था.

इस धोखे के पीछे भुट्टो की मंशा अपने राजनीतिक विरोधियों जैसे खाईर बख़्श मैरी, घोश बख़्श बिजेन्जो, अताउल्लाह मेनगल और वली ख़ान को गिरफ़्तार करा सबक़ सिखाने की थी. इन स्थितियों में इस संविधान और उसकी आत्मा का जन्म हुआ. उसके बाद संविधान में भुट्टो ने संशोधन किए, एक–दो नहीं सात बार. पहला संशोधन 1974 में हुआ, जिसमें 1971 में पूर्वी पाकिस्तान के जाने से हुए नुक़सान को देखते हुए फिर से पूरे इलाक़े को परिभाषित किया गया. दूसरा संशोधन भी 1974 में ही हुआ, जिसमें आबादी के एक हिस्से, अहमदियों के सारे हक़ छीनकर उन्हें अल्पसंख्यक करार दे दिया गया.

1975 के तीसरे संशोधन ने सरकार को किसी भी व्यक्ति को बिना जांच के एक महीने के बजाय तीन महीने तक हिरासत में रखने की ताक़त दे दी. चौथा संशोधन भी 1975 में ही हुआ, जिसने निरोधक क़ानूनों के दायरे को और बढ़ाया. 1976 में पांचवां संशोधन हुआ. इसके तहत न्यायपालिका और कार्यपालिका के संबंध नए सिरे से तय किए गए. साथ ही सुप्रीम और हाई कोर्ट के मुख्य न्यायाधीशों के कार्यकाल तय कर दिए गए. निरोधक क़ानूनों के तहत क़ैद या गिरफ़्तारी से पहले व्यक्ति को ज़मानत देने से हाई कोर्टों को वंचित कर दिया गया. इसके बाद 1977 में छठे संशोधन के तहत सुप्रीम और हाई कोर्ट के मुख्य न्यायाधीशों के लिए क्रमश: पांच और चार साल के कार्यकाल तय कर दिए गए. सातवां संशोधन मई 1977 में हुआ. ज़ुल्फिकार ने इसके साथ ही आने वाले संशोधनों के लिए भी ज़मीन तैयार कर दी. नियमों की प्रक्रिया दूसरे, चौथे, पांचवें, छठे और सातवें संशोधन के समय ही रोक दी गई थी. कोई बहस और मशविरा नहीं हुआ. जिस दिन संशोधन प्रस्ताव पेश हुए, उसी दिन पास भी करा लिए गए.

भुट्टो के पास इतना ही समय था. 1977 की जुलाई की शुरुआत में ही उन्हीं के चुने आर्मी चीफ जिया उल हक़ ने अपदस्थ कर दिया. हम सभी उस कुख्यात आठवें संशोधन के बारे में जानते हैं, जिसके साथ हम आज भी जीने को मजबूर हैं. संविधान पर इसका प्रभाव बहुत बुरा रहा, इससे कुल 58 अनुच्छेदों पर प्रभाव पड़ा और तीन अनुच्छेदों को शामिल किया गया. इनमें से एक पूर्ण रूप से ग़ैर–ज़रूरी था. इसमें महज़ पुराने क़ानूनों को दोहराया गया था. अनुच्छेद 2ए में ऑबजेक्टिव रेसोल्यूशन की व्यवस्था की गई, जिसकी बुराइयों से आज भी यह देश जूझ रहा है, को संविधान की प्रस्तावना को साथ ही परिशिष्टों में भी जोड़ कर एक महत्वपूर्ण हिस्से के तौर पर रखा गया. राष्ट्र को इस बदलाव का बढ़ा नुक़सान झेलना पड़ा.

इसके बाद जुनेजो सरकार का लाया नौवां संशोधन कभी पास नहीं हुआ. दसवां संशोधन भी उसी सरकार के समय का था. जो नेशनल असेंबली और सीनेट के बुलाने और सत्रावासन से संबंधित था. काफी बहस के बाद उसे पास कर दिया गया. ग्यारहवें संशोधन को बेनजीर भुट्टो की पहली सरकार ने पास नहीं किया. बारहवां संशोधन स्पेशल कोर्ट और त्वरित कार्रवाई से संबंधित था. नियमों को ताक पर रख कर नवाज सरकार ने उसे पास करा दिया. तेरहवें संशोधन के तहत आठवें संशोधन को संशोधित किया गया, ताकि नवाज शरीफ के दूसरे कार्यकाल के लिए ज़मीन तैयार रहे. जिस दिन इसे प्रस्तुत किया गया उसी दिन सीनेट और असेंबली में इसे पास कर दिया गया. शरीफ का चौदहवां संशोधन भी 1977 का था. इसके तहत दल–बदल पर रोक लग गई. शरीफ के पंद्रहवें संशोधन से बचने में हम लोग भाग्यशाली रहे. इस संशोधन के तहत शरीफ अपने आपको अमीर–उल–मुमिनीन घोषित करने वाले थे. यह सीनेट में बहस के लिए आ ही नहीं पाया. 1999 के सोलहवें संशोधन ने कोटा सिस्टम को प्रभावित किया, जिसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं थी. उसके बाद जनरल परवेज मुशर्रफ का समय आया. 2002 में आई उनकी सरकार ने 2003 में सत्रहवां संशोधन किया, यही प्रधानमंत्री गिलानी की असल दिक़्क़त है. उनकी समस्या यह है कि उनके आका को इससे कोई परेशानी नहीं है.

कराची, पाकिस्तान से आर्देशिर कवासजी

(लेखक मशहूर स्तंभकार हैं)

feedback.chauthiduniya@gmail.com

हर हद को पार करने का जुनून है सीआईए

रहस्य, रोमांच और देश के लिए ख़तरे मोल लेना, पर्दे पर यही नज़र आती है ख़ुफ़िया एजेंसी की ज़िंदगी. पर्दे पर जो नहीं नज़र आता है, वह है इस ज़िंदगी के लिए बोला जाने वाला झूठ, अपने देश के नाम पर दूसरों को ख़त्म करने के षड्यंत्र और आम ज़िंदगियों से खिलवाड़ करती योजनाएं. सीआईए इस खेल में सबसे आगे है. सीआईए की कहानी की इस आख़िरी कड़ी में नज़र कुछ ऐसी ही बातों पर.

आप क्या कहेंगे अगर कोई आपसे कहे कि फेसबुक एक सीआईए ख़ुफ़िया ऑपरेशन है. क़रीब 20 मिलियन सदस्यों वाली सोशल नेटवर्किंग साइट सीआईए ने शुरू की थी. अगर आप फेसबुक से जुड़े हैं तो जार्ज ओरवेल की 1984 के बिग ब्रदर की तरह कोई आपकी भी हर हरक़त पर नज़र रख रहा है.

या फिर कोई यह कहे कि सीआईए के पास एक ऐसी तकनीक है, जिससे इंसानों का ब्रेनवाश किया जा सकता है. उन्हें ब्रेनवाश करने का उद्देश्य सीआईए के ख़ुफ़िया रहस्यों को सुरक्षित रखना है. आप क्या कहेंगे अगर कोई कहे कि अमेरिका में रहने वाले और उससे ताल्लुक रखने वाले हर शख़्स की पूरी ज़िंदगी लेंगली में सीआईए के मुख्यालय में रखी एक फाइल में कैद है.

हो सकता है कि आप कहें कि सब बकवास है. महज़ कॉन्सपेरेशी थ्योरीज हैं. कोरी कल्पना है, लेकिन दुनिया में कई हैं जो इन बातों में विश्वास रखते हैं. वैसे ये सच हों या कोरी कल्पनाएं, एक बात तो तय है कि इन सभी के बीच एक बात कॉमन है, वह है इनसे उभरती एक रहस्यमयी, ख़तरनाक ख़ुफ़िया एजेंसी की सूरत- सीआईए की सूरत. सीआईए के बारे में ख़ुफ़िया गलियारों में एक कहावत मशहूर है- जिस काम की ज़िम्मेवारी कोई न ले, वह काम सीआईए का होता है. सीआईए भले ही इंकार करती रहे लेकिन उसका नाम दर्जनों ऐसी घटनाओं से जुड़ा है. पिछली आधी सदी में दुनिया में होने वाले बड़े राजनीतिक उलटफेरों, सत्ता-पलट और हत्याओं में सीआईए का हाथ होने के कई सबूत भी मिले हैं.

इराक़ में उसने सद्दाम की बाथ पार्टी को सत्ता में पहुंचाया, लेकिन जब सद्दाम की ख़ुद की महत्वाकांक्षाएं बढ़ने लगीं तो उनको सत्ता से हटाने के लिए भी कुचक्र रचे जाने लगे. वेनेजुएला, ग्रीस, यूक्रेन, जार्जिया, अर्जेंटीना, चिली, अफ़ग़ानिस्तान और ऐसे तमाम देशों में हुए सत्ता-पलटों से सीआईए का नाम जुड़ा. सीआईए भले ही इन सभी मामलों से पल्ला झाड़ती रही हो, लेकिन कुछ मामले ऐसे हैं जिन्हें उसने ख़ुद मान लिया है. सीआईए ने जब सच्चाई को स्वीकार किया तो जो बात सामने आई वह दहला देने वाली थी.

अमेरिका के लेंगली में स्थित सीआईए मुख्यालय : जॉर्ज बुश सीनियर इंटेलिजेंस सेंटर

क्यूबा में बे ऑफ पिग्स की घटना हो या फिर ऑपरेशन मोंगूज़ (जिसमें सीआईए ने व्हाइट हाउस की अनुमति से फिदेल कास्त्रो की हत्या की योजना बनाई), सीआईए ने अपने नंबर वन दुश्मन माने जाने वाले फिदेल कास्त्रो को कमज़ोर करने की हरसंभव कोशिश की. यह अलग बात है कि फिदेल सीआईए की इन सभी योजनाओं से बच निकलते रहे.

उधर, ईरान को कमज़ोर करने के लिए सीआईए ने इराक़ को ईरान से युद्ध के लिए उकसाया और उसकी ख़ुफ़िया मदद भी की. ईरान में अपनी पकड़ बनाने के लिए सीआईए ने कुर्दों की एक पार्टी- पार्टी फॉर फ्री लिविंग-को आर्थिक के साथ हथियारों की भी मदद मुहैया कराई.

इराक़ में उसने सद्दाम की बाथ पार्टी को सत्ता में पहुंचाया, लेकिन जब सद्दाम की ख़ुद की महत्वाकांक्षाएं बढ़ने लगीं तो उनको सत्ता से हटाने के लिए भी कुचक्र रचे जाने लगे. वेनेजुएला, ग्रीस, यूक्रेन, जार्जिया, अर्जेंटीना, चिली, अफ़ग़ानिस्तान और ऐसे तमाम देशों में हुए सत्ता-पलटों से सीआईए का नाम जुड़ा. सीआईए भले ही इन सभी मामलों से पल्ला झाड़ती रही हो, लेकिन कुछ मामले ऐसे हैं जिन्हें उसने ख़ुद मान लिया है. सीआईए ने जब सच्चाई को स्वीकार किया तो जो बात सामने आई वह दहला देने वाली थी. दरअसल 80 के दशक में मध्य में अमेरिकी महादेशों के बीचोंबीच बसे देश निकारागुआ में गृहयुद्ध चल रहा था. व्यापार के रास्ते पर बसे इस देश की अमेरिका के लिए ख़ासी अहमियत थी. वहां के कोंट्रा विद्रोहियों को अमेरिकी मदद मिली थी. कोंट्रा विद्रोही अपने ख़ूंख़ार रवैए के लिए कुख्यात थे, लेकिन सच्चाई का असल खुलासा तब हुआ जब सीआईए के द्वारा लिखे गए कुछ जर्नल सामने आए. ये जर्नल कोंट्रा विद्रोहियों को गुरिल्ला युद्ध और आतंक फैलाने के लिए टार्चर के नए तरीक़ों की शिक्षा देने के लिए किया गया था. जांच हुई तो सीआईए ने यह भी माना कि उसके सिखाए इन तरीक़ों ने कई की जान ली. दरअसल सीआईए कोंट्रा विद्रोहियों के ज़रिए वहां के संसाधनों पर क़ब्ज़ा करना चाहती थी तो वहीं कोंट्रा विद्रोहियों को सीआईए से नशीले पदार्थों के कारोबार में मदद मिलती थी.

एक और उदाहरण-सीआईए ने हाल में ही यह स्वीकार किया था कि उसने आतंकवाद के आरोप में पकड़े गए लोगों को यातनाएं दी थीं और उनकी टेप भी तैयार की थीं.

अब आप ही सोचिए कि ये वह उदाहरण हैं जो सीआईए ख़ुद मान रही हैं. ऐसे में वे बातें कितनी भयानक होंगी, जो सीआईए छुपाती आ रही है. सीआईए के गठन का मक़सद अमेरिकी ज़मीन की सुरक्षा था, लेकिन सीआईए ने अपने तरीक़ों से अमेरिका के लिए कई दुश्मन तैयार किए हैं. वैसे एक बात तो माननी पड़ेगी कि अमेरिकी सुरक्षा के लिए सीआईए हर क़दम उठाने को तैयार रही है. शीत युद्ध के समय जहां उसका काम सोवियत संघ और कम्यूनिज़्म के ख़तरों से अमेरिका को बचाना रहा, वहीं शीत युद्ध के बाद सीआईए ने एशिया, अफ़्रीका और बाल्कन में अमेरिकी दबदबे को बढ़ाने में अपनी ताक़त झोंक दी है. सीआईए एकमात्र ख़ुफ़िया एजेंसी है, जो अपने लिए टोही विमान तक तैयार करती है. उसकी ताक़त का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि सीआईए के पास दुनिया के किसी भी हिस्से में हो रही हरक़त को देखने की क्षमता रखने वाले सैटेलाइट हैं.

दुनिया की सबसे महंगी ख़ुफ़िया एजेंसी ख़तरनाक तो है ही, असरदार भी है और उसके पास हर संसाधन है. ऐसे में कोई आश्चर्य की बात नहीं कि सीआईए अपने नाम से ही सिहरा देती है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

ज़रा हट के

महंगी पड़ी भविष्यवाणी

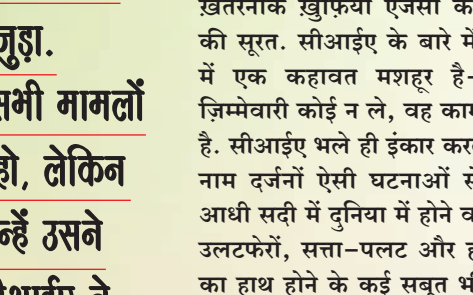

भारत में सत्ता संबंधी भविष्यवाणियों पर भले कोई प्रतिक्रिया न होती हो, लेकिन श्रीलंका में इसकी सत्यता पर सवाल उठाए जाते हैं. ऐसी ही एक कोशिश में श्रीलंका के एक प्रमुख ज्योतिषी धर लिए गए हैं. पकड़े गए ज्योतिषाचार्य हैं- चंद्रश्री बंडारा. वह कोई छोटे-मोटे ज्योतिषी नहीं हैं. श्रीलंका में सेलेब्रेटी ज्योतिषाचार्य हैं. श्रीलंका में कई टीवी चैनलों और अख़बारों के माध्यम से वह लोगों का भविष्य बताते हैं. लेकिन हालात कुछ ऐसे बने कि अब बंजारा ख़ुद अपने भविष्य की फ़िक्र कर रहे होंगे. दरअसल बंडारा से ग़लती यह हो गई कि वह भारतीय चैनलों पर पधार कर जिस तिस की भविष्यवाणी करने वालों की नक़ल कर बैठे. और तो और, भविष्यवाणी के लिए उन्होंने राष्ट्रपति को ही चुन लिया. उन्होंने भविष्यवाणी कर दी कि राष्ट्रपति महिंद्रा राजपक्षे की गद्दी जाने वाली है. उन्होंने विपक्ष की एक बैठक में कह दिया कि अगले सितंबर तक वर्तमान प्रधानमंत्री राष्ट्रपति बन जाएंगे और विपक्ष के नेता प्रधानमंत्री. होना क्या था, बस अगले दिन श्रीलंकाई पुलिस ने बंडारा को गिरफ़्तार कर लिया. पुलिस का कहना है कि उन्हें गिरफ़्तार कर उनसे इस भविष्यवाणी के पीछे के स्रोत के बारे में पूछा जा रहा है.

वैसे उनकी इस भविष्यवाणी पर भरोसा करना ज़रा मुश्किल भी है. हाल के दिनों में लिट्टे और उसके नेता प्रभाकरण के ख़ात्मे के बाद से राष्ट्रपति राजपक्षे की लोकप्रियता चरम पर पहुंच गई है, ऐसे में उनके पतन की आशंका फ़िलहाल तो कतई नहीं दिखती. लेकिन विडंबना देखिए, जो बंडारा राष्ट्रपति राजपक्षे के पतन की भविष्यवाणी कर रहे थे, वह अपनी क़िस्मत में लिखी गिरफ़्तारी को नहीं पढ़ सके.

धरोहरों में हुआ इज़ाफ़ा

संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) ने दो ख़ूबसूरत जगहों को विश्व धरोहरों की सूची में दर्ज़ किया है. इटली की डोलोमाइट पहाड़ियों और जर्मनी व नीदरलैंड के वैडन समुद्री तटीय इलाक़ों को विश्व धरोहरों में शामिल कर लिया गया है. इस बार धरोहरों में चुने गईं दोनों जगहें प्राकृतिक ख़ूबसूरती के वर्ग से शामिल की गई हैं. यूनेस्को ने उत्तरी आलप्स पर्वतों की डोलोमाइट पहाड़ियों को दुनिया की सबसे ख़ूबसूरत पहाड़ियों में से एक कहा है. इसी तरह उसने जर्मनी और नीदरलैंड के वैडन समुद्र से लगे इलाक़े को भी धरोहर का नाम देते हुए कहा कि यह तटीय इलाक़ा विश्व में समुद्री इकोसिस्टम की सबसे धनी जगहों में से एक है. ये दोनों इलाक़े हर साल हज़ारों सैलानियों को आकर्षित करते हैं. अब विश्व धरोहरों में शामिल हो जाने से इनके देखभाल की ज़िम्मेदारी यूनेस्को की विश्व धरोहर समिति की होगी, जो संबंधित देशों की सरकार के साथ मिलकर काम करेगी. इसी के साथ विश्व धरोहरों की संख्या 885 हो गई है. इन 885 धरोहरों में से 684 धरोहरें सांस्कृतिक, 176 प्राकृतिक और 25 मिश्रित वर्ग में हैं. ये धरोहरें 148 देशों में फैली हुई हैं. भारत में 27 विश्व धरोहरें हैं.

धरती को बचाने की कोशिश

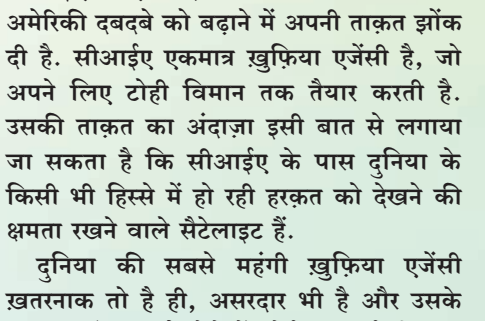

अमेरिका कार्बन-गैस छोड़ने वाले सबसे बड़े देशों में से है. दुनिया में सिर्फ़ चीन ही उससे अधिक कार्बन-गैसों का उत्सर्जन करता है. दुनिया भर में अमेरिका के कार्बन उत्सर्जन को कम करने की मांग उठती रही है.

अच्छी बात यह है कि इसे अब अमेरिका भी मान रहा है और इस संबंध में एक बिल कांग्रेस से पारित हो गया है. अमेरिकी कांग्रेस द्वारा पास किए गए बिल के अनुसार उद्योगों को अपने कार्बन-उत्सर्जन पर लगाम लगानी ही होगी.

इन उद्योगों को आने वाले वर्षों में कार्बन डाई-ऑक्साइड और अन्य कार्बन गैसों के उत्सर्जन को एक सीमा तक कम करना पड़ेगा. बिल के मुताबिक इस गैसों के उत्सर्जन में 2020 तक 17 फीसदी और 2050 तक 83 फीसदी की कमी लानी होगी. इसके लिए उद्योगों को वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का इस्तेमाल करना होगा, ताकि ज़्यादा प्रदूषण करने वाले तेल और कोयले जैसे स्रोतों पर दबाव कम से कम हो सके. अगर यह हो सके तो दुनिया की बिगड़ती सूरत पर बहुत अच्छा असर पड़ेगा. हालांकि इस बिल को अभी अमेरिकी सीनेट में मंज़ूरी मिलनी बाक़ी है, जिसके बाद यह क़ानून की शक्ल ले लेगा.

वैसे इस बिल की राह में भी रोड़े कम नहीं हैं. जहां राष्ट्रपति बराक ओबामा इस बिल का समर्थन कर रहे हैं, वहीं कई लोगों ने इस बिल का ज़ोरदार विरोध किया है. इन लोगों का मानना है कि इस बिल से अमेरिकी उद्योगों की सेहत पर ख़राब असर पड़ेगा, और बड़े पैमाने पर नौकरियां भी जाएंगी.

ईरान में हिंसात्मक कार्रवाइयों का सच

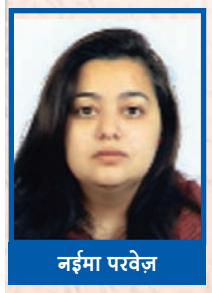

नईमा परवेज़

पाकिस्तान में चल रही हिंसा अभी थमी नहीं है कि उसके पड़ोसी देश ईरान में भी हिंसात्मक कार्रवाइयां शुरू हो गई हैं. दोनों देशों में भड़की हिंसा का परिप्रेक्ष्य अलग है, लेकिन अगर गहराई में जाकर देखें तो इसका स्रोत एक ही है. अमेरिकी, इज़राइली और पश्चिमी मीडिया तेहरान में कुछ नौजवानों द्वारा अयातुल्लाह खामनेई के ख़िलाफ़ बुलंद होने वाले नारों के चित्र बार-बार दिखा रहे हैं. इन सभी देशों के राजनीतिक विश्लेषकों की मानें तो हाशमी रफसंजानी, मोहम्मद खातमी और मीर हुसैन मौसवी का गठबंधन एक ऐसी क्रांति की शुरुआत करेगा जिसे अगर पश्चिमी और अरब दुनिया का समर्थन मिल गया तो यह कई दशकों पहले होने वाले ईरानी इंक़लाब की कमज़ोर पड़ती इमारत को ढहाने में कामयाब हो जाएगा. पश्चिमी मीडिया का विश्लेषण अपनी जगह, सच्चाई यह है कि असल झगड़ा अहमदीनेज़ाद और मौसवी का नहीं बल्कि रफसंजानी और खामनेई का है. और यही वजह है कि मौसवी ने अहमदीनेज़ाद को पूरा समर्थन देने वाले खामनेई को नज़रअंदाज़ करके क़ौम शहर में मौजूद ताक़तवार धार्मिक नेतृत्व से सीधे हस्तक्षेप की गुहार लगाई है. अरब सूत्रों के अनुसार क़ौम से कम से कम एक प्रभावशाली धार्मिक नेता अयातुल्लाह सिनाई का समर्थन उन्हें प्राप्त हो गया है.

अयातुल्ला खामनेई

इन सब से अलग हट कर अगर देखें तो ईरान के राष्ट्रपति के चुनाव में धांधली का इल्ज़ाम लगा कर अहमदीनेज़ाद की पोज़ीशन को विवादास्पद और कमज़ोर करने की अमेरिकी और इज़राइली कोशिश एक हद तक सफल हुई है. लेकिन इन सब के चलते ईरान में ऐसी परिस्थितियां पैदा हो जाएं कि वह एक बार फिर अमेरिका की झोली में जा गिरे, कम से कम क़रीबी भविष्य में ऐसी स्थिति नज़र नहीं आती. ईरान में चल रही राजनीतिक उथल-पुथल का इतिहास बहुत पुराना है और चुनाव के बाद होने वाली हिंसा को उसी संदर्भ में देखा जाना चाहिए. आम धारणा यह है कि ईरान में 1979 में जो इस्लामी इंक़लाब आया था उसके सर्वेसर्वा अयातुल्लाह खुमैनी थे. पहली बात तो यह है कि यह धारणा पूरी तौर से सही नहीं है. ईरान में 1979 में होने वाली क्रांति की बुनियाद 1954 में सोशलिस्ट लीडर और प्रधानमंत्री रहे मुसाद्दीक़ ने रखी थी, जब उन्होंने ईरान के बादशाह रज़ा शाह पहलवी की नीतियों का विरोध करते हुए तेल की सभी कंपनियों का राष्ट्रीयकरण किया था. इस बात को लेकर न सिर्फ़ ईरान के बादशाह बल्कि खाड़ी के सभी देशों को अपनी बपौती समझने वाली अमेरिकी सरकार ने मुसाद्दीक़ के विरुद्ध साज़िशें शुरू कर दीं और आख़िरकार मुसाद्दीक़ को संदिग्ध हालात में रास्ते से हटा दिया गया. लेकिन जिस क्रांति की नीव उन्होंने रख दी थी, वह ईरान के युवाओं के मन में पनपती रही जो 70 के दशक में अपनी चरम सीमा पर जा पहुंची. ईरान में 1979 का इंक़लाब पूरी तौर से वामपंथी था और इसके पक्के सबूत मौजूद हैं. अमेरिका और पश्चिमी देशों ने जब यह देखा कि उनके चहेते शाह की पकड़ कमज़ोर होती जा रही है और वामपंथी पूरी तौर से बड़ी उलटफेर के लिए तैयार हैं, तो उन्होंने इंक़लाब को एक तरह से हाईजैक करने की ठान ली. अयातुल्लाह खुमैनी उस वक़्त पेरिस में पनाह लिए हुए थे और धार्मिक गुटों में उनकी छवि शाह विरोधी के तौर पर थी. अमेरिका और उसके पिछलग्गुओं को लगा कि वामपंथियों के मुक़ाबले में धार्मिक लोगों से डील करना आसान होगा और इसी के चलते उस पूरे इंक़लाब को एक धार्मिक रंग देने का काम शुरू हो गया. तेहरान यूनिवर्सिटी के वामपंथी छात्रों द्वारा शुरू किया गया आंदोलन अपनी चरम सीमा पर पहुंचने तक उनके हाथ से निकल गया और उसका पूरा कंट्रोल धार्मिक नेताओं के हाथ में आ गया, या यूं कहिए कि दे दिया गया. यहां एक बात और महत्वपूर्ण है कि अगर ईरान में इंक़लाब की बागडोर वामपंथियों के हाथ से न निकली होती तो उससे अगले दशक में अफ़ग़ानिस्तान से सोवियत यूनियन की वापसी भी इतनी आसान न होती. इंक़लाब के बाद ईरान में धार्मिक संगठनों के हाथों मारे जाने वालों में भी अधिक संख्या वामपंथियों की थी. अब खुमैनी और अमेरिका के बीच मतभेद क्यों हुई, इसकी एक अलग कहानी है, लेकिन सच यह है कि मार्ग बार अमेरिका (अमेरिका के लिए मौत) का नारा ईरान के धार्मिक संगठनों ने बहुत बाद में दिया. ईरान में धार्मिक संगठनों की पकड़ सत्ता पर कमज़ोर होती जा रही है, यह बात सच है. अहमदीनेज़ाद की छवि एक धार्मिक नेता से ज़्यादा एक सुधारक की है. उन्होंने अपने पिछले कार्यकाल में ग़रीब आवाम का जीवनस्तर उठाने के लिए जो काम किए हैं, उसके चलते उन्हें भारी सफलता मिलना आश्चर्यजनक उन लोगों के लिए हो सकता है जो अमेरिकी राजनीतिक विश्लेषकों और पश्चिमी मीडिया पर आंखें बंद कर के यक़ीन कर लेते हैं. अमेरिकी और पश्चिमी देशों की अहमदीनेज़ाद से नाराज़गी की वजह यह है कि उन्होंने कॉरपोरेट वर्ल्ड को ईरान में अपने पांव टिकाने की जगह देने से इंकार कर दिया है. उनकी नीतियां वे ही हैं जो एक सोशलिस्ट देश की होनी चाहिए. वह सामाजिक न्याय की बात करते हैं और यही वजह है कि ईरान का पिछड़ा और ग़रीब तबक़ा उनके साथ है. शायद बहुत कम लोगों को पता हो कि अहमदीनेज़ाद को पूरा समर्थन दे रहे धार्मिक नेता अयातुल्लाह खामनेई मॉस्को के एक विश्वविद्यालय पैट्रिस लुमुंबा यूनिवर्सिटी के पढ़े हुए हैं और एक धार्मिक नेता होने के बावजूद अपनी वामपंथी विचारधारा के लिए जाने जाते हैं. इन हालात में अहमदीनेज़ाद की जीत से अमेरिका और उसके पिछलग्गुओं की परेशान होने वाली सोच का अंदाज़ा सहज ही लगाया जा सकता है. ईरान का पिछड़ा और ग़रीब तबक़ा अहमदीनेज़ाद के साथ खड़ा हुआ है. परेशानी सिर्फ़ वहां के अमीर लोगों को है, जो तथाकथित खुली आर्थिक नीति के हामी हैं ताकि अमेरिकी और पश्चिमी कंपनियों को ईरान में खुले तौर पर काम करने की आज़ादी मिल जाए और वे भी उस लूट में शामिल हो सकें जो इन कंपनियों ने तीसरी दुनिया के सारे देशों में मचा रखी है. रूस और चीन ने अहमदीनेज़ाद की जीत पर अमेरिका और पश्चिमी देशों की बेचैनी को महसूस करते हुए इन देशों को ईरान के मामलों से अलग रहने की चेतावनी भी दी है. अब ज़रा एक नज़र उस चुनाव पर, जिसमें धांधली के इल्ज़ाम लगाए गए हैं. ईरान में 2006 में होने वाली जनगणना के अनुसार देश की आबादी 70.5 मिलियन थी. इसमें एक चौथाई लोग 15 वर्ष या इसके आसपास के लपेटे में हैं. ईरान की कुल आबादी का एक बटे पांच हिस्सा ग्रेटर तेहरान में आबाद है, जो मध्य एशिया का सबसे बड़ा शहर और आबादी के लिहाज़ से दक्षिण-पश्चिम एशिया का दूसरा सब से बड़ी आबादी वाला शहर है. अहमदीनेज़ाद के विरुद्ध होने वाले प्रदर्शनों का केंद्र तेहरान रहा है. लेकिन तेहरान पूरे ईरान की नुमांदगी नहीं करता. तेहरान अपने आप में एक अलग दुनिया है. जिस किसी को भी ईरान के सामाजिक और राजनीतिक हालात को समझना है उसे तेहरान के और ख़ास तौर से उत्तरी तेहरान के विशेष स्वरूप को समझना ज़रूरी है, जहां से अधिकतर पश्चिमी मीडिया के लोग रिपोर्टिंग करते रहे हैं. यह इलाक़ा यानी उत्तरी तेहरान उन लोगों का है जो शाह ईरान के शासन के ख़त्म होने के 30 साल बाद भी तेहरान को पूरब का पेरिस बनाने के सपने देखते हैं. किसी भी अमेरिकी या पश्चिमी मीडिया के नुमाइंदे ने इस इलाक़े के अलावा कहीं और से लोगों की राय जानने में रुचि नहीं दिखाई और पूरे चुनाव पर एकतरफ़ा रिपोर्टिंग करते रहे हैं.

हाशमी रफसंजानी

1979 का इंक़लाब वामपंथियों के हाथ से निकल गया था. इस बार ऐसा होने की संभावना नहीं है. ईरान की जनता बेहद जागरूक है और वह धर्म के नाम पर अमेरिकी खेल का हिस्सा बनने को तैयार नहीं है. सिवाय उन लोगों के जो अमेरिकी जाल में फंस चुके हैं. लेकिन उन्हें ईरानी विचारक, साहित्यकार और कवि शेख सादी की यह कथा याद रखनी चाहिए-दुश्मन की सलाह मानना गंभीर ग़लती है, उसे सुनने में कोई हर्ज नहीं है और उस सलाह के विपरीत कार्य करना बिल्कुल सही और अति आवश्यक है !!

feedback.chauthiduniya@gmail.com

कश्मीर पर हिलेरी का एजेंडा

- *आतंकवादियों और अतिवादियों के ख़िलाफ़ चल रही लड़ाई का हिस्सा उन लोगों का हृदय परिवर्तन भी है, जिनमें से आतंकवादी बनाए जाते हैं...और अगर 22 से 25 साल के कुछ पुरुष और महिलाएं काहिरा या लाहौर में मेरी या किसी और अमेरिकी की बातें सुनकर यह कहते हैं-मैं इनकी किसी भी बात से सहमत नहीं हूं, लेकिन लगता है कि वे जानते हैं कि मैं कौन हूं या वे आर्थिक विकास या सहनशीलता या सबको साथ लेकर चलने की बात के पक्षधर हैं, तो शायद उनके आतंकवादी बनाने वालों की बातों में आने की संभावना कम हो जाती है.*
- *हमारा बहुत बड़ा रणनीतिक और राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़ा हित इसमें है कि पाकिस्तान स्थिर रहे और उसकी परिणति एक परमाणु क्षमता से लैस आतंकी राज्य के रूप में न हो.*

सीमा मुस्तफ़ा

अमेरिकी राष्ट्रपति बराक हुसैन ओबामा की विदेश नीति को इन दोनों बयानों में पढ़ा जा सकता है. ये बातें उन्होंने काहिरा से मुस्लिम जगत को दिए अपने संदेश के ठीक पहले एक साक्षात्कार के दौरान कही थीं. पाकिस्तान और अफ़ग़ानिस्तान में लगातार बढ़ रही अमेरिकी सेना का मुद्दा ओबामा के काहिरा भाषण में शामिल नहीं किया गया. यह भाषण महज़ ईरान और अरब देशों तक ही सीमित रहा. लेकिन वाशिंगटन से ऐसे कई संकेत दिए जा चुके हैं, जिससे साफ है कि अमेरिकी नीति में आधारभूत परिवर्तन हुए हैं. यह भी साफ है कि ये परिवर्तन पाकिस्तान के पक्ष में हैं, अफ़ग़ानिस्तान समस्या को हल करने के लिए हैं और ईरान, रूस और ख़ासकर चीन से एक बेहतर संबंध बनाने के लिए हैं. इन सब के बीच ख़ास बात यह है कि कश्मीर मुद्दा एक बार फिर अमेरिकी राष्ट्रपति के लिए अहम हो चुका है और यह बात उन्होंने राष्ट्रपति पद की शपथ लेने के पहले ही साफ कर दी थी कि वह पाकिस्तान और भारत के बीच बेहतर संबंध बनाने की कोशिश करेंगे. और, कश्मीर मुद्दे को हल करने की कोशिश इसलिए करेंगे क्योंकि वहां मुद्दा भारत नहीं बल्कि वहां के आतंकवादी हैं.

अमेरिकी विदेश नीति में हुए इस बदलाव को मनमोहन सिंह सरकार अभी समझने की कोशिश कर रही है. ज़ाहिर है, मामला पेचीदा है, क्योंकि नई नीति दक्षिण एशिया में भारत के महत्व को कम करने के साथ-साथ संबंधों को पुनर्परिभाषित करेगी. जहां एक तरफ़ पूर्व राष्ट्रपति बुश की नीति साफ तौर पर भारत के पक्ष में थी और इस क्षेत्र में भारत के लिए एक अहम किरदार की पक्षधर थी. वह चाहे क्षेत्र में आतंकवाद के ख़िलाफ़ जारी जंग हो, या ईरान को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नज़रअंदाज़ करने की कवायद हो या फिर चीन की बढ़ती शक्ति के ख़िलाफ़ मोर्चाबंदी हो, भारत इन सभी मामलों में अमेरिकी नीति में बतौर एक क्षेत्रीय शक्ति शामिल रहा. आज अमेरिकी नीति बदलाव से गुज़र रही है. अमेरिका ईरान से बेहतर रिश्ते बनाने की कवायद में लगा है, चीन के लिए उसका नज़रिया बदल रहा है. अमेरिका ने फिलीस्तीन मामले में भी सख्ती दिखाई है और इज़राइल को साफ हिदायत दे दी है कि वह फिलीस्तीनी इलाक़ों में इज़राइली नागरिकों को बसाना बंद करे. इसके साथ ही ओबामा प्रशासन साफ संकेत दे रहा है कि वह इस मुद्दे को हल करने के लिए अरब देशों के सुझाए दो राष्ट्रों की नीति को उचित मानता है और वह इज़राइल पर इसे मानने के लिए दबाव डालने के लिए तैयार है. इज़राइल फिलीस्तीन नीति में हुए इस बदलाव की पहली झलक चीन और रूस समर्थित शंघाई कॉरपोरेशन की बैठक में दिखी, जिसमें एक उच्चस्तरीय अमेरिकी दल ने हिस्सा लिया. इस कॉरपोरेशन की अहमियत अमेरिका की अफ़-पाक नीति के मद्देनज़र भी काफी अहम होने के संकेत हैं. जिसके चलते प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी 15 जून की शंघाई कॉरपोरेशन की बैठक में हिस्सा लिया.

यूपीए सरकार ने अपने पहले कार्यकाल में बुश प्रशासन की नीतियों को आगे बढ़ाया, और इसके लिए प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बुश ने कई बार मुलाक़ात कर एक-दूसरे के प्रति अपनी भावनाओं का इज़हार किया और उन अमेरिकी नीतियों को बेहतर करने की कोशिश की. अमेरिका में सत्ता परिवर्तन हुआ, लेकिन भारत में दोबारा मनमोहन सिंह की सरकार बनी. आज, अमेरिकी नीति में परिवर्तन हो रहा है और भारत ख़ुद को इस बदलाव से अलग पा रहा है, उसकी वह अहमियत भी ख़त्म हो चुकी है जो बुश काल की नीतियों में उसे मिली थी. जहां एक तरफ़ बराक ओबामा पाकिस्तान से संबंध सुधारने के लिए इस्लामाबाद से लगातार संवाद में है, वहीं नई दिल्ली के लिए ओबामा की कोई वास्तविक पहल नहीं हुई है. ज़ाहिर है, पाकिस्तान से बढ़ती अमेरिकी नज़दीकी नई दिल्ली के लिए परेशानी का सबब है. इससे भी ज़्यादा, अमेरिका की नई नीति में भारत का महत्व इस कारण से भी कम हो रहा है कि अमेरिका अब चीन और ईरान से सीधा संबंध साध रहा है. अमेरिका की अफ़-पाक नीति से भी यह साफ है कि वह इस क्षेत्र में चीन को ख़ास अहमियत दे रहा है. यह बात अब छिपी नहीं है कि पहले अमेरिका अफ़-पाक नीति में भारत को भी शामिल कर रहा था, लेकिन भारत के भारी विरोध और गुटबाज़ी के कारण उसे अपना फ़ैसला बदलना पड़ा.

ओबामा प्रशासन ने पाकिस्तान को दी जाने वाली आर्थिक सहायता को तीन गुणा किए जाने की कोशिश में एक बात साफ कर दी है कि वह पाकिस्तान के ख़िलाफ़ किसी तरह के कठोर क़दम उठाने नहीं जा रहा है. जिस तरह से सीनेट में लाए गए विधेयक में शब्दों के साथ हेर-फेर किया गया उससे भी यह साफ है कि अमेरिकी दक्षिण एशिया के इस भाग में पाकिस्तान की अहमियत को कम करने के बजाय उसे केंद्र में रखने की सोच रहे हैं.

वहीं ईरान पहले से ही अमेरिका के साथ संवाद में है. सूत्र बताते हैं कि अहमदीनेज़ाद की जीत से तेहरान की आशाएं बढ़ीं हैं और बराक ओबामा को करज़ई सरकार के पक्ष में आने के लिए मना लिया गया है. तेहरान ने अपनी तरफ़ से यह पहल कर दी है कि भारत, अफ़ग़ानिस्तान और ईरान की त्रिकोणीय शिखर बैठक इस साल के अंत तक बुलाई जाए. ईरान के विदेश मंत्री मनुचेहर मुत्तकी के अगले महीने के भारत दौरे का मक़सद प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को अफ़ग़ानिस्तान मामले पर त्रिकोणीय शिखर बैठक की तैयारी करने की शुरुआत ही है. इसके साथ ही ईरान शंघाई कॉरपोरेशन में ज़ोर-शोर से हिस्सा ले रहा है. ज़ाहिर है, अमेरिका अपनी अफ़-पाक नीति के लिए इस क्षेत्रीय संगठन की सहमति लेने को जहां ज़्यादा महत्व दे रहा है, वहीं भारत ने फ़िलहाल इस संगठन से अपनी दूरी बना रखी है. ख़ासतौर पर, हाल ही में ईरान और पाकिस्तान ने गैस पाइपलाइन समझौते पर तुर्की में सहमति बना ली है. सूत्रों के मुताबिक इस समझौते में भारत को तीसरे देश के रूप में शामिल करने का प्रावधान रखा गया. ईरान को इस बात का भरोसा है कि अमेरिका की बदलती नीति के चलते जल्द ही भारत पाइपलाइन समझौते में शामिल हो जाएगा. इसके मद्देनज़र, अमेरिकी विदेश मंत्री हिलेरी क्लिंटन का जुलाई का प्रस्तावित भारत दौरा अहम हो जाता है. हालांकि, दोनों देशों के बीच उच्चस्तरीय बैठकों का दौर जून से ही शुरू हो चुका है. अमेरिका के राजनीतिक मामलों के मंत्री विलियम बर्न्स के हाल के दौरे से यह साफ हो चुका होगा कि हिलेरी अपने साथ किन मुद्दों को लेकर आने वाली हैं और यहां से तमाम मुद्दों पर भारत सरकार का पक्ष लेकर वापस जाएंगी. ज़ाहिर तौर पर कश्मीर मुद्दा हिलेरी के लिए अहम है. इसलिए कि ओबामा प्रशासन कहीं न कहीं पाकिस्तानी पक्ष से इत्तेफाक रखता है कि पाकिस्तान को पूर्वी छोर पर तालिबानियों से लड़ने के लिए अपने पश्चिमी छोर से किसी तरह का ख़तरा न महसूस हो. पाकिस्तानी पक्ष के मुताबिक ऐसा तभी मुमकिन है जब भारत के साथ शांति वार्ता एक बार फिर से शुरू की जाए और कश्मीर मुद्दे को केंद्र में रखकर उसी के दायरे में शांति वार्ता को आगे बढ़ाया जाए. अमेरिका भी यह मानता है कि हिलेरी क्लिंटन जुलाई में प्रस्तावित भारत दौरे पर इस बात पर ज़ोर देंगी.

भारत के पूर्व राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ब्रजेश मिश्र मानते हैं कि अमेरिका ज़ाहिर तौर पर जुलाई में कश्मीर मामले को उठाएगा, लेकिन भारत सरकार यह स्पष्ट कर चुकी है कि वह बातचीत की शुरुआत तब तक नहीं करेगी जब तक मुंबई के 26/11 के दोषियों को सज़ा नहीं दी जाती. हालांकि, उन्होंने सरकार के ढुलमुल रवैए की आशंका भी जताई. पाकिस्तान मामले में यूपीए सरकार का ढुलमुल रवैया शुरू से ही जगज़ाहिर है. अपने पहले वक्तव्य कि भारत, पाकिस्तान से बातचीत बिना 26/11 के दोषियों को सज़ा दिए नहीं करेगा, को विदेश मंत्री एस.एम कृष्णा ने ख़ुद अपने बयान से नकार दिया और कह दिया कि भारत, पाकिस्तान के साथ वार्ता के लिए कटिबद्ध है.

एस.एम. कृष्णा के विदेश मंत्री बनने के बाद हिलेरी क्लिंटन ने उनसे फोन पर बातचीत की थी, लेकिन वह बातचीत निजी और गोपनीय रही. जो लोग कश्मीर मामले पर नज़र गड़ाए बैठे हैं, उनके लिए राष्ट्रपति ओबामा के काहिरा भाषण में महज़ एक बात है. उनका यह कहना कि मानवाधिकार को अहमियत दी जाएगी और हिलेरी क्लिंटन का 21वीं सदी के लिए स्टेटक्राफ्ट महज़ सरकारों के बीच नहीं होगा, बल्कि उसे सरकार और नागरिकों और नागरिकों के बीच समन्वय पर ज़ोर दिए जाने को लेकर होगा. हमें यह भी नज़रअंदाज नहीं करना चाहिए कि ओबामा ने मुस्लिम देशों को दिए अपने संदेश में कश्मीर का भी ज़िक्र नहीं किया. मतलब साफ है कि अमेरिका ने भारत की संवेदनाओं का पूरा ध्यान रखा है, और यह ध्यान महज़ तब तक है जब तक कि अमेरिका की अफ़-पाक नीति के सामने कोई रोड़ा नहीं आता, और उस पर किसी तरह की रुकावट आने पर अमेरिका किसी भी तरह की संवेदना को नकार सकता है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

हल्के में न लें सीने के दर्द को

कहते हैं कि बीमारी और शत्रु को कभी कम नहीं आंकना चाहिए. लेकिन यह दूसरी बात है कि लोग अक़्सर इन्हें हल्के में ही लेते हैं. जो ऐसी भूल करते हैं, वे भारी संकट में पड़ जाते हैं. अब दिल को ही लीजिए. बड़ा नाज़ुक होता है यह. इसमें कुछ भी ख़राबी हो जाए तो लोग बेचैन हो जाते हैं. फिर भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो सीने के दर्द को हल्के में लेते हैं. वे ख़ुद अपनी जान से खिलवाड़ करते हैं. भारत में हृदयाघात के मरीज़ों की संख्या तेज़ी से बढ़ रही है. अगर इसी रफ़्तार से इनकी संख्या बढ़ती रही तो स्थिति दयनीय हो सकती है. वैसे पूरे विश्व में बहुत तेज़ी से लोग इस बीमारी की गिरफ़्त में आ रहे हैं. अगर यह कहा जाए कि दुनियाभर में यह बीमारी आम होती जा रही है, तो ग़लत नहीं होगा. हालात ये हैं कि अब युवा भी इसकी चपेट में आ रहे हैं. ग़ौरतलब है कि पश्चिमी देशों की तुलना में भारतीय युवाओं में यह बीमारी दोगुनी तेज़ी से बढ़ रही है. विश्व स्वास्थ्य संगठन की ताज़ा रिपोर्ट के अनुसार भारत में इस समय पांच करोड़ हृदयरोगी हैं और 2010 तक यह आंकड़ा दोगुना हो जाएगा. यानी 2010 में हृदयरोगियों की संख्या बढ़ कर दस करोड़ हो जाएगी. तब दुनिया के 60 प्रतिशत रोगी भारतीय होंगे.

माइयोकार्डिनल इंफ्रेक्शन या एक्यूट माइयोकार्डिनल इंफ्रेक्शन को ही हृदयाघात के नाम से जाना जाता है. यह तभी होता है जब दिल के किसी हिस्से में ख़ून की आपूर्ति में अवरोध उत्पन्न हो जाता है. यानी हृदय के मांसपेशियों में जब ख़ून के प्रवाह के दौरान रुकावट उत्पन्न होती तो यह कहा जाता है कि उसे दिल का दौरा पड़ा है. अगर हृदय में ख़ून का प्रवाह तुरंत पुन: शुरू नहीं हो पाया तो ऑक्सीजन के अभाव में उस व्यक्ति की मौत तक हो सकती है. बहुत अधिक मामलों में दिल का दौरा कोरॉनरी आर्टेरी के भीतरी सतह में मोटे पदार्थ, जिसे प्लक कहते हैं, जमा हो जाता है. इसी के द्वारा हृदय में ख़ून और ऑक्सीजन पहुंचता है.

चिंता की बात यह है कि दिल का दौरा पड़ने की औसतन आयु भी घट रही है और कम होकर 40 से 30 पर आ गई है. हालांकि युवाओं में इस बीमारी के बढ़ने का प्रमुख कारण शहरी जीवनशैली है. इसमें खानपान की आदतें, फिजिकल वर्क नहीं करना, धूम्रपान, शराब पीने के अलावा तनाव से रक्तचाप बढ़ने, उच्च कोलेस्ट्रॉल और मधुमेह शामिल हैं. इन वजहों से दिल का दौरा पड़ने की आशंका कई गुना बढ़ जाती है. वैसे एक बात साफ है कि अगर आप इससे बचना चाहते हैं तो लाइफ स्टाइल में बदलाव लाना ज़रूरी है. हृदयाघात का जो सबसे सामान्य लक्षण है, वह यह कि सीने में तेज़ दर्द होता है. उस समय यह बहुत ही पीड़ादायक होता है. सीने में भारीपन का अहसास होता है. यह दर्द धीरे-धीरे शरीर के विभिन्न हिस्सों में फैलता जाता है. इसलिए जब भी इसकी शिकायत हो, तुरंत डॉक्टर से सलाह लें. इसके अलावा बहुत से लोगों में अन्य तरह के लक्षण भी देखे गए हैं. जैसे पेट के ऊपरी हिस्से में दर्द, सीने में जलन, अधिक पसीना आना, सांस लेने में कठिनाई, दिल की धड़कनें अचानक बढ़ जाना, बहुत कमज़ोर और थका हुआ महसूस करना, आलस्य और बेहोशी. वैसे यह कतई ज़रूरी नहीं है कि दिल का दौरा पड़ने के समय सीने में दर्द ही हो. कुछ मामलों में जैसे महिला, बुजुर्ग और वयस्क जिन्हें मधुमेह है, उन्हें सीने में बहुत तेज़ दर्द नहीं होता है. ऐसे लोगों को दिल का दौरा पड़ते समय सांस लेने में कठिनाई आती है. वे पेट में दर्द, कमज़ोरी और बेहोशी महसूस करते हैं.

सावधानी

हृदयाघात दिल की बीमारी है, इससे कमोबेश काफी लोग प्रभावित हैं. लेकिन आप इसे रोक सकते हैं. इसके लिए आपको कुछ अनुशासन रखने ही पड़ेंगे-

1. **सिगरेट पीना बंद कर दें. उसमें भी सेकेंड हैंड स्मोकिंग तो बिल्कुल भी नहीं.**
2. **दिल को स्वस्थ रखने वाले आहार लें. जैसे मछली, फल, हरी सब्जी, बीन्स और ओलिव ऑयल.**
3. **रोज़ाना कसरत करें. कौन-सी कसरत करनी है, इस बारे में अपने डॉक्टर से सलाह अवश्य लें.**
4. **अपने ब्लड प्रेशर और कोलेस्ट्रॉल को कम करें.**
5. **अगर आप मधुमेह के मरीज़ हैं तो ब्लड शुगर को सामान्य स्तर के क़रीब रखें.**
6. **चिंता आपके हृदय को नुक़सान पहुंचा सकती है.**
7. **अगर आपको डॉक्टर ने रोज एस्प्रिन लेने की सलाह दी है, तो गोली रोज़ लें.**
8. **आप अपनी सभी दवाइयों को सही से रखें, ताकि ज़रूरत पड़ने पर आसानी से मिल जाएं.**

कुछ नुस्ख़े

कहते हैं कि इलाज से बेहतर परहेज होता है. इसलिए शुरू से ही सावधानी बरतनी चाहिए. वैसे कुदरत ने हमें बहुत कुछ दिया है. प्रकृति में ही ऐसे बहुत से पेड़-पौधे मौजूद हैं, जिनके उपयोग से हम अपनी सेहत का ख़याल रख सकते हैं. लेकिन यह विडंबना है कि इसकी जानकारी बहुत कम लोगों को होती है. हृदयाघात के मुख्य कारण माने जाने वाले रक्तचाप, कोलेस्ट्रॉल और मधुमेह पर नियंत्रण करने के लिए आप इन प्राकृतिक उपचारों को आजमा सकते हैं.

1. कोलेस्ट्रॉल को कम करने के लिए दस ग्राम पुदीने का काढ़ा बनाएं और रोज़ सुबह ख़ाली पेट गरम करके पिएं.
2. तीन ग्राम हल्दी पाउडर को गर्म दूध के साथ लेने पर भी कोलेस्ट्रॉल कम होता है.
3. लहसन की दो फांक सुबह ख़ाली पेट पानी के साथ लेने से कोलेस्ट्रॉल क़ाबू में रहता है.
4. दिल के मरीज़ों को अक़्सर कम वसा, कम कार्बोहाइड्रेट और कम प्रोटीन वाला भोजन लेना चाहिए.
5. सेब और अनार का जूस व आंवले का मुरब्बा दिल को ताक़त देता है. इन प्राकृतिक उपचारों के अलावा नियमित परहेज से रहना चाहिए. व्यायाम और डॉक्टरों से नियमपूर्वक जांच कराने की सलाह भी दी जाती है. एक बात हमेशा याद रखें कि सीने के दर्द को कभी हल्के में न लें.

एस्प्रिन टैबलेट

वयस्कों में दिल का दौरा पड़ने का ख़तरा कम करने के लिए ली जाने वाली सामान्य एस्प्रिन नहीं बल्कि 75 से 81 मिलीग्राम वाली एक बेबी एस्प्रिन हर रोज़ लेना ही काफी हो सकता है, लेकिन 45 साल से कम उम्र के पुरुषों और 55 साल से कम उम्र की महिलाओं के लिए दिल का दौरा पड़ने के ख़तरे से बचने के लिए एहतियाती तौर पर सिर्फ़ एस्प्रिन थैरेपी का रास्ता अपनाना ठीक नहीं है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बचें हरपीज से

अपनी सुंदर व चमकती-दमकती त्वचा से सभी को प्यार होता है. कुछ लोग इसका पूरा ख़याल रखते हैं, जबकि कुछ लोग त्वचा पर होने वाली बीमारियों को मामूली परेशानी मानकर नज़रअंदाज़ कर देते हैं. क्या आप जानते हैं कि त्वचा संबंधी इस प्रकार की लापरवाही आपके लिए काफी नुक़सानदेह और ख़तरनाक भी हो सकती है. विक्रम को ही ले लीजिए उसे मामूली बुख़ार था और जब वह सुबह उठा तो उसे अपने होठों पर तेज़ जलन महसूस हुई. उसने उंगलियों से टटोला तो उसे एक ही कतार में कई दाने महसूस हुए.

उसने यह सोचकर उस पर अधिक ध्यान नहीं दिया कि सोते वक़्त या तो किसी कीड़े ने काट लिया होगा या कोई मकड़ी मल गई होगी. दानों को नज़रअंदाज़ करके वह रोज़ की तरह काम में लग गया, लेकिन कुछ ही समय बाद उसे महसूस हुआ कि छोटे से दाने छाले बन चुके हैं और उनमें पानी सा कुछ तरल भर गया है. उसे छालों वाली जगह पर जलन, दर्द और खुजली भी महसूस हो रही थी. उसके बाद विक्रम फौरन त्वचा रोग विशेषज्ञ के पास पहुंचा. डॉक्टर ने उसे बताया कि ये छाले किसी कीड़े के काटने से नहीं हैं, बल्कि लेवइयाल हरपीज है, यानी होठों का हरपीज.

क्या है हरपीज

हरपीज त्वचा का एक रोग है, जो कि वायरस के शरीर में प्रवेश करने के कारण फैलता है. इस वायरस के कारण त्वचा पर एक ही साथ कई छाले पड़ जाते हैं.

त्वचा में सूजन भी आ जाती है. प्रतिरोध क्षमता कमज़ोर होने के कारण त्वचा संबंधी यह रोग बार-बार परेशान करता है. इतना ही नहीं, इन छालों में पानी भर जाता है और कभी-कभी पस भी भर जाता है.

हरपीज के मुख्य प्रकार

आमतौर पर होठों का हरपीज यानी लेवइयाल हरपीज की बीमारी क़रीब 70 प्रतिशत से भी अधिक बच्चों, किशोरों और वयस्कों को कभी न कभी ज़रूर होती है. होठों का हरपीज सिंपलेक्स नामक वायरस के कारण फैलता है. यह वायरस शरीर में प्रवेश करने के बाद ख़ून के रास्ते आमतौर पर होठों पर वार करता है. इसके कारण होठों पर एक ही साथ कई छाले व सूजन हो जाती है. यदि आपके शरीर में हरपीज का वायरस मौजूद है और आप अत्यधिक मानसिक या शारीरिक तनाव में होते हैं, तो यह वायरस सक्रिय हो जाता है और त्वचा पर छालों के रूप में उभर आता है. बार-बार हल्का बुख़ार होने पर भी यह त्वचा पर दिखने लगता है. इसका सबसे मुख्य कारण है, इम्यून सिस्टम (प्रतिरोध क्षमता) का कमज़ोर होना.

कई बार यह वायरस आपके शरीर में प्रवेश कर जाता है, लेकिन एक तिहाई मरीज़ों में बिना बीमारी के लक्षण के दिखे पता ही नहीं लग पाता कि हरपीज ने घेर लिया है. इस प्रकार के हरपीज में दाने तीन से सात दिनों में सूख जाते हैं.

हरपीज का दूसरा रूप हरपीज जॉस्टर है, जो कि वेरिसिला जॉस्टर नामक वायरस के कारण होता है. यह आमतौर पर क़रीब 40 साल से अधिक आयुवर्ग के लोगों पर ही प्रहार करता है, क्योंकि उम्र बढ़ने के साथ ही शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, लेकिन ऐसा नहीं है कि युवाओं और बच्चों को यह रोग नहीं होता. दरअसल जिसमें भी रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, उसमें इस रोग के वायरस की सक्रियता बढ़ जाती है. इस रोग का वायरस शरीर के किसी ख़ास हिस्से को ही प्रभावित करता है. हरपीज की इस श्रेणी में मरीज़ को छाले वाले स्थान पर बहुत दर्द होता है.

इन बातों का रखें ख़ास ख़याल

1. त्वचा के लालीपन वाले हिस्से पर यदि खुजली महसूस होने लगे और दाने उभरे महसूस हों, तो बिना समय गंवाए त्वचा रोग विशेषज्ञ की सलाह लें.
2. पौष्टिक आहार अवश्य लें. पौष्टिक आहार लेने से आपका इम्यून सिस्टम मज़बूत बना रहता है, जिससे वायरस बार-बार आपके शरीर पर हावी नहीं होता.
3. छालों वाले स्थान को बार-बार न छुएं और न ही इन्हें मसलने की कोशिश करें.
4. अगर होठों पर हरपीज के लक्षण हैं, तो किसी को न चूमें.
5. छालों पर पड़ने वाली परत को न नोचें.
6. छाले वाले स्थान पर एहतियात के तौर पर एंटी-बायोटिक क्रीम लगाएं, ताकि कीटाणु ऊपर न आ सकें.

कभी नहीं मरता हरपीज का वायरस

हरपीज का वायरस यदि एक बार आपके शरीर में प्रवेश कर जाए तो पूरी ज़िंदगी के लिए वह आपके शरीर में घर बना लेता है, और आपकी रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होते ही आपको शिकार बना लेता है. यह वायरस रीढ़ की हड्डी के पास मौजूद नसों की गांठ में घर बना लेता है और कभी नहीं मरता. जब भी आप अत्यधिक तनाव में होते हैं या बुख़ार आदि के समय आपकी प्रतिरोध क्षमता पर दबाव पड़ता है तो यह वायरस सक्रिय हो जाता है और नसों के रास्ते त्वचा पर छालों के रूप में वापस आ जाता है.

लेवइयाल हरपीज के लक्षण

1. त्वचा पर चींटी के काटने जैसा महसूस होना
2. एक साथ पानी के कई छाले पड़ जाना
3. त्वचा का अत्यधिक लाल हो जाना
4. खुजली होना.

इसके अलावा यदि आपकी नसों में तेज़ दर्द, खिंचाव, अत्यधिक लालीपन या शरीर के टूटने जैसी शिकायतें हों, तो ये हरपीस जॉस्टर के लक्षण हो सकते हैं.

समय पर इलाज कराएं

उल्लेखनीय है कि यदि एक बार हरपीज का वायरस शरीर में प्रवेश कर जाता है, तो वह हमेशा के लिए आपके शरीर को अपना घर बना लेता है.

इसलिए यदि आपको कभी भी हरपीज का कोई भी लक्षण महसूस हो, तो तुरंत त्वचा रोग विशेषज्ञ से इस बारे में सलाह लें. समय पर यदि इस रोग का इलाज न किया जाए तो ये छाले कुछ दिनों में ख़ुद ही सूख जाते हैं, लेकिन जैसे ही आपको तनाव होता है तो ये छाले दोबारा उभर आते हैं. इलाज न होने से यह वायरस सक्रिय बना रहता है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बदलेगी शिक्षा की सूरत

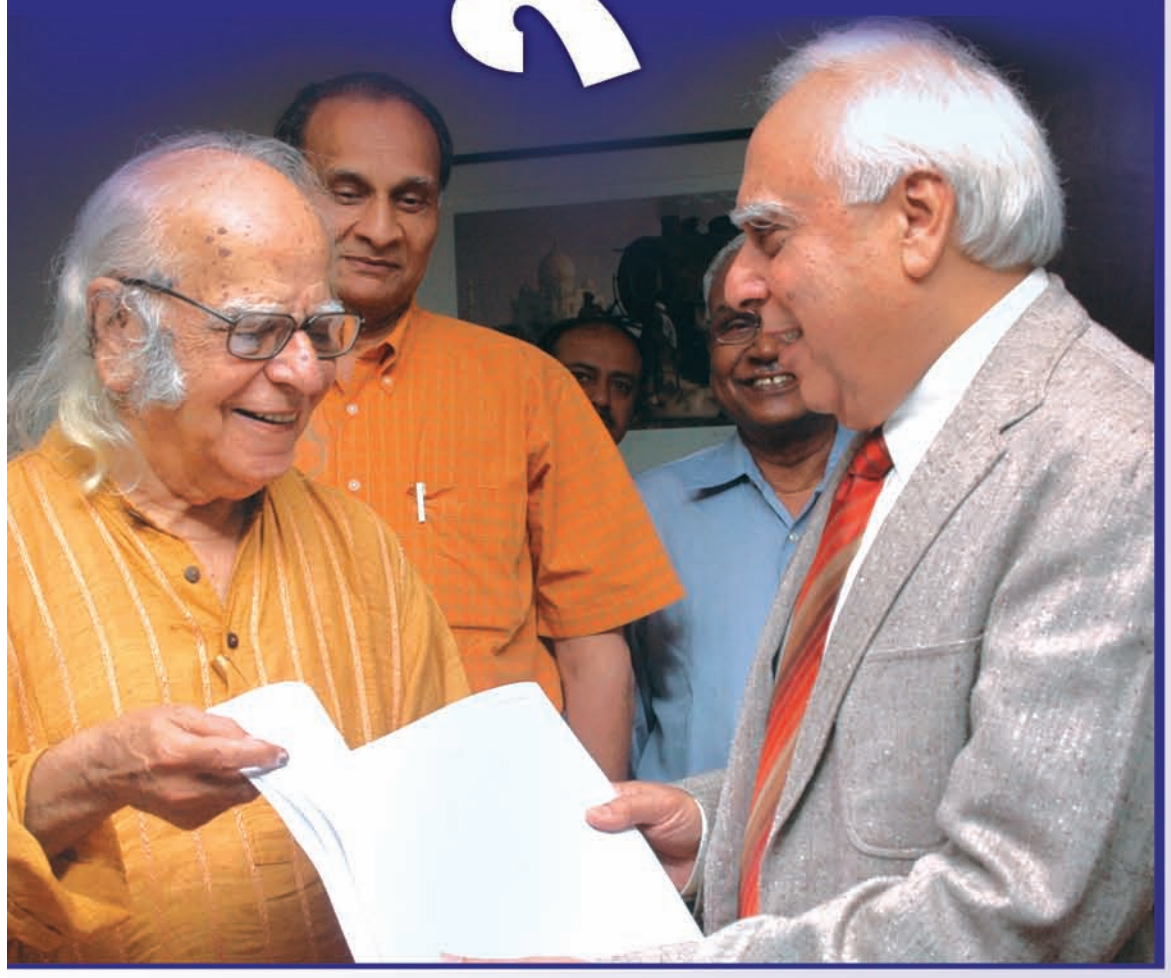

चेहरा बदलने की कवायद

- सबको मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा
- सीबीएसई की 9वीं और 10वीं की परीक्षा में ग्रेडिंग
- राष्ट्रीय उच्च शिक्षा और अनुसंधान आयोग का गठन
- स्कूली शिक्षा में निजी-सरकारी भागीदारी को बढ़ावा
- विदेशी विश्वविद्यालयों के लिए विधेयक
- शिक्षा में विदेशी पूंजी निवेश
- अखिल भारतीय मदरसा बोर्ड का गठन
- मदरसों में आधुनिक शिक्षा की व्यवस्था
- मदरसा बोर्ड के प्रमाणपत्र को सीबीएसई के बराबर मान्यता
- रैगिंग और रैपिटेशन फी के ख़िलाफ़ क़ानून
- ज्ञान आयोग और यशपाल समिति की सिफारिशों को लागू करना

अगर सब कुछ योजनाओं के अनुसार चला तो भारत में शिक्षा की सूरत जल्द ही बदल जाएगी. इसकी शुरुआत मानव संसाधन मंत्री कपिल सिब्बल ने यह कहते हुए कर दी है कि दसवीं की बोर्ड परीक्षा ख़त्म की जाएगी. साथ ही अंकों के बजाय ग्रेड देने की व्यवस्था की जाएगी. केंद्रीय स्तर पर यह सब अभी सिद्धांत के स्तर पर ही है, लेकिन उत्तर प्रदेश सरकार ने एक क़दम आगे जाते हुए वर्ष 2010 से दसवीं में ग्रेडिंग सिस्टम लागू करने की घोषणा भी कर दी है. शिक्षा की सूरत बदलने की दिशा में कुछ अपवादों को छोड़ कर राज्यों का उत्साह निश्चय ही एक शुभ संकेत है. मानव संसाधन विकास मंत्रालय का यह प्रयास और सराहनीय है कि बाहरवीं के लिए देश भर में सिर्फ़ एक बोर्ड हो. लेकिन इसके लिए राज्यों को अपने-अपने बोर्ड ख़त्म करने होंगे, जो आसान नहीं होगा. लेकिन ऐसा हो जाने से पूरे देश में एक शिक्षा नीति लागू हो सकेगी. यहां असली पेंच स्थानीय भाषा और उससे संबंधित विषय का फंसेगा. लेकिन इसके उपाय के तौर पर देश में पहले से ही त्रिभाषा फार्मूला मौजूद है. और तो और, संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) इस आधार पर परीक्षाएं करा भी रहा है. उधर, उच्च शिक्षा पर प्रो. यशपाल के नेतृत्व में बनी समिति की सिफ़ारिशों को सरकार ने स्वीकार कर लिया है. इसका मतलब हुआ कि भविष्य में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) का वजूद नहीं रहेगा. भारतीय चिकित्सा परिषद (एमसीआई) और अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) जैसे संस्थान भी नहीं रहेंगे. इन सबकी जगह एक उच्च शिक्षा आयोग होगा, जो सभी तरह की उच्च शिक्षाओं को नियंत्रित करेगा. इसके अध्यक्ष और सदस्यों का चुनाव एक सर्च कमेटी करेगी, जिसमें प्रधानमंत्री, लोकसभा में विपक्ष के नेता और सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश शामिल होंगे. मंत्रालय ने यशपाल समिति की वह सिफ़ारिश भी मान ली है, जिसमें प्राइवेट शिक्षण संस्थानों को डीम्ड विश्वविद्यालय का दर्जा देने की प्रक्रिया, डीम्ड करार दिए गए संस्थानों पर पुनर्विचार और डीम्ड के लिए नए आवेदन न लेने की बात कही गई थी.

इतना ही नहीं, उच्च शिक्षा के लिए विदेश जाने की भी अब कोई ज़रूरत नहीं रहेगी. अब विदेशी विश्वविद्यालयों में होने वाली पढ़ाई भारत में रह कर ही की जा सकेगी. शिक्षा में सरकारी ही नहीं विदेशी पूंजी निवेश भी होगा और तमाम विश्वस्तरीय सुविधाएं उपलब्ध होंगी. भारत की परंपरागत शिक्षा पद्धतियों जैसे मदरसा नए रूप में नज़र आएंगे. केंद्रीय विद्यालय भी बदले-बदले से होंगे. इस तरह सरकार की शिक्षा नीति का ब्ल्यूप्रिंट बताते हुए कपिल सिब्बल ने शिक्षा क्षेत्र में किए जाने वालों महत्वपूर्ण सुधारों का खाका खींच दिया है. उनके मुताबिक देश में शिक्षा में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में बढ़ोतरी ज़रूरी है. साथ ही विदेशी विश्वविद्यालयों को भारत में शिक्षा के क्षेत्र में उतरने का मौका देने की बात भी उन्होंने कही है. अभी भारत से हर साल डेढ़ लाख से भी ज़्यादा विद्यार्थी विदेशों में शिक्षा लेने जाते हैं. अगर भारत में उसी स्तर की शिक्षा और शिक्षण संस्थाएं आ जाती हैं, तो इन छात्रों को पढ़ाई के लिए देश से बाहर जाने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी. देश में रहकर भी विदेशी शिक्षा और विदेशी डिग्री हासिल की जा सकेगी. इससे वीज़ा और तमाम क़ानूनी परेशानियों से बचा जा सकेगा. विदेशी उच्च शिक्षा पर ख़र्च होने वाले रुपये बचाए जा सकेंगे. साथ ही ऑस्ट्रेलिया जैसी घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं होगी. सरकारी योजना तो भारत को शिक्षा का नया केंद्र बनाने की है. सरकार ने शिक्षा के लिए जैसी योजना बनाई है, उससे शिक्षा के क्षेत्र में गुणात्मक सुधार की उम्मीद जताई जा सकती है. कुछ लोग विदेशी निवेश का विरोध कर रहे हैं. उनकी मांग यही है कि विदेशी निवेश के नाम पर भारत का शिक्षा क्षेत्र विदेशी कंपनियों के फ़ायदा कमाने की मंडी न बन जाए. ज़ाहिर है, इस बात पर सरकार को ध्यान देना होगा. अगर ये योजनाएं ठीक-ठाक लागू हों तो शिक्षा के स्वरूप को बदलने का दावा हक़ीक़त हो सकता है. हालांकि, यह *अगर* बहुत बड़ा है. भारत में उच्च शिक्षा के सपने देख रहे छात्र और उससे जुड़े शिक्षक, अभिभावक, अधिकारी तो यही उम्मीद रख रहे होंगे कि शिक्षा को सुधारने की इस सरकारी पहल का यह *अगर* इसके रास्ते में रोड़े न अटका दे.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बेजान चित्रों में जान फूंकने का करियर एनीमेशन

एनीमेशन लैटिन शब्द एनीमा से बना है, जिसका अर्थ है आत्मा. किसी बेजान चीज़ में आत्मा डालने को ही कहते हैं एनीमेशन. वाल्ट डिज्नी ने इस कला को करियर के रूप में स्थापित किया. आज एनीमेशन का दायरा इतना फैल चुका है कि ज़िंदगी के हर मोड़ पर एनीमेशन के रूपों से हमारा सामना होता रहता है. एनीमेशन फिल्मों और विज्ञापनों के इस फैलाव से ज़ाहिर तौर पर एनीमेशन के क्षेत्र में कुशल लोगों की मांग भी बढ़ी है. भारत में भी यह एक बड़े करियर क्षेत्र के रूप में स्थापित हो चुका है.

काम

3-डी एनीमेशन बनाने के लिए एक टीम की ज़रूरत पड़ती है, दरअसल 3-डी एनीमेशन ख़ुद कई करियरों का मेल है. 3-डी एनीमेशन के कई चरणों जैसे कहानी लेखन, कहानी को चित्रों में प्रस्तुत करना, चरित्र गढ़ना, उनका एनीमेशन करना, लाइटिंग, गति, आवाज़ की रिकार्डिंग, संपादन, विशेष प्रभाव के बाद ही अंतिम फिल्म तैयार होती है.

इसलिए इसमें मॉडलर, लेआउट आर्टिस्ट, स्कैनर ऑपरेटर, डिजीटल इंक और पेंट आर्टिस्ट, कंपोज़िटर, बैकग्राउंड आर्टिस्ट, एनीमेटर आदि के तौर पर काम किया जा सकता है. एक सफल फिल्म बनने के लिए हर भूमिका महत्वपूर्ण है.

चरित्र

एनीमेशन के लिए रचनात्मक होना बेहद ज़रूरी होता है. यह सिर्फ़ चित्रकला नहीं है, इसके लिए घंटों मेहनत करनी पड़ती है. साथ ही रंगों की पहचान, विजुअल के साथ-साथ कहानी की समझ ज़रूरी है.

योग्यता

एनीमेशन में बैचलर डिग्री की पढ़ाई करने के लिए किसी मान्यता प्राप्त बोर्ड से कम-से-कम 45 फीसदी नंबरों के साथ 12वीं पास होना होता है. वहीं पोस्टग्रेजुएट कोर्स के लिए बैचलर होना ज़रूरी होता है. कुछ संस्थान जैसे इंडियन डिज़ाइन सेंटर(आईडीसी), आईआईटी, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ डिज़ाइन(आईआईडी) में सिर्फ़ स्थापत्य, फाइन आर्ट्स, तकनीकी और इंजीनियरिंग के ग्रेजुएट्स को ही दाख़िला मिलता है. साथ ही कंप्यूटर का सामान्य ज्ञान होना चाहिए.

कोर्स

एनीमेशन के कोर्स में इन विषयों के बारे में पढ़ाया जाता है.

- पारंपरिक एनीमेशन
- स्टॉप मोशन एनीमेशन
- रोटोस्कोपिंग
- कंप्यूटर जनित 2डी-3डी एनीमेशन
- क्ले-मेशन
- फोटोशॉप
- मानव शारीरिकी
- चित्रकला

संस्थान

एनीमेशन का कोर्स कराने वाले कुछ बड़े संस्थान

- राष्ट्रीय डिज़ाइन संस्थान (एनआईडी)
- जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट्स
- जी इंस्टीट्यूट ऑफ क्रिएटिव आर्ट्स (ज़ेडआईसीए)
- इंडस्ट्रीयल डिज़ाइन सेंटर
- एरेना मल्टीमीडिया
- माया एकेडमी ऑफ एडवांस्ड सिनेमेटिक्स
- टून्ज़ एनीमेशन इंडिया प्रा. लिमिटेड
- राय विश्वविद्यालय

एनीमेशन के क्षेत्र में करियर बनाने वालों के लिए हर क्षेत्र में संभावनाएं हैं. मनोरंजन, व्यापार, सेल्स, शिक्षा, प्रकाशन, रक्षा, वेब डिज़ाइनिंग, इंज़ीनियरिंग, विज्ञापन, फैशन डिज़ाइनिंग, गेम डिज़ाइनिंग, स्टुडियो जैसे क्षेत्रों में एनीमेशन के पेशेवरों की ज़रूरत पड़ती है.

अनुमानित वेतन

शुरुआती दौर में इस क्षेत्र में आप 12 से 15 हज़ार रुपये के बीच हर महीने कमा सकते हैं. एक सीनियर एनीमेटर को आसानी से 22 से 25 हज़ार मिल जाते हैं, और कोई बड़ा काम करें तो 50 से 60 हज़ार रुपये भी मिल सकते हैं. ख़ास पहचान बनाकर इस आंकड़े को छह अंकों में भी पहुंचाया जा सकता है.

दाख़िले की तरह हॉस्टल को भी गंभीरता से लें

देश के नामी-गिरामी कॉलेजों में दाख़िले की प्रक्रिया चल रही है. अगर आप उन हज़ारों विद्यार्थियों में शामिल हैं, जो अपना घर छोड़कर दूर अच्छी पढ़ाई के लिए जा रहे हैं, तो दाख़िले के साथ आपके लिए ज़रूरी हो जाता है अपने लिए रहने की सही जगह का चुनाव करना. अधिकतर कॉलेजों में हॉस्टलों की व्यवस्था होती है. रहने के लिए अच्छा मकान ढूंढ़ने, किराया तय करने और अपने पड़ोसियों के साथ तालमेल बिठाने की झंझट से बचने के लिए तो कॉलेज के हॉस्टल से अच्छा विकल्प हो ही नहीं सकता.

समस्या यह है कि ऐसे हॉस्टलों में सभी विद्यार्थियों के लायक जगह नहीं होती. ऐसे में अच्छे नंबरों या कोटे के आधार पर हॉस्टलों में जगह दी जाती है. बहुत से विद्यार्थियों को हॉस्टल अंत तक नहीं मिल पाता. हालांकि उनके लिए भी कई विकल्प हैं. अगर आप भी कॉलेज के हॉस्टल में जगह पाने से चूक गए हैं तो निराश होने से बेहतर होगा कि किसी अच्छे निजी हॉस्टल या पेईंग-गेस्ट व्यवस्था की खोज करें. अगर आप रहने के लिए जगह ढूंढ़ने में परेशानी से बचना चाहते हैं तो इन बातों पर अमल करें.

1. अगर आपके कॉलेज में हॉस्टल की सुविधा है तो बिना वक़्त गंवाए उसके लिए आवेदन कर दें. आमतौर पर हॉस्टल कॉलेज के अंदर या आसपास होते हैं, जिससे कॉलेज से दूरी की समस्या हल हो जाती है. ऐसे हॉस्टल (कुछ निजी कॉलेजों को छोड़कर) बाक़ी विकल्पों से सस्ते भी होते हैं.
2. कॉलेज हॉस्टल के लिए आवेदन करने के साथ ही आसपास के इलाक़ों में चल रहे निजी हॉस्टलों, पेईंग-गेस्ट की व्यवस्था वाले घरों के बारे में भी पता लगाएं और उनकी एक लिस्ट तैयार कर लें. इसके लिए इंटरनेट की मदद ले सकते हैं. 99एकर्स डॉट कॉम और दूसरी साइट्स पर आपके कॉलेज के आसपास की जगहों का पता मिल सकता है. अपने सीनियर और कॉलेज के ऑफिस में काम करने वालों से भी बात करें, उनके पास स्थानीय जानकारी रहती है, जो ज़्यादा सटीक और फ़ायदेमंद होती है.
3. कई कॉलेज बड़े हॉस्टल बनाते हैं और सभी विद्यार्थियों का उनमें रहना ज़रूरी होता है (भले ही आप उसी शहर से हों), ऐसे में आपके पास कोई विकल्प नहीं होता.
4. अधिकतर कॉलेज हॉस्टलों में राजनीति होती है. कॉलेज के हॉस्टल में रहने का एक नुक़सान यह होता है कि चाहे-अनचाहे आप इस राजनीति से जुड़ जाते हैं, इसलिए हॉस्टल लेने से पहले इस बारे में पूछताछ कर लें.
5. कॉलेज हॉस्टल या बाहर कमरा लेने से पहले अपने बजट का ध्यान रखें. किसी भी जगह में रहने का वास्तविक ख़र्चा नज़र आने वाले ख़र्चे से थोड़ा ज़्यादा होता है, ऐसे में सीनियर की सलाह लें.
6. कॉलेज के हॉस्टल के नियम-क़ानूनों पर भी नज़र डालें. अगर क़ानून सख्त हैं तो देखिए कि आप वहां अपनी स्वतंत्रता के साथ रह पाएंगे या नहीं. इस बात के बारे में जानने की कोशिश कीजिए कि नियमों का पालन कितनी सख्ती से होता है.
7. अगर कॉलेज का हॉस्टल न मिले तो अपनी लिस्ट में से सबसे बेहतर बाहरी हॉस्टल या पेईंग-गेस्ट सुविधा को चुनें. ऐसी जगह ढूंढ़ते समय कई बातों का ध्यान रखना चाहिए, मसलन क्या वहां पढ़ाई का माहौल है? आपके हॉस्टल का वार्डन या पेईंग-गेस्ट के मकान मालिक कैसे हैं? वहां सुरक्षा के इंतज़ाम हैं या नहीं? आपके साथ या आसपास रहने वाले लोग कैसे हैं?
8. कहीं रहने की जगह लेते समय यह सोच लें कि आपको कितने दिनों तक वहां रहना है. बार-बार घर बदलना परेशानी वाला काम होता है. साथ ही अगर कोई वाहन रखना चाहते हैं तो यह देख लीजिए वहां उसके रखने की व्यवस्था है या नहीं.
9. कॉलेज हॉस्टल या बाहरी इंतज़ाम में यह भी ध्यान रखने की ज़रूरत है कि अतिथि (गेस्ट) का आने या रहने की इजाज़त है या नहीं. ऐसा न हो आपका कोई मित्र या रिश्तेदार आपसे मिलने न आ पाए.
10. यह भी ध्यान रखिए कि आसपास खाने और अन्य ज़रूरतों का इंतज़ाम कैसा है. अगर कॉलेज हॉस्टल या पेईंग-गेस्ट में रहें तो मेस की व्यवस्था है या नहीं. यह भी देखिए कि कभी आपातकालीन स्थिति आने पर उस इलाक़े में कौन सी सुविधाएं उपलब्ध हैं.

इन सभी बातों पर ध्यान देकर अपने लिए रहने की उचित जगह ढूंढ़ना बहुत मुश्किल हो सकता है. याद रखिए, बार-बार घर बदलने या परेशानी भरा घर लेने से आपकी पढ़ाई पर बुरा प्रभाव पड़ता है, इसलिए कोई भी जगह ठोक-बजा कर पूरी संतुष्टि होने पर ही चुनें. देरी न करें, क्योंकि आपकी तरह कई लोग अच्छी जगह की तलाश में हैं. कहीं सारे अच्छे विकल्प ख़त्म न हो जाएं.

कॉलेज के दिन आपके जीवन के सबसे महत्वपूर्ण दिन होते हैं. रहने की जगह चुनते समय यह याद रखें कि वह जगह आपके पूरे जीवन का हिस्सा बन जाएगी. कॉलेज के दिन पढ़ाई के अलावा मौज़-मस्ती, नए दोस्त बनाने का और नए अनुभवों का समय होता है, इसलिए जहां भी रहें ख़ुश रहें और इन दिनों का पूरा आनंद उठाएं.

सभी फोटो-*प्रभात पाण्डेय*

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

दुनिया

समाज की सीमाओं से बाहर नहीं होता पत्रकार

गंगेश मिश्र

टेलीविजन देखने-सुनने वाले क्या यह बता सकते हैं कि हिंदी के ख़बरिया चैनलों से अधिक ख़याली पुलावों में उलझा रहने वाला और भी कुछ है ? शायद नहीं. ख़बरिया चैनलों को देखने से अक़्सर लगता है कि आज के पत्रकार शायद अपने अस्तित्व को निर्णयकारी समझने लगे हैं. मानो दुनिया पर वह निर्णय देने जा रहे हों. लेकिन अपनी गढ़ी गई दुनिया में अदालत लगाकर किसी के भी ख़िलाफ़ निर्णय देना एक बात है, लेकिन उसे रास्ता दिखाना और उसके मामूली-से भी वजूद को स्वीकार करना नितांत दूसरी बात है. ये निर्णयकारी अपने हिसाब से एक समाज तो गढ़ लेते हैं, लेकिन यह भूल जाते हैं कि उसकी एक महत्वपूर्ण इकाई परिवार भी है, जिसकी बुनावट को तार-तार करना ही उनका मक़सद दिखता है. यह मत भूलिए कि पत्रकार का अस्तित्व कभी भी समाज की सीमाओं से अलग नहीं हो सकता.

हिंदी चैनलों में दो ख़ास तरह की प्रवृत्ति देखने को मिलती है. पहले में मनुष्य का मनुष्य के प्रति वहशियाना नफरत, बढ़ती संवेदनहीनता और नैतिक भ्रष्टाचार का रास्ता है, तो दूसरा हमें ऐसे रास्ते पर ले चलना चाहता है जो विकल्प की खोज पर टिकी है और जिसका परिणाम सृष्टि के अवश्यंभावी विनाश के रूप में सामने आता है. खोजी पत्रकारिता के नाम पर जब-तब मियां-बीवी की कलह से लेकर पुलिस में दर्ज़ शिकायत मात्र के आधार पर किसी को भी सरेआम बदनाम कर देने का मामला जहां पहले वर्ग में आता है, वहीं यहीं ठहरे थे पांडव या यही है अशोक वाटिका से लेकर कुछ वर्षों में दुनिया के ख़त्म होने की भविष्यवाणी वाले कार्यक्रम आते हैं. हैरानी की बात यह कि इस तरह का सारा प्रपंच यथार्थ के नाम पर गढ़ा जाता है. जबकि सच्चाई यह है कि दोनों ही हालात में यथार्थ कहीं पीछे छूटा रहता है. इसलिए प्रस्तुतिकरण की शैली लगातार घटिया होती जा रही है. यूं, चैनल से जुड़े हमारे मित्र इसे परिवर्तन का दौर कहते हैं, जिसे समाज में हर स्तर पर महसूसा जा सकता है. लेकिन सवाल उठता है, परिवर्तन का मतलब पतन-सा क्यों होता जा रहा है ? अंग्रेजी के ख़बरिया चैनलों को देखने के बाद यह सवाल और कचोटता है. हिंदी के ख़बरिया चैनल विशुद्ध भावनाओं पर चलते हैं, जबकि अंग्रेजी वाले तर्कों पर अधिक आश्रित दिखाई देते हैं. इसलिए वहां नपुंसक मर्दों की भीड़ में किसी महिला को पिटते शायद ही कभी दिखाया जाता है. जबकि हिंदी वाले चीख-चीख़ कर किसी भी महिला की पिटाई को तमाशा बना कर अपनी पीठ बहादुरी से थपाथपाते रहते हैं.

इस प्रवृत्ति का सबसे अच्छा उदाहरण है-खेल. क्रिकेट ही नहीं, किसी भी खेल पर हिंदी में कार्यक्रम देख लें, अधिकतर की प्रस्तुति ऐसी होती है जैसे उसे कोई क्राइम रिपोर्टर पेश कर रहा हो. पुलिसिया अंदाज़ में एक प्रश्न के जवाब में दस सवाल और करता हुआ-क्यों ? जवाब दीजिए फलां, फलां और फलां. उन्हें सिर्फ़ हार-जीत से मतलब होता है. जीते तो आसमान में उठा दें, हारे तो आठ-दस किशोरों को गुमराह कर घर के बाहर मुर्दाबाद-मुर्दाबाद के नारे लगवा दें. हिंदी चैनलों पर कभी किसी विशेषज्ञ से ऐसी कोई गंभीर चर्चा नहीं कराई जाती कि आख़िर कैसे हार और जीत का फ़ैसला हुआ. जबकि अंग्रेजी के रिपोर्टर ही किसी विशेषज्ञ की भांति बग़ैर स्यापा किए बता देते हैं कि पिच को परखने में चूक गए, या ये-ये कारण रहे. या उसने इनसे बेहतर खेल दिखाया, आदि-आदि. यहां मुझे भारतीय क्रिकेट टीम का पिछले साल का श्रीलंका दौरा याद आता है. हम वहां शुरू के चारों एकदिवसीय मैच जीत गए थे और आख़िरी मैच गंवाकर 4-1 से सीरीज़ जीत कर आए थे. हिंदी के अमूमन सभी चैनलों पर विरुदावलियां गाई जा रही थीं. इसके ठीक उलट अंग्रेजी के पत्रकार बता रहे थे कि शुरू के चार मैचों में टॉस धोनी ने जीता था और पहले बैटिंग ली थी, जिससे मेंडिस और मुरलीधरन को ठोस पिच से मदद नहीं मिली. और, बाद में हमारे स्पिनरों ने श्रीलंकाई बल्लेबाजों को नचा दिया. आख़िरी मैच में टॉस उलटा पड़ गया था, तो भारतीय टीम बाद में बल्लेबाजी करते हुए चित हो गई थी. अभी वेस्ट इंडीज दौरे पर गई भारतीय टीम को लीजिए. पहले एकदिवसीय मैच में जब हमने 329 रनों का पहाड़ खड़ा कर वेस्ट इंडीज को 20 रनों से बमुश्किल हरा पाए तो कहा गया-भारत विदेशी धरती पर जीतना भी जानता है. लेकिन अगले ही मैच में जब 82 पर सात विकेट खोते हुए किसी तरह 188 रन बना कर आठ विकेट से हार गए तो आसमान सिर पर उठा लिया कि भारत को उछाल वाली पिचों पर खेलना आज भी नहीं आता है. दो मैचों में ही एक-दूसरे से एकदम विपरीत राय बनाने में विशेषज्ञ रूपी खेल का अधकचरा ज्ञान रखने वालों को पता भी नहीं चला कि वे कैसे बीच चौराहे पर धर लिए गए हैं. इसीलिए वे अपनी तरह से खेलते रहते हैं और भारतीय टीम अपनी तरह से. तात्पर्य यह कि हार-जीत अनेक तरह के कारणों पर टिकी होती है. इसलिए खेल को खेल की तरह ही लेना चाहिए. हिंदी के चैनलों पर आम तौर पर क्रिकेट छाया रहता है. अन्य खेलों में अगर कोई सफलता मिली भी, तो छोटे-बड़े टुकड़ों में ही उसे निपटा दिया जाता है. क्या आपने कभी किसी हिंदी चैनल पर साइना नेहवाल के परिवार वालों से बातचीत देखी है ? लेकिन आईपीएल में एक शतक जड़ देने भर से मनीष पांडेय के परिवार वाले चैनलों पर छा गए. उपलब्धि सब की ख़ुशियों भरी होती है. इसलिए उसे दिखाने में भी संतुलन रखना चाहिए. भारतीय खेलों का सर्वांगीण विकास भी तभी होगा.

हिंदी और अंग्रेजी के ख़बरिया चैनलों की परिपक्वता देखनी हो, तो किसी मुद्दे पर उनके चलाए अभियानों में अंतर से देखिए. एक बिजली कटौती जैसी सामान्य व तात्कालिक समस्या के ख़िलाफ़ सड़कों पर उतर कर क़ानून हाथ में लेने वालों को बहादुर बताता फिरता है, तो दूसरा देश भर में स्थायी प्रभाव डालने वाले एक बोर्ड-एक शिक्षा की वकालत पर गंभीर बहस कर सार्थक निष्कर्ष की तलाश में दिखता है. जबकि वक़्त का तक़ाज़ा है कि देश में अब तक चल रही उस शिक्षा नीति की बखिया उधेड़ी जाए जो फीस के आधार पर वर्गीय विभाजन को ख़त्म नहीं होने दे रही. ग़रीबों को अशिक्षित रखने के लिए शिक्षा जान बूझकर लगातार महंगी की जाती रही है. साधारण मध्य वर्गीय की पहुंच में विशेषज्ञ के बदले बाबू भर बनने की शिक्षा रहने दी जाती है. अब देश में विदेशी विश्वविद्यालय आने वाले हैं. क्या वे मुफ्त में पढ़ाएंगे ? कतई नहीं. उनमें प्राइवेट संस्थानों की तरह सिर्फ़ अमीरों के बच्चे पढ़ेंगे, ताकि वे ही सिद्धहस्त विशेषज्ञ बन सकें. अंग्रेजी भाषी समाज पहले से ही इस ढर्रे पर चल रहा है, लेकिन हिंदी और स्थानीय भाषा भाषी क्या करेंगे, यह सवाल हिंदी मीडिया कतई नहीं उठा रहा. मनमोहन सिंह की नई सरकार के पहले सौ दिन के एजेंडे में दूर-दराज़ के गांवों में पढ़ने वाले ग़रीब बच्चों के लिए कुछ क्यों नहीं है, यह सरल सवाल ज़ोर-ज़ोर से बोलने वाले मानव संसाधन विकास मंत्री कपिल सिब्बल से किसी प्रेस कांफ्रेंस में नहीं पूछा गया. अचरज की बात यह कि अंग्रेजी चैनल वाले अपने समाज के हितों को उठाने में कभी पीछे नहीं रहते, लेकिन हिंदी वाले गंभीर विषयों पर जब बोलने की बारी आती है, तो सबसे पीछे बैठे रहते हैं या चाय-पानी में लगे रहते हैं. यही कारण है कि यहां अपराध, सेक्स और घटिया किस्म की राजनीति को हमेशा प्रमुखता मिलती रहती है. और प्रमुखता मिलती है रिएलिटी शो के विवादित अंशों को. इन चीज़ों से अंग्रेजी के ख़बरिया चैनल आश्चर्यजनक रूप से कम संक्रमित दिखते हैं.

बहरहाल, ये अपनी-अपनी कायरता और कुंठाओं को एकजुट कर, एक-दूसरे से ताक़त लेकर अगर आज भी सफल हो रहे हैं, तो इसका यही मतलब है कि हम आडंबरी चेहरों को अब तक नहीं पहचान पा रहे हैं. शायद इसीलिए गुजरात में नरेंद्र मोदी तो पश्चिम बंगाल की वामपंथी सरकार की लालगढ़िया विकृति को बर्दाश्त कर रहे हैं.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

मेरी दुनिया.... माया की माया ...धीर

राशिफल

(6 जुलाई से 12 जुलाई तक)

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)

इस सप्ताह आपको संयम रखने की ज़रूरत है. ऐसा कुछ न बोलें जिससे विवाद पैदा हो सकता हो. अगर विवाद छिड़ जाता है तो उसे आगे न बढ़ाएं. आपकी भक्ति भावना में रुचि बढ़ेगी. व्यवसाय के क्षेत्र में आपके द्वारा की गई मेहनत रंग लाएगी और आप सफल साबित होंगे.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)

इस सप्ताह आपको अपने परिवार के किसी सदस्य से आर्थिक सहायता मिलने की स्थिति बनी हुई है, जिससे आपको लाभ प्राप्त होगा. अगर आप कुछ ज़रूरी सामान ख़रीदने बाज़ार जा रहे हैं, तो अपने सामान की सुरक्षा के प्रति सतर्क रहें. व्यवसाय में निवेशों पर ध्यान दें.

मिथुन (21 मई से 20 जून)

इस सप्ताह आप अपने मित्रों से मिलेंगे. ध्यान रहे कि किसी भी दोस्त पर ज़्यादा विश्वास न करें. जीवन साथी के साथ संबंधों में ग़लतफहमियां पैदा हो सकती हैं. अपनी वाणी के ऊपर नियंत्रण रखें. व्यावसायिक मामले फ़िलहाल ठंडे हैं, लेकिन आगे उनमें नए रास्ते खुलेंगे.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)

इस सप्ताह अगर किसी पारिवारिक काम में लगे होंगे, तो सफल रहेंगे. इससे आपका मन प्रसन्न रहेगा. ध्यान रहे, जीवन साथी के साथ संबंधों में कोई तीसरा न आए, क्योंकि ऐसा होने पर आपको नुक़सान हो सकता है. ज़रा संभल कर क़दम बढ़ाएं. ख़र्चों पर पकड़ बनाने की ज़रूरत है.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)

यह सप्ताह अच्छा रहेगा. आपको किसी अपने का भरपूर सहयोग और समर्थन मिलेगा. ख़ुशी तथा सुख के अवसर भी मिलेंगे. ध्यान रखें कि ज़रूरत से अधिक न खाएं, क्योंकि अति भोजन से सेहत संबंधी शिकायतें पैदा हो सकती हैं. व्यवसाय के मामलों में चल रही कोशिशों में सफलता प्राप्त होगी.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)

इस राशि वालों के लिए यह सप्ताह तनावपूर्ण रहेगा. संयम बनाकर चलें. वाहन चलाते समय सावधानी बरतें, नहीं तो दुर्घटना घट सकती है. किसी भी क्षेत्र में पैसा ख़र्च करने से पहले विचार करें. व्यवसाय में हानि-लाभ को सोचने के बाद ही किसी कार्य में हाथ डालें.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्तूबर)

इस सप्ताह जीवन शैली के साथ-साथ रहन-सहन के स्तर में भी सुधार आएगा. सावधान रहें, आप अपने किसी संबंधित अधिकारी के गुस्से का शिकार बन सकते हैं. लेकिन आपके लिए मितव्ययिता लाभदायक साबित होगी. सकारात्मक सोच रखें.

वृश्चिक (21 अक्तूबर से 20 नवंबर)

आपको अपनी मेहनत का फल मिलेगा. विवाहित लोगों का ससुराल यात्रा का योग बना हुआ है. आप अगर किसी मूल्यवान वस्तु की इच्छा रखेंगे, तो आपको मिल जाएगी. शिक्षा के क्षेत्र में भी सफलता मिलने की आशा है. साथ ही परिवार के बुजुर्गों का सहयोग भी प्राप्त होगा.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)

इस सप्ताह यात्रा का योग बन रहा है. आप किसी दूसरे के कार्यों में दख़ल न दें. अपने काम में किसी और का हस्तक्षेप न लें. ख़ुशी की बात यह है कि धन, सम्मान, पद, प्रतिष्ठा सभी में एक साथ वृद्धि होगी. आपको अपने परिवार का पूरा सहयोग प्राप्त होगा.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)

वाणी की मधुरता आपको लोकप्रियता के साथ-साथ सम्मान भी दिलाएगी. आपको कार्यक्षेत्र में नए अधिकार तथा नए अनुबंध भी मिलने की संभावना है. शासन-सत्ता का सहयोग भी मिलेगा. स्वास्थ्य पर ध्यान दें. संभल कर काम करें. सिर पर चोट लगने की संभावना है.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)

यह सप्ताह सफलता लेकर आएगा. मांगलिक कार्यों के लिए किया गया प्रयास सफल होगा. यदि आप किसी पार्टनर के साथ यात्रा करने की सोच रहे हैं तो उसमें भी आपको सफलता मिलेगी. उपहार और सम्मान में भी लाभ मिलने की स्थिति है.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)

समाज में सम्मान बढ़ेगा. यह सप्ताह आपके लिए सफलता लेकर आएगा. आर्थिक मामलों में सफलता तो मिलेगी, लेकिन किसी से पैसे के कारण वाद-विवाद भी हो सकता है. व्यवसाय में अगर बैंक से कर्ज़ लेने की योजना बना रहे हैं तो उसमें कामयाबी हासिल होगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

लेखिकाओं के प्यारे खलनायक

अनंत विजय

नब्बे के दशक के शुरुआती वर्षों की बात है. शायद 1992 की गर्मियों की. मैं अपने शहर जमालपुर से दिल्ली आया था. आगे की पढ़ाई और प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी की योजना थी. दिल्ली में ही काम कर रहे अपने चाचा भारत भारद्वाज के आरामबाग के सरकारी फ्लैट में रुककर दिल्ली विश्वविद्यालय के आसपास रहने की जगह तलाश कर रहा था. भारत जी के फ्लैट में माहौल पूरी तरह साहित्यिक था. रेलवे स्टेशन के पास होने की वजह से उनके घर साहित्यकारों का जमावड़ा लगा करता था. वह राजेंद्र यादव के संपादन में निकलने वाली साहित्यिक पत्रिका *हंस* में *समकालीन सृजन संदर्भ* के नाम से एक स्तंभ भी लिखा करते थे. मेरे अंदर भी साहित्य का कीड़ा कुलबुला रहा था. हरेक रात साहित्य पर लंबी-लंबी बहसें हुआ करती थीं. एक दिन मैंने भारत जी से कहा कि क्या यह संभव है कि मैं राजेंद्र जी से मिल सकूं. मेरी इच्छा को देखते हुए उन्होंने हां कर दी और अगले दिन दो बजे के क़रीब हमलोग सरकारी कार से अंसारी रोड पर *हंस* के दफ़्तर पहुंचे. बंद गली के आख़िरी मकान में *हंस* का दफ़्तर था. पहले कमरे से गुज़र कर हम राजेंद्र जी के कमरे तक पहुंचे. जिनकी कहानियां और उपन्यास पढ़कर बड़ा हुआ था, वह सामने बैठे थे. पूरे कमरे में सिगरेट का धुआं तैर रहा था और काला चश्मा लगाए राजेंद्र यादव अपनी कुर्सी पर विराजमान थे. अब ठीक से याद नहीं है कि उस वक़्त कमरे में और कौन-कौन था. भारत जी ने राजेंद्र यादव से परिचय कराया. इस बात को 18 वर्ष बीत चुके हैं और इन वर्षों में यादव जी से हज़ारों बार फोन पर बातें हुईं, लेकिन उस दिन की मुलाक़ात मुझे अब भी याद है और एक दिलचस्प वाक़या भी. हमलोग राजेंद्र जी के दफ्तर में बैठे चाय पी रहे थे, फिर भारत जी और राजेंद्र यादव के बीच तय हुआ कि श्रीराम सेंटर चला जाए. हमलोग कमरे से बाहर निकले और दरवाज़े तक पहुंचे ही थे कि एक बेहद ख़ूबसूरत और आकर्षक महिला ने दफ्तर में प्रवेश किया. वह बेहद आत्मीयता के साथ राजेंद्र यादव जी से मिलीं. राजेंद्र यादव जी ने स्नेहवश उस लेखिका की पीठ पर हाथ रख दिया- छूटते ही लेखिका ने यादव जी से कहा कि अगर आप इस तरह से मेरी पीठ पर हाथ रखेंगे तो संभव है कि मैं उत्तेजित हो जाऊं. मैं जवान हूं और अगर उत्तेजित हो गई तो आपकी ख़ैर नहीं. ख़ूबसूरत लेखिका की इस बात पर राजेंद्र जी ने एक ज़ोरदार ठहाका लगाया और फिर आगे बढ़कर उसे गले लगा लिया. क़स्बाई शहर की मानसिकता लिए महानगर पहुंचा मैं इस संवाद को सुनकर हतप्रभ था, लेकिन यह सब कुछ इतनी सहजता से बीता कि लगा कुछ हुआ ही नहीं हो. बाद के दिनों में कई बार राजेंद्र जी के दफ़्तर गया. कई बार उन्हें महिला लेखिकाओं को गले लगाकर आशीर्वाद देते देखा, लेकिन उस दिन का वाक़या भुलाए नहीं भूलता. कई बार राजेंद्र जी से फोन पर लंबी-लंबी बातें हुई हैं. महिलाएं भी बातचीत का विषय बनीं. जब भी स्त्री-विमर्श पर बात होती, मैं उन्हें छेड़ते हुए कहता कि विमर्श की डोर तो आपके हाथ से छूट गई है, बच गई है सिर्फ़ स्त्री. जब भी मैं यह कहता, उनके मुंह से गालियां छूटने लगतीं. हिंदी जगत में राजेंद्र जी का महिला प्रेम जगज़ाहिर है, उनकी महिला मित्र मंडली भी. उस मंडली को एक बार ममता कालिया ने *घाघरा पलटन* नाम दिया था. राजेंद्र यादव की मंडली की ही युवा पत्रकार गीताश्री ने यादव को केंद्र में रखकर एक किताब संपादित की है- तेइस लेखिकाएं और राजेंद्र यादव (किताबघर प्रकाशन, दिल्ली). इस किताब के बनने की बेहद दिलचस्प कहानी गीताश्री ने अपनी भूमिका में बताई है- जयंती की छत के दीवान-ए-ख़ास में उस शाम राजेंद्र यादव के अलावा डॉ. मनीषा तनेजा, अमृता ठाकुर, सीमा झा-श्रीनंद झा, गीताश्री, कमलेश जैन के अलावा शिवकुमार शिव भी मौजूद थे. बातचीत के क्रम में यह बात निकली कि राजेंद्र यादव पर गीताश्री एक किताब संपादित करें, एक ऐसी किताब जिसमें यादव जी पर सिर्फ़ स्त्रियां लिखें. प्रस्ताव राजेंद्र यादव के पास उनकी सहमति के लिए पेश किया गया. उस पर राजेंद्र यादव ने न तो हां की और न ही मना किया. लगभग दो-ढाई वर्षों बाद अचानक एक दिन गीताश्री को फोन करके राजेंद्र यादव ने किताब छापने की अनुमति दे दी. शायद इन दो वर्षों में वह गीताश्री को परख रहे थे.

उसके ठीक विपरीत अगर हम राजेंद्र यादव के 76वें जन्मदिन पर साधना अग्रवाल और भारत भारद्वाज के संपादन में प्रकाशित पुस्तक- हमारे युग का खलनायक- की भूमिका देखें, तो वहां अपने ऊपर पुस्तक संपादित करने की योजना को यादव जी ने चंद क्षणों में अनुमति दे दी थी. ये हैं राजेंद्र यादव के व्यक्तित्व के अलग अलग रंग.

तेइस लेखिकाएं और राजेंद्र यादव नाम की इस किताब में तीन खंड हैं, जिनमें अलग-अलग लेखिकाओं के समय-समय पर लिखे लेख और साक्षात्कार हैं. जयंती रंगनाथन के साक्षात्कार के अलावा सारे विचार और साक्षात्कार पूर्व प्रकाशित हैं. लेकिन इस संग्रह की ख़ासियत यह है कि स्त्री विमर्श के इस झंडाबरदार के बारे में तमाम स्त्री लेखिकाओं के विचार एक जगह उपलब्ध हैं. इन तमाम लेखों और साक्षात्कारों में जो एक सामान्य बात प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उभरकर सामने आती है, वह यह है कि राजेंद्र यादव से चाहे आप जितनी भी मतभिन्नता रखें, उनसे चाहे आपके विचार कतई नहीं मिलते हों, लेकिन फिर भी आप उनसे प्यार करते हैं. राजेंद्र जी के व्यक्तित्व में जो खिलंदड़ापन, ज़िंदादिली और हर उम्र के लोगों से खुलकर बात करने का जो हुनर है, वह इस किताब में शिद्दत से रेखांकित होता है. मेरे सामने राजेंद्र यादव पर संपादित दोनों किताबें- *हमारे युग का खलनायक राजेंद्र यादव* (संपादक- भारत भारद्वाज/ साधना अग्रवाल) और *तेइस लेखिकाएं और राजेंद्र यादव* रखी हैं. दोनों पुस्तकों के कवर पेज पर एक ही तस्वीर है, लेकिन मुद्राएं अलग हैं. खलनायक वाली किताब में मुंह में पाइप डाले, चेहरे पर गंभीरता का आवरण हिंदी साहित्य के डॉन की छवि को पुख्ता करता है. वहीं गीताश्री वाली किताब के कवर पर पाइप मुंह से बाहर और चेहरे पर एक ऐसी मुस्कान है जो तेइस लेखिकाओं से घिरे होने पर ख़ुद ही आ जाती है. हालांकि किताबघर से प्रकाशित इस किताब (पेपरबैक) का प्रोडक्शन स्तरहीन है. हर पृष्ठ पर राजेंद्र यादव की अलग-अलग तस्वीर लगी है, लेकिन काग़ज़ की ख़राब क्वालिटी की वजह से फोटो भी बदतर हो गए हैं, जो किताबघर की साख के अनुरूप नहीं हैं. यहीं पर आप हिंदी और अंग्रेजी में छपने वाली किताबों की गुणवत्ता का अंतर महसूस कर सकते हैं. अंग्रेजी के प्रकाशक प्रोडक्शन क्वालिटी से कभी समझौता नहीं करते. काश, हिंदी में भी ऐसा हो पाता.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

सनातन धर्म को समझना आसान नहीं

व्यालोक

सनातन धर्म की गुत्थियों को देखते हुए कई बार इसे कठिन और समझने में मुश्किल धर्म समझा जाता है. हालांकि, सच्चाई ऐसी नहीं है, फिर भी इसके इतने आयाम, इतने पहलू हैं कि लोगबाग कई बार इसे लेकर भ्रमित हो जाते हैं. इसका सबसे बड़ा कारण यह कि सनातन धर्म किसी एक दार्शनिक, मनीषा या ऋषि के विचारों की उपज नहीं है. न ही यह किसी ख़ास समय पैदा हुआ. यह तो समय-समय पर पैदा हुए दार्शनिकों और मनीषाओं के विचारों का संग्रह है. इसका सतत विकास हुआ. समय की धारा के साथ ही यह भी प्रवहमान और विकसमान रहा. साथ ही यह किसी एक द्रष्टा, सिद्धांत या तर्क को भी वरीयता नहीं देता. कोई एक विचार सर्वश्रेष्ठ नहीं मानता है, इसी वजह से सनातन धर्म के कई सारे पूरक सिद्धांत भी बने. इसके खुलेपन की वजह से ही कई अलग नियम इस धर्म में हैं. यही विशेषता इसे अधिक ग्राह्य और सूक्ष्म बनाती है. इसका मतलब यह है कि अधिक सरल दिमाग़ वाले इसे समझने में भूल कर सकते हैं. अधिक सूक्ष्म होने के साथ ही सनातन धर्म को समझने के कई चरण और प्रक्रियाएं हैं, जो इस सूक्ष्म सिद्धांत से पैदा होती हैं. हालांकि इसका मतलब यह नहीं कि सरल-सहज मस्तिष्क वाले इसे समझ ही नहीं सकते. पूरी गहराई में जानने के लिए भले ही हमें गहन और गतिशील समझदारी विकसित करनी पड़े, लेकिन सामान्य लोगों के लिए भी इसके सरल और सहज सिद्धांत हैं.

सनातन धर्म कई बार भ्रमित करनेवाला लगता है और इसके कई कारण हैं. अगर बिना इसके गहन अध्ययन के आप इसका विश्लेषण करना चाहेंगे, तो कभी समझ नहीं पाएंगे. इसका कारण यह कि सनातन धर्म सीमित आयामों या पहलुओं वाला धर्म नहीं है. यह सचमुच ज्ञान का समुद्र है. इसे समझने के लिए इसमें गहरे उतरना ही होगा.

सनातन धर्म के विविध आयामों को नहीं जान पाने की वजह से ही कई लोगों को लगता है कि सनातन धर्म के विविध मार्गदर्शक ग्रंथों में विरोधाभास पाते हैं. इस विरोधाभास का जवाब इसी से दिया जा सकता है कि ऐसा केवल सनातन धर्म में नहीं. कई बार तो विज्ञान में भी ऐसी बात आती है. जैसे, विज्ञान हमें बताता है कि शून्य तापमान पर पानी बर्फ बन जाता है. वही विज्ञान हमें यह भी बताता है कि पानी शून्य डिग्री से भी कम तापमान पर भी कुछ ख़ास स्थितियों में अपने मूल स्वरूप में रह सकता है. इसका जो जवाब है, वही सनातन धर्म के संदर्भ में भी है. जैसे, विज्ञान के लिए दोनों ही तथ्य सही है, भले ही कितने विरोधाभासी हों, उसी तरह सनातन धर्म भी अपने खुलेपन की वजह से कई सारे विरोधी विचारों को ख़ुद में समेटे रहता है.

हम पहले भी कह चुके हैं-एकं सत, विप्रा बहुधा वदंति-उसी तरह किसी एक सत्य के भी कई सारे पहलू हो सकते हैं. कुछ ग्रंथ यह कह सकते हैं कि ज्ञान ही परम तत्व तक पहुंचने का रास्ता है, कुछ ग्रंथ कह सकते हैं कि भक्ति ही उस परमात्मा तक पहुंचने का रास्ता है. सनातन धर्म में हर उस सत्य या तथ्य को जगह मिली है, जिनमें तनिक भी मूल्य और महत्व हो. इससे भ्रमित होने की ज़रूरत नहीं है. आप उसी रास्ते को अपनाएं जो आपके लिए सही और सहज हो. याद रखें कि एक रास्ता अगर आपके लिए सही है, तो दूसरे रास्ते या तथ्य ग़लत हैं. साथ ही, सनातन धर्म ख़ुद को किसी दीवार या बंधन में नहीं बांधता है. ज़रूरी नहीं कि आप जन्म से ही सनातनी हैं. सनातन धर्म का ज्ञान जिस तरह किसी बंधन में नहीं बंधा है, उसी तरह सनातन धर्म ख़ुद को किसी देश, भाषा या नस्ल के बंधन में नहीं बांधता. सच पूछिए तो युगों से लोग सनातन धर्म को अपना रहे हैं.

vyalok.chauthiduniya@gmail.com

पिछले अंक में आपने पढ़ा कि भेसाड़िया की मदद से इक़बाल तस्करी का काम करने लगा जिससे मोगल को परेशानी होने लगी. मोगल ने क्या किया, आगे पढ़िए इस अंक में...

मुसलमान

मोगल का अनुमान था कि उसे देखकर मच्छर भागने का रास्ता ढूंढ़ेगा. शायद भाग निकलने की कोशिश करेगा. नहीं, वह स्थिर दृष्टि से हाथी को देख रहा था. हमला करने के लिए दांव-पेंच सोच रहा था.

मोगल एक क़दम आगे बढ़ा. इक़बाल तैयार ही था. उसकी नज़रों ने पास में पड़े बांस के टुकड़े को देख लिया था. अगर बांस का यह टुकड़ा उठा लेने का मौक़ा मिल जाए तो आसानी से मोगल को छठी का दूध याद दिलाया जा सके.

मोगल दो क़दम और आगे बढ़ा. अब उनके बीच सिर्फ़ तीन क़दम की दूरी थी. मोगल हमला करने की तैयारी में था. हुआ भी ऐसा ही. बिजली की तरह वह इक़बाल पर टूट पड़ा.

उसी पल छलांग मारकर इक़बाल ने बांस का टुकड़ा उठा लिया और दूसरे पल मोगल की पीठ पर जमाया. इसका उस पर कोई ख़ास असर नहीं हुआ. इक़बाल ने फिर बांस उठाया और मोगल ने उसका हाथ रोककर हाथ में से बांस खींच लिया.

अब बांस मोगल के हाथ में था. इक़बाल को वह बेरहमी से पीट रहा था. इक़बाल ने अपने दोनों हाथ सिर पर रख लिए थे, जिससे कान, आंख अथवा सिर के नाज़ुक हिस्सों को चोट न पहुंचे. साथ ही मौक़ा मिलने पर मोगल को मुंह पर मुक्का भी लगाता जाता था.

उसका एक मुक्का ठीक निशाने पर लगा, पर मोगल के नथुने नहीं फूटे, ख़ून नहीं निकला. साथ ही बांस का अंधाधुंध हमला इक़बाल पर निरंतर जारी था.

नूरबाग़ की बाड़ी में बजते बैंड-बाजे की आवाज़ें बढ़ रही थीं. बाड़ी के बाहर भिखारियों की भीड़ भी बढ़ रही थी. ये कंगाल, रईसों के तमाशे देखने, अचूक हाज़िर हो जाते थे. यहां अंधेरे में इक़बाल की दयनीय स्थिति देखने वाला सिर्फ़ एक कुत्ता था, जो दुम हिलाता थोड़े अंतर पर खड़ा था.

इक़बाल की सांसें फिर तेज़ हो गईं. किसलिए? मुक्के क्यों कमज़ोर पड़ते जा रहे थे?

डोंगरी के तब के दादा अब्दुल रहमान काफरिया का एक घूंसा दुश्मन की खोपड़ी नारियल की तरह तोड़ डालता था. इक़बाल का मुक्का कम से कम नथुने ज़रूर फोड़ता था.

अब तक वह बांस के कई फटके खा चुका था. और ज़्यादा मार खाने की उसमें अब शक्ति नहीं थी. वह लुढ़क जाए, इसके पहले क़रीब के डोंगरी पुलिस-स्टेशन से निकली जीप मोगल ने दूर से आती देखी. जैसे कुछ हुआ न हो, इस तरह बांस फेंककर चलता बना.

इक़बाल पास के मकान के प्रवेश में घुसकर छिप गया. पुलिस जीप रुटीन राउंड पर निकली थी, गुज़र गई. इक़बाल ने बाहर निकलने की कोशिश की पर वह लड़खड़ाकर गिर पड़ा.

अब उसे ख़याल आया. उसने गहरी मार सहन की थी, हड्डी-पसली हिल गई थीं, पीठ सूज गई थी, सिर में दर्द उठ रहा था.

उसने दीवार का सहारा लिया. बाक़ी बची सारी ताक़त इकट्ठी कर वह फिर खड़ा हुआ. यहां से डोंगरी पहुंचने में उसने आधा घंटा लिया, जबकि अंतर पांच मिनट का भी नहीं था.

सीधे घर न जाकर वह पालखी मुहल्ले में दाख़िल हुआ. यहां प्रवेश में डॉ. खीमाणी का दवाखाना है. उसके बंद होने का समय उनके मरीज़ों की संख्या पर निर्भर करता है.

इक़बाल दवाखाने में दाख़िल हुआ और एक बेंच पर बैठ गया. वह बुरी तरह हांफ रहा था. दूसरी ओर पूरे शरीर में पीड़ा उठ रही थी.

उसने देखा तो मरीज़ों में उसके सिवा दूसरा कोई नहीं था. वह फिर खड़ा हुआ और अंदर केबिन में चला गया.

इक़बाल का चेहरा देखते ही डॉक्टर समझ गया, कहीं से पिटकर आया होगा और डोंगरी के डॉक्टरों के लिए यह कोई नई बात नहीं थी. फ़ौरन उसने नाक जांची, आंखें देखकर जीभ पर बैटरी का प्रकाश डाला, गला देखा, स्टेथेस्कोप छाती पर रख भीतर की हरकत जानी.

नूरबाग़ की बाड़ी में बजते बैंड-बाजे की आवाज़ें बढ़ रही थीं. बाड़ी के बाहर भिखारियों की भीड़ भी बढ़ रही थी. ये कंगाल, रईसों के तमाशे देखने, अचूक हाज़िर हो जाते थे. यहां अंधेरे में इक़बाल की दयनीय स्थिति देखने वाला सिर्फ़ एक कुत्ता था, जो दुम हिलाता थोड़े अंतर पर खड़ा था.

तू हुसेन अली का बेटा है न? एक बोतल में से पेन-किलर (दर्दनाशक दवा) निकाल उसे पानी के साथ वहीं निगल जाने के लिए देते हुए डॉक्टर ने सवाल किया.

इक़बाल ने इशारे में हां कहा.

क्या काम करता है ?

टिकिया गले से नीचे उतारते हुए उसे थोड़ा सोचना पड़ा.

देख बेटा, डॉक्टर ने उसे स्नेहभर शब्दों में समझाया, दाई से पेट नहीं छिपाया जाता. किसी ने तेरी जमकर पिटाई की है, यह तो साफ ज़ाहिर है, पर तुझे अस्थमा कैसे हुआ, यह अभी भी समझ में नहीं आता.

इक़बाल समझ गया, वह हांफने क्यों लगा था. उसके मुक्के कमज़ोर क्यों पड़ गए थे. उसे अस्थमा कैसे हुआ, इसका उत्तर भी उसे मिल गया. पर डॉक्टर को यह बताना उसे ठीक नहीं लगा. डॉ. खीमाणी भला आदमी था. उसने भी दोबारा नहीं पूछा.

उस रात गोली का असर होने पर उसे नींद आ गई, पर उसे मीठी नींद नहीं कहा जा सकता. उसका अजाग्रत मन उसे चेता रहा था. ख़ुदा नहीं चाहता कि वह शराब उतारने का धंधा करे. शायद उसी नासमझी की उसे सज़ा मिली थी. उसे अस्थमा हो गया था.

ख़ुदा ख़ुद चाहता है कि वह नेक राह पर आगे बढ़े. क्या दो नंबर का धंधा इतना ज़रूरी है ? इसके अलावा उसका सीना खोखला हो गया था और खोखले सीने के साथ अंधेरी दुनिया में ज़िंदा नहीं रहा जा सकता. जीने के लिए कोई नया मार्ग ढूंढ़ना ज़रूरी था.

भवंस कॉलेज में उसने दाख़िला लिया. उस समय उसके घर की हालत, फुल स्पीड में दौड़ती कार गुलाटी खाकर उलट जाए, ऐसी थी. यह आर्थिक सांप-सीढ़ी का खेल उसे सालों तक खेलना था. जीवन के उतार-चढ़ाव उसके साथ-साथ यात्रा करने वाले थे. एक पल वह शिखर पर जाकर बैठने वाला था, दूसरे क्षण खाई में गिरने वाला था.

जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट्स में प्रवेश मिलने पर मेरी ख़ुशी की सीमा न रही, पर मेरी मां सोच में पड़ गई. उसकी इच्छा थी कि किसी कॉलेज में दाख़िल होकर डॉक्टर या वकील बनूं, ताकि कॉलेज छोड़ने के बाद मुझे माहवार हज़ारेक रुपये वेतन की नौकरी मिल सके.

तुम्हारे इस जे.जे. में पांच वर्ष निकालने के बाद तुम्हें क्या मिलेगा? उसने आशाभरे स्वर में पूछा.

इसका जवाब मेरे पास नहीं था. था उत्साह, थी उमंग, थे सपने और ये सब मेरी मां के लिए अर्थहीन थे.

वह हताश हो, इसके पहले मैंने उसे आश्वासन देने के लिए बताया कि किसी ऐड एजेंसी में मैं कला-निर्देशक बनकर उसकी कल्पना से भी अधिक कमाऊंगा. न जाने क्यों उसे भरोसा नहीं हुआ. मेरे शब्दों में सच्चाई नहीं थी. शायद उसकी खनक भी न हो.

वह सिर्फ़ मेरा चेहरा देखती रही. मेरा भविष्य धुंधला था, यह उसने मेरे आर-पार देख लिया हो तो ताज्जुब नहीं. सही मानों में मेरे जीवन का संघर्ष कॉलेज के पांच वर्ष बिताने के बाद शुरू होने वाला था. सांप-सीढ़ी के खेल में मैं कहीं अटक जाने वाला था.

मेरे चाचा महमूद हुसेन को जब मालूम हुआ कि जे.जे. में मुझे प्रवेश मिल गया है तो उनके गोल चेहरे के साथ उनकी भूरी आंखें भी चमक उठीं. फिर इन्हीं आंखों द्वारा उन्होंने मेरा नखशिख निरीक्षण किया और जेब से सौ-सौ के तीन नोट निकालकर मेरे समाने धर दिए.

मुझे अचरच हो यह बिलकुल स्वाभाविक था, क्योंकि इतने सारे रुपये एक साथ मैंने पहले कभी नहीं देखे थे. (उस समय इक़बाल हज़ारों में खेल चुका था.) दूसरा यह कि इन तीन सौ रुपयों का मैं करूं क्या?

ऐसे फटे-पुराने चीकट कपड़े पहनकर तू कॉलेज जाएगा? चाचा का प्रश्न सुनाई पड़ते ही मुझे अपने सवाल का जवाब मिल गया, जा अपने मनपसंद कपड़े रेडीमेड से ख़रीद ले. और हां, बरसात आ गई है. रेनकोट और गमबूट लेना भी नहीं भूलना.

शायद कुछ रुपये घटें, यह सोचकर उन्होंने सौ का एक नोट और बढ़ा दिया, सुरती ख़ानदान का पहला लड़का कॉलेज में जा रहा है, कोई मज़ाक नहीं. टिप-टॉप जाना चाहिए.

(अगले अंक में जारी)

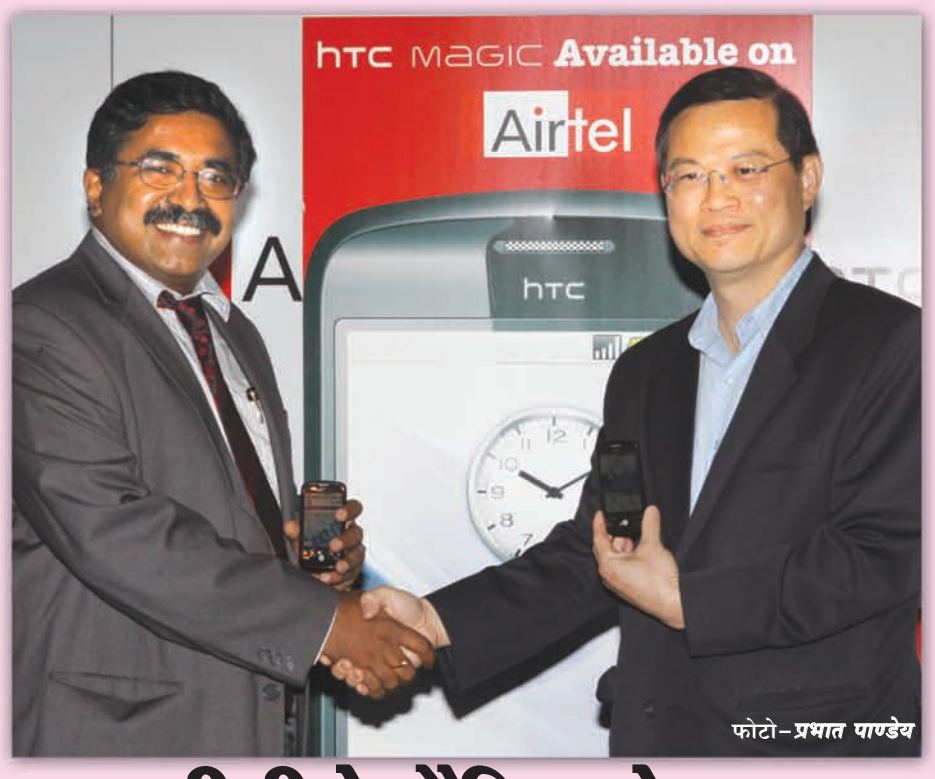

फोटो–प्रभात पाण्डेय

एचटीसी के मैज़िक के साथ एयरटेल की जुगलबंदी

मोबाइल के बाज़ार में अभी बड़ी सरगर्मी है. मंदी के दौरान रुके हुए लांच और नई तकनीकों से लैस उपकरण रोज़ दिखाई दे रहे हैं. इसी क्रम में एचटीसी और भारती एयरटेल ने साथ मिलकर भारत का पहला एंड्रॉयड मोबाइल फोन बाज़ार में उतारा है. एंड्रॉयड तकनीक का इस्तेमाल करके एयरटेल ने एचटीसी के मैज़िक को ग्राहकों के लिए नए रंग–रूप में उतारा है. एंड्रॉयड, ब्लैकबेरी की तरह ही एक मोबाइल प्रसारण सुविधा है. इस सुविधा के ज़रिए यूजर्स को कई तरह के फीचर्स उपलब्ध कराए जा सकते हैं. अगर एचटीसी और एयरटेल के इस मेल को विस्तार में समझें, तो जहां एचटीसी ने अपने हैंडसेट मैज़िक के ज़रिए एयरटेल को अपनी एंड्रॉयड सुविधा लाने का बढ़िया प्लेटफार्म दिया है, वहीं एयरटेल ने एचटीसी के फीचर्स का पूरा इस्तेमाल कर यूजर्स के लिए भी सुविधाएं दी हैं. एचटीसी के मैज़िक में स्मार्ट–डायलर, ऑन–स्क्रीन की–बोर्ड जैसी सुविधाएं हैं.

कैमरा–फोन पसंद करने वालों के लिए इसमें 3.2 मेगापिक्सल ऑटोमेटिक फोकस कैमरा लगा हुआ है. इससे स्थिर चित्र और वीडियो दोनों लिए जा सकते हैं. इसकी 3.2 इंच लंबी स्क्रीन ब्राउज़िंग और फिल्में देखने के लिए उपयुक्त है. इसमें हाई–स्पीड इंटरनेट कनेक्टिविटी सुविधा है. इसमें 512 एमबी रोम (रीड–ओनली मेमोरी) और 288 एमबी रैम (रैंडम–एक्सेस मेमोरी) है. साथ ही ब्ल्यूटूथ और बाक़ी सामान्य सुविधाएं तो हैं ही.

उधर एंड्रॉयड के ज़रिए कई सुविधाएं मुहैया कराएगा जिनमें पोर्टफोलियो और हैलो ट्यून्स मैनेजर, वेदर चैनल, मोबशेयर (तस्वीरें शेयर करने के लिए), इन–मोबाइल सर्च, सिटी सर्च जैसी सुविधाएं शामिल हैं. एचटीसी मोबाइल का दुनिया का जाना माना नाम है और एयरटेल भारत की सबसे बड़ी मोबाइल सर्विस देने वाली कंपनी है, ऐसे में इन दोनों के मिलन से बना एचटीसी मैज़िक एंड्रॉयड बाज़ार में क्या गुल खिलाएगा, यह देखने वाली बात होगी.

बहुउद्देशीय पहचान पत्र

भारत के नागरिकों के लिए जल्द ही अपनी पहचान साबित करना बहुत आसान हो जाएगा. अलग–अलग पहचान पत्रों के झंझट को ख़त्म करते हुए सरकार ने एक बहु–उद्देश्यीय राष्ट्रीय पहचान पत्र लाने की घोषणा की है. यह पहचान पत्र नागरिकों के लिए तो सुविधाजनक होगा ही, नई तकनीकों और सुविधाओं से भी लैस होगा. दरअसल यह पह9+ चान पत्र एक स्मार्टकार्ड होगा, जिसमें 16 किलोबाइट मेमोरी होगी. यह आईएसओ/आईईसी 7816 के मापदंडों के आधार बना होगा और इसमें यात्रा संबंधी सुविधाओं के लिए ऑपरेटिंग सिस्टम भी लगा रहेगा. यह कार्ड 10 साल के लिए डाटा इकट्ठा कर सकेगा.

इसे किसी भी तरह की छेड़छाड़ से सुरक्षित बनाने के लिए सामान्य फीचर्स के अलावा इसमें असेमेट्रिक क्रिप्टोग्राफी और सेमेट्रिक क्रिप्टोग्राफी की तकनीक भी इस्तेमाल की गई है. इस कार्ड की तकनीकी विकास में राष्ट्रीय सूचना केंद्र ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है. इस पहचान पत्र के डिज़ाइन और निर्माण में क़रीब 30 रुपये प्रति कार्ड का ख़र्च होगा. हालांकि अन्य सुविधाओं के जुड़ने से ख़र्च बढ़ भी सकता है. कुछ लोगों ने कार्ड में मेमोरी और बढ़ाने पर ज़ोर दिया है. उनका कहना है कि 16 केबी की मेमोरी में पूरा डाटा स्टोर नहीं किया जा सकता. हालांकि बहुउद्देशीय पहचान पत्र की योजना भारत में बहुत पहले ही शुरू की गई थी, लेकिन अभी तक उसमें तेज़ी नहीं आई थी. बार–बार हो रहे आतंकी हमलों और मुंबई कांड के बाद अब सरकार इस मामले में ज़्यादा गंभीर है. इसी सिलसिले में नागरिकों को विशिष्ट पहचान क्रमांक या यूनीक आईडेंटिफिकेशन नंबर (यूआईएन) देने की प्रक्रिया भी शुरू हो गई है.

सरकार ने इसके लिए एक विशिष्ट पहचान प्राधिकरण या यूनीक आईडेंटिफिकेशन अथॉरिटी भी बना दी है. इसके प्रमुख के तौर पर इंफोसिस के पूर्व प्रमुख नंदन नीलकेणी की नियुक्ति की गई है. इस प्राधिकरण को यूआईएन देने के लिए नीतियों और कामकाज के तरीक़े को तय करने का ज़िम्मा मिला है. 27 जनवरी 2009 को गठित यह प्राधिकरण पहले चरण में नौ राज्यों और चार केंद्र शासित प्रदेशों में यूआईएन की प्रक्रिया को पूरा करेगा. पहले चरण में गुजरात, महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और केरल के साथ दादर–नगर हवेली, अंडमान–निकोबार, पुड्डुचेरी (पांडिचेरी) और लक्षद्वीप भी शामिल होंगे.

शुरुआती दौर में 100 करोड़ के बजट से शुरू होने वाले इस प्रोजेक्ट का पूरा बजट क़रीब 10000 करोड़ तक होने की उम्मीद है. हालांकि इस प्रोजेक्ट से होने वाले फ़ायदे के सामने यह ख़र्च कुछ भी नहीं होगा. यूआईएन से सभी नागरिकों को एक समान पहचान मिल जाएगी और कई पहचान पत्र रखने का झंझट भी नहीं रहेगा.

इसके अलावा आगे चलकर यही नंबर पेंशन, स्वास्थ्य और शिक्षा सेवाओं का आधार भी बनेगा. इस कार्ड के बन जाने से सरकार के लिए

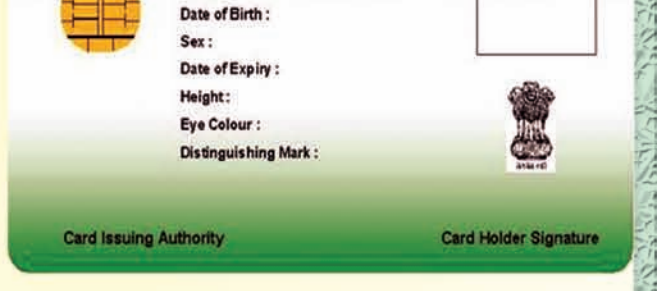

नागरिकों की उम्र, स्थिति, रोज़गार और स्वास्थ्य के बारे में जानकारी रखना आसान हो जाएगा. बुज़ुर्गों के लिए पेंशन, स्वास्थ्य और युवाओं के लिए शिक्षा की सुविधाएं इसी विशिष्ट पहचान पत्र के आधार पर दी जा सकेंगी. इसके अलावा यही पहचान पत्र आगे चलकर नागरिक स्मार्ट कार्ड योजना में भी काम आएगा, जिसमें जनसुविधाओं पर सब्सिडी की व्यवस्था मिलने की बात कही गई है.

यह पहचान क्रमांक अमेरिकी सोशल सेक्युरिटी नंबर की तर्ज़ पर दिया जाएगा. वैसे अवैध रूप से भारत में रहने वाले लोगों की पहचान करने और उन्हें पकड़ने के लिए ऐसी व्यवस्था की मांग बहुत समय से की जा रही थी. ख़ासकर तटीय इलाक़ों में इसकी बहुत ज़रूरत महसूस की जा रही थी. पाकिस्तान में भी एक राष्ट्रीय पहचान नंबर है. चूंकि भारत दुनिया का दूसरा सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है, इसलिए हर व्यक्ति के लिए यूआईएन और पहचान पत्र मुहैया कराना एक लंबी और जटिल प्रक्रिया है. उम्मीद है कि सरकार इस बात को समझते हुए इसकी तमाम बाधाओं को समय पर समाप्त कर लेगी.

आपके पीसी का कवच बनेगा : मोरो

माइक्रोसॉफ्ट का नाम कंप्यूटर की दुनिया से कुछ ऐसे ही जुड़ा हुआ है, जैसे कंप्यूटर का ही कोई हिस्सा हो. हालांकि कंप्यूटर क्रांति को विश्व के हर कोने तक पहुंचाने वाली कंपनी माइक्रोसॉफ्ट (एमएस) को अब नए खिलाड़ियों से कड़ी टक्कर मिल रही है. ऐसे में इन नई चुनौतियों से निपटने के लिए एमएस ने भी अपने रंग–रूप में बदलाव शुरू कर दिए हैं. पिछले दिनों अपने नए सर्च इंजन बिंग को बाज़ार में उतारने के बाद अब अपना नया एंटी–मालवेयर (एंटी–वायरस) बाज़ार में उतारा है. फ़िलहाल एमएस का *विंडोज लाइव वनकेयर* बाज़ार में है, लेकिन एमएस ने घोषणा कर दी है कि 30 जून के बाद से *वनकेयर* की बिक्री ख़त्म कर दी जाएगी. वनकेयर की जगह लेने वाले इस नए मालवेयर को अभी कोई आधिकारिक नाम नहीं दिया गया है. इसे फ़िलहाल *मोरो* के कोडनाम से पुकारा जा रहा है. *मोरो* शब्द दरअसल माइक्रोसॉफ्ट और अमेरिकी परिकथा नायक *ज़ोरो* के मेलजोल से बना है. *मोरो* के पीछे एमएस का मक़सद छोटे उपभोक्ताओं तक पहुंचाने का है. दरअसल *मोरो* में कम कंप्यूटिंग संसाधनों का प्रयोग किया जाएगा, ऐसे में यह सॉफ्टवेयर कम क्षमता और फ्रीक्वेंसी वाले कंप्यूटरों पर भी आसानी से चल सकता है. यह एंटी–मालवेयर उन सभी जगहों पर उपलब्ध होगा, जहां वनकेयर उपलब्ध है. इसे बिना किसी एडिशनल क़ीमत के डाउनलोड किया जा सकता है. एमएस के *मोरो* को आधिकारिक रूप से पहली जुलाई को बाज़ार में उतारने की संभावना जताई जा रही है. हालांकि कंपयूटर और सॉफ्टवेयर की दुनिया के जानकारों को भी इस घोषणा की उम्मीद नहीं थी. अब विशेषज्ञ इसे अपनी छवि बदलने और फिसलते बाज़ार पर दुबारा क़ब्ज़ा करने की कोशिश का हिस्सा बता रहे हैं.

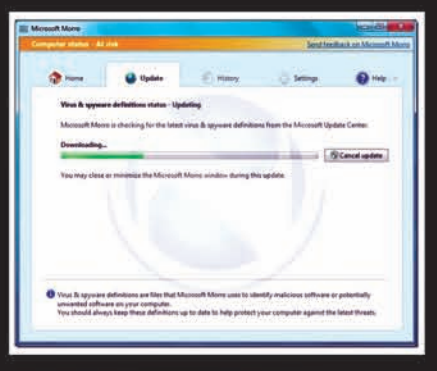

प्याज अब नहीं रुलाएगा

प्याज की खेती करने वाले किसानों के लिए ख़ुशख़बरी है. राष्ट्रीय प्याज और लहसुन अनुसंधान केंद्र ने उनके लिए एक ऐसी मशीन बनाई है, जिससे फ़सल की ग्रेडिंग आसान हो गई है. ग्रेडिंग ठीक हो जाने से किसानों को वाज़िब क़ीमत मिलना तय हो जाएगा. अभी ग्रेडिंग को लेकर किसानों के साथ अक्सर नाइंसाफी होने की शिकायत की जाती है. हाथ से प्याज की गुणवत्ता तय करने से उसमें मनमानी की गुंजाइश बनी रहती है. लेकिन अब मशीन आ जाने से इस तरह की शिकायतें दूर हो सकती हैं. बहरहाल, पहली नज़र में विभिन्न प्रकोष्ठ वाला तिरछा यह यंत्र देखने में हाथ से चलने वाली आटे की चक्की की तरह दिखता है. लेकिन ग़ौर से देखने पर यह ओनियन ग्रेडर लगता है. राष्ट्रीय प्याज और लहसुन अनुसंधान केंद्र के मुताबिक प्री मार्केटिंग ग्रेडिंग एक स्तर है, जो प्याज के मूल्य निर्धारण में महत्वपूर्ण अंतर लाएगा. इस गैजट के केंद्र में डबल रोलर तकनीक होने के कारण यह गोल सब्जियों और फल को उसके व्यास के जरिए दोनों में अंतर कर लेता है. प्याज के अलावा यह लहसन, नींबू और गोल आलू को भी हैंडल कर सकता है. एग्री मार्केट में ग्रेडिंग महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है. मुख्य रूप से निर्यात करने में. ग़ौरतलब है कि महाराष्ट्र में प्रत्येक वर्ष 12 से 13 लाख टन प्याज का उत्पादन होता है. इसमें से अधिकतर का ग्रेडिंग हाथों से किया जाता है. इस तरीक़े से समय भी बर्बाद होता है और यह ख़र्चीला भी पड़ता है. वैसे एक श्रमिक को इस काम के लिए प्रति घंटे 20 रुपये दिए जाते हैं. एक सक्षम ओनियन ग्रेडर एक घंटे में सौ किलो प्याज को अलग कर सकता है. हाथ से इसके लिए पांच गुणा अधिक काम करना पड़ता है. वर्तमान में इसकी क़ीमत 14,000 रुपये है. इस वित्तीय वर्ष में स्टेट मार्केटिंग डिपार्टमेंट दो सौ मशीन बेचने की योजना बना रहा है. ख़रीदार को 25 फीसदी का अनुदान दिया जाएगा.

ड्राय फ्रूट्स से निखारें त्वचा

आज तक हम अपने सौंदर्य को निखारने के लिए जड़ी–बूटियों, फलों व सब्जियों का उपयोग फेस पैक के रूप में करते थे, किंतु अब ज़माना बदल गया है. अब तो सौंदर्य निखारने के लिए फेस पैक के रूप में सूखे ड्राय फ्रूट्स तक का प्रयोग होने लगा है.

सूखे मेवे केवल हमारी सेहत के लिए ही नहीं, बल्कि हमारे सौंदर्य के लिए भी फ़ायदेमंद होते हैं. सूखे मेवे के फेस पैक का फ़ायदा यह होगा कि इनका आपकी त्वचा पर कोई साइड इफेक्ट नहीं होगा, बल्कि त्वचा को एक नई रंगत देगा. अखरोट खाना और उसे फेस पैक के तौर पर लगाना दोनों ही स्वास्थ्य और सौंदर्य के लिए फायदेमंद होता है. अखरोट का फेस पैक बनाने के लिए उसके छिलके को महीन पीसकर उसमें मुल्तानी मिट्टी और दही मिलाएं. फिर इस मिश्रण को चेहरे पर लगाकर कुछ देर बाद ठंडे पानी से धो लें. फिर देखिए, आपकी त्वचा कितनी चमकदार हो जाती है.

वैसे अखरोट के तेल में तिल का तेल और लेवेंडर का तेल मिलाकर इसका प्रयोग मसाज के रूप में भी कर सकते हैं. काजू सभी का जाना–पहचाना व पसंदीदा मेवा है. सभी इसको बहुत चाव से खाते हैं लेकिन क्या कभी आपने इसका प्रयोग सौंदर्य निखारने के लिए किया है?

काजू तैलीय, शुष्क आदि हर तरह की त्वचा के लिए लाभप्रद होता है. अगर आपकी त्वचा तैलीय प्रकृति की है तो आप काजू को रात भर दूध में भिगोकर सुबह उसे महीन पीसकर उसमें मुल्तानी मिट्टी, नींबू या दही की थोड़ी मात्रा मिलाकर चेहरे पर लगाएं. शुष्क त्वचा वाले बारीक पिसे हुए काजू में मुल्तानी मिट्टी व शहद मिलाकर अपनी त्वचा पर लगाएं. देखिए आपकी त्वचा में कुदरती चमक आ जाएगी. सूखा नारियल हमारी त्वचा की झुर्रियां, मुंहासे व दाग़–धब्बे मिटाने में बहुत फ़ायदेमंद होता है. नारियल की गिरी के साथ–साथ उसका पानी भी त्वचा की खोई रौनक लौटाने में बहुत अधिक मददगार होता है. नारियल के तेल में एलोवेर जेल मिलाकर त्वचा पर लगाने से सूर्य की हानिकारक किरणों से त्वचा की रक्षा की जा सकती है. त्वचा के दाग़–धब्बे मिटाने के लिए एक चम्मच मुल्तानी मिट्टी, एक चम्मच केओलिन पाउडर, चुटकी भर हल्दी को नारियल के पानी में मिलाकर पेस्ट बना लें. फिर चेहरे पर लगाएं और कुछ देर बाद ठंडे पानी से मुंह धो लें. कुछ सप्ताह ऐसा करें. देखिए, आपके चेहरे से कितनी जल्दी दाग़–धब्बे कम हो जाते हैं और त्वचा का रंग धीरे–धीरे निखरने भी लगेगा.

पानी वाले नारियल के फ़ायदे

1. हिचकी और नकसीर में कच्चे नारियल का पानी पीना लाभ देता है.
2. नारियल के पानी में खीरे का रस मिलाकर लगाने से मुंहासों से रक्षा होती है.
3. नारियल के सेवन से रक्तविकार का नाश होता है.
4. नारियल पानी के नियमित सेवन मोटापे से बचाता है.
5. रूसी और सिरदर्द में नारियल का तेल बहुत फ़ायदेमंद होता है.
6. उल्टियां होते समय अगर नारियल का पानी पिएं तो उल्टी बहुत जल्द ही बंद हो जाती है.
7. नारियल का पानी चिकनगुनिया की रोकथाम में भी सहायक है. यह स्वाद और सेहत का संगम है तथा कुदरत का अनमोल ख़ज़ाना है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

कम नहीं होतीं महिला खिलाड़ियों की मजबूरियां

महिला हॉकी टीम कज़ान में चैंपियंस चैलेंज टूर्नामेंट जीतकर लौटी है. सायना नेहवाल एक के बाद एक सफलता के पायदान चढ़ रही हैं. इंडोनेशिया में सुपर सीरीज़ बैडमिंटन जीतकर वह अपने देश लौटी हैं. शतरंज में कोनेरू हंपी और द्रोणावल्लि हरिका समेत एक के बाद एक खिलाड़ियों की जैसे कतार है. सानिया मिर्ज़ा की सनसनी से तो हर कोई वाक़िफ़ है ही. महिला क्रिकेट टीम की खिलाड़ियों को भले ही कोई ख़ास पहचान न मिली हो, लेकिन टी-20 विश्व कप में वे पुरुषों से बेहतर खेलीं. सेमीफाइनल तक का सफर कोई कम नहीं होता. इन सारी उपलब्धियों के बीच भी तस्वीर के किसी कोने में एक डर, एक आशंका पलती दिखाई देती है. कई बार महिला चैंपियन के चेहरे पर एक सवाल साफ दिखाई दे रहा होता है. वह यह कि महिला हैं, इसी वजह से बेहतर ट्रीटमेंट नहीं मिल रहा ना. मामला सिर्फ़ पुरुषों से बराबरी का नहीं. मामला पुरुषों के बीच रहकर इस क़िस्म के लोगों से बचना है, जिनके लिए महिला एक वस्तु से ज़्यादा कुछ नहीं.

वी चामुंडेश्वरनाथ

पिछले दिनों आंध्र प्रदेश में कुछ लड़कियों ने उस शख्स पर आरोप लगाया, जो टी-20 वर्ल्ड कप में पुरुषों की टीम का मैनेजर था- चामुंडेश्वरनाथ. जी हां, यही है वह नाम. उनके बारे में लड़कियों का कहना है कि टीम में खिलाने के नाम पर चामुंडेश्वरनाथ ख़ुद को अश्लील हरक़तों के लिए स्वतंत्र मानते रहे हैं. उनके ख़िलाफ़ आंध्र प्रदेश की गृह मंत्री से शिकायत भी की गई है. चामुंडेश्वरनाथ का रिकॉर्ड कोई साफ-सुथरा नहीं है. अश्लील हरक़तों से लेकर मैच फिक्सिंग की कालिख तक में उनका नाम आता है. यह सच है कि अभी तक कुछ साबित नहीं हुआ है. यह भी सच है कि साबित हुए बिना किसी को दोषी करार देना ग़लत है. लेकिन यह भी सच है कि छेड़छाड़ के मामले में आमतौर पर शिकायत नहीं होती है. अगर ऐसा होता, तो कम से कम खेल की दुनिया में तो हज़ारों शिकायतें आई होतीं.

महिला हॉकी की एक खिलाड़ी ने अपने गोलकीपिंग कोच पर आरोप लगाया था. कोच एडवर्ड एलोशियस भारत के लिए खेल चुके हैं. नवनीत कौर नाम की खिलाड़ी ने आरोप लगाया था कि एडवर्ड उनके साथ अश्लील बातें करने की कोशिश करते हैं. कोच और खिलाड़ी दोनों को इसके बाद टीम से हटा दिया गया. यह मामला भी अब तक साबित नहीं हुआ है. यहां कोच की तरफ़ से खिलाड़ी पर और खिलाड़ी की तरफ़ से कोच पर आरोप लगते रहे हैं. लेकिन यह ऐसा मुद्दा है, जिसमें ज़्यादा लोग सामने आते ही नहीं. जो आते हैं, इनका करियर बहुत लंबा नहीं होता. एक समय तैराक संगीता रानी पुरी ने खुलेआम यह कहा था कि खिलाड़ियों का देह शोषण होता है. लेकिन संगीता को पता था कि इसके बाद इन्हें ज़्यादा समय इस फील्ड में नहीं रहना है. वह देश छोड़कर चली गई थीं. नाम न लेते हुए इस बारे में बात करने वालों की कोई कमी नहीं. सिडनी ओलंपिक में पदक जीतने वाली भारोत्तोलक मल्लेश्वरी कहती हैं कि महिला होते हुए ख़ुद को आरोपों से बचाए रखना आसान नहीं है. तमाम खिलाड़ी मानते हैं कि ख़ुद को बचाने में जितनी ऊर्जा ख़र्च हो जाती है, उसके बाद भी अगर कोई महिला चैंपियन होती है, तो उसे पुरुषों से ज़्यादा श्रेय मिलना चाहिए. मल्लेश्वरी के लिए उनके पति का सहयोग बहुत काम आया. सानिया मिर्ज़ा के साथ उनकी मां या पिता हमेशा होते हैं. यह किसी पुरुष खिलाड़ी के लिए ज़रूरी नहीं है. सायना नेहवाल के पास कोच के तौर पर गोपीचंद रहे हैं. गोपी को बैडमिंटन जगत के सबसे सज्जन लोगों में जाना जाता है. ये लोग लकी रहे कि उन्हें साथ मिला. वरना कई मामलों में पता भी नहीं चलता. जैसे एक एथलीट का क़िस्से को लीजिए. उसने एथलेटिक्स इसीलिए छोड़ दी, क्योंकि एक अधिकारी ने इसे लगातार तंग किया. लगातार बताया गया कि अगर तुम साथ सोने को तैयार नहीं, तो करियर तबाह कर दिया जाएगा. इस तरह के एक नहीं, हज़ारों क़िस्से हैं. यह अलग बात है कि ज़्यादातर खिलाड़ी इस मामले में चुप ही रहना चाहती हैं. मामले का दूसरा पहलू भी है. चक दे इंडिया में एक सीन है, जिसमें एक लड़की कोच के साथ रिश्ता बनाने को तैयार है. लेकिन वह कप्तान होना चाहती है. यह असल में सिर्फ़ रील लाइफ नहीं, सच्चाई दिखाई गई है. वह खिलाड़ी भी कोई छोटी-मोटी नहीं है. इस तरह की बातें भी होती हैं, जब लड़की की तरफ़ से इस तरह के ऑफर आ रहे हों. मामला यहीं नहीं रुकता. अगर महिला टीम का कोच कोई पुरुष है, तो मामला और संगीन हो जाता है. एक कोच के घर पर कुछ लोगों ने फोटोग्राफ भेज दिए थे, जहां कोच ने खिलाड़ी के कंधे पर हाथ रखा हुआ था. इसे लेकर उस कोच के घर में भी ख़ासा विवाद रहा. इस तरह के काम आमतौर पर जलन की वजह से किए जाते हैं. कोच के किसी खिलाड़ी या असिस्टेंट कोच या मैनेजर के साथ अफेयर की अफ़वाह उड़ना बड़ा आम है.

वाकई बिना आग के धुआं नहीं होता. लेकिन भारत में महिला खेलों से जुड़े तमाम धुएं आग के बग़ैर ही उठे हैं. और कई बार धुएं के बग़ैर भी आग धधकती हुई देखी गई है. यह ऐसी दुनिया है, जो कालिख से भरी हुई है. लेकिन जैसा सायना नेहवाल कहती हैं कि बग़ैर चुनौती के सफल होने में मज़ा कहां है. यक़ीनन, इन सारी बाधाओं को पार करके चैंपियन बनने का अपना एक अलग अहसास है. तमाम खिलाड़ी इन सारी बाधाओं से निकलकर चैंपियन बनती हैं. ये वाकई हीरे हैं. उन्हें कोयलों की खदानों के बीच अपनी जगह ढूंढनी होती है. अगर इच्छाशक्ति हो, तो तमाम पुरुषों की अजीब सी निगाहों से गुज़रते हुए भी उन्हें अपनी मंज़िल मालूम होती है.

ऐसी खिलाड़ियों की कमी नहीं, जो ऐसे माहौल में टूट गईं. कुछ ऐसी भाग्यशाली भी हैं, जिन्हें ऐसा परिवार या सपोर्ट सिस्टम मिला कि इतने बुरे हालात न झेलने पड़ें. कुछ ऐसी भी हैं, जिन्होंने अपने हौसले और जज़्बे से हर मुश्किल को जीता और चैंपियन बन गईं.

राकेश चतुर्वेदी

feedback.chauthiduniya@gmail.com

सम्मान की हक़दार है महिला हॉकी टीम

भारतीय महिला हॉकी टीम ने चैंपियंस ट्रॉफी टायर-2 का ख़िताब जीत लिया. इस जीत के बाद अब वह चैंपियंस ट्रॉफी के टायर-1 में खेलेगी, जिसमें जीत हासिल करके वह महत्वपूर्ण चैंपियंस ट्रॉफी में खेलने की हक़दार हो जाएगी. यानी यह जीत काग़ज़ पर और आंकड़ों के खेल में बहुत बड़ी नहीं है. ऐसे में अचरज नहीं कि यह ख़बर खेल के पन्ने में एक दिन थोड़ी सी जगह पाने के बाद निपटा दी गई. हालांकि जब

हवाई अड्डे पर फंसी भारतीय टीम.

हम इस जीत की ख़बर को एक और ख़बर से जोड़कर देखते हैं, तो इसके मायने बदल जाते हैं. यह ख़बर कुछ दिनों पहले आई थी. ख़बर कुछ यूं थी कि चैंपियस ट्रॉफी-2 में खेलने जा रही भारतीय महिला हॉकी टीम के खिलाड़ियों को एयरपोर्ट से वापस लौटना पड़ा. इसलिए कि उनके पास ट्रांजिट वीज़ा नहीं था. टीम को फ्रैंकफर्ट (जर्मनी) के रास्ते कज़ान (रूस) जाना था, इसके लिए ट्रांजिट वीज़ा ज़रूरी था. बाद में पूरी टीम को एक दिन के बाद मॉस्को के रास्ते कज़ान भेजा गया. अब ज़रा इस जीत के बारे में सोचिए, यह वही टीम थी जिसे बिना ट्रांजिट वीज़ा के दिल्ली हवाई अड्डे पर घंटों बिताने पड़े. जिस टीम को बिना आराम किए खेलने के लिए मैदान में उतरना पड़ा, उसके लिए ख़िताब अपने नाम करना तो दूर पूरे दमखम से मुक़ाबले में उतरना ही बहुत बड़ी उपलब्धि थी. ऐसी परिस्थितियों में खेलकर भी ख़िताब अपने नाम करने वाली टीम तो बधाई की हक़दार है ही, साथ ही उसे हमारी हॉकी के कर्णधार बन बैठे, अपने तथाकथित आकाओं से कुछ सवाल करने का भी हक़ है. आख़िर क्यों ऐसी परिस्थिति बनी जिससे पूरी टीम को इतनी परेशानी झेलनी पड़ी. क्या अधिकारियों को पता नहीं था कि टीम को किस रास्ते से जाना है, या महज़ टीम को टिकट थमाकर उन्होंने अपने कर्तव्य की इतिश्री मान ली.

आईसीसी ने फिर नहीं सुनी पाक की

विश्व कप के मैचों को लेकर पाकिस्तान को अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट परिषद (आईसीसी) में फिर मुंह की खानी पड़ी. आईसीसी ने 2011 में होने वाले विश्व कप के उन मैचों को किसी तटस्थ स्थान पर कराने से मना कर दिया, जो तय कार्यक्रम के हिसाब से पाकिस्तान में होने थे.

ग़ौरतलब है कि लाहौर में श्रीलंकाई क्रिकेटरों पर हुए आतंकी हमले के बाद आईसीसी ने पाकिस्तान में होने वाले सभी अंतरराष्ट्रीय मैचों पर रोक लगा दी है. उसके मुताबिक सुरक्षा कारणों से वहां मैच फ़िलहाल नहीं हो सकते. इसलिए उसके हिस्से के 14 मैच बाक़ी तीन मेजबान देशों-भारत, श्रीलंका और बांग्लादेश-में ही खेले जाएंगे. आईसीसी ने इसके साथ ही विश्व कप आयोजन समिति से कहा है कि वह उन स्थानों के नाम जल्द फाइनल करे, जहां पाकिस्तान के हिस्से वाले 14 मैचों को खेला जाना है.

आईसीसी अध्यक्ष डेविड मोर्गन ने बताया कि लंदन में बोर्ड मीटिंग के के पाकिस्तान ने तटस्थ स्थान पर उसके हिस्से के मैचों को कराने का मुद्दा उठाया था. लेकिन इस तरह की अनुमति देने का मतलब होता कि विश्व कप के आयोजन में पांचवें देश की घुसपैठ. इसकी इजाज़त कतई नहीं दी जा सकती.

हॉल ऑफ फेम : भारत से 1, 2, 3... बस ख़त्म

पिछले कुछ सालों में भारत और अन्य एशियाई देशों के क्रिकेट की दुनिया पर क़ब्ज़ा जमाने की बातें हुई हैं. हमने गोरों के खेल में उन्हें पटखनी दे दी है. यह ख़याल दिल को सुकून भी देने लगता है कि कुछ ऐसा हो जाता है जिससे यह फिर ज़ाहिर हो जाता है कि उनकी नज़रों में हमारी हैसियत अब भी वही है, जो सालों पहले थी. अब आईसीसी की हॉल ऑफ फेम लिस्ट को ही लें, तो जिन 55 खिलाड़ियों को इसमें जगह दी गई थी, उनमें महज़ तीन भारतीय हैं. ऐसा ही हाल बाक़ी एशियाई देशों का भी है. पाकिस्तान से जहां तीन हॉल ऑफ फेमर हैं, वहीं श्रीलंका से किसी को इस लायक समझा ही नहीं गया. भारत की ओर से चुने गए खिलाड़ी सुनील गावस्कर, कपिल देव और बिशन सिंह बेदी है. हालांकि इस सूची में उन्हीं को शामिल किया गया है जिनका खेल जीवन 1995 से पहले ख़त्म हो गया था. फिर भी जहां 95 से पहले टेस्ट खेलने वाले तीन एशियाई देशों से बस छह खिलाड़ी इस लायक समझे गए हैं, वहीं अकेले इंग्लैंड के 22 नाम इसमें शामिल हैं. सवाल यह नहीं है कि इंग्लैंड के ये खिलाड़ी हॉल ऑफ फेम के लायक हैं या नहीं, सवाल यह है कि क्या भारत जैसे देश में बस तीन लोग ही इस सम्मान के हक़दार थे. बेदी के साथ तिकड़ी बनाने वाले प्रसन्ना और चंद्रशेखर, सुभाष गुप्ते, सीके नायडू जैसे खिलाड़ियों को जगह नहीं दी गई. जहां डब्ल्यू जी ग्रेस को इस सम्मान के लिए चुना गया वहीं इंग्लैंड के लिए खेलने वाले और लेग ग्लांस के आविष्कारक रणजीतसिंहजी को इस सूची से बाहर रखा गया. साफ है आईसीसी के इस चयन से कहीं न कहीं भेदभाव की बू आती है.

यही कारण था कि पाकिस्तान के अनुरोध को ख़ारिज़ कर दिया गया. उन्होंने यह भी कहा कि इन 14 मैचों के लिए स्थान तय करने में भारत, श्रीलंका और बांग्लादेश के साथ-साथ पाकिस्तान की सलाह भी लेनी चाहिए. आख़िरकार 2011 में भारतीय उपमहाद्वीप में होने वाले विश्व कप का आयोजन करने वाले देशों में पाकिस्तान भी है.

इन स्थानों का तय होना आईसीसी के कॉमर्शियल बोर्ड के लिए भी ज़रूरी है. इस बीच, आईसीसी के कॉमर्शियल बोर्ड (आईडीआई) ने फिर दोहराया है कि विश्व कप का प्रशासनिक मुख्यालय लाहौर से हटा कर जल्द ही मुंबई में बनाया जाएगा. मोर्गन ने कहा कि आईडीआई बोर्ड इस मुद्दे को जल्द से जल्द सुलझाने के लिए प्रतिबद्ध है. इसलिए कि विश्व कप आईसीसी का सबसे महत्वपूर्ण आयोजन होता है और इसमें अब लगभग दो साल ही रह गया है.

लेकिन पाकिस्तान क्रिकेट बोर्ड (पीसीबी) इसे लाहौर में ही रखने पर अडिग है. इसके लिए वह आईसीसी के साथ क़ानूनी लड़ाई भी लड़ रहा है. मोर्गन ने कहा कि गवर्निंग बॉडी इस मसले पर कोई सौहार्दपूर्ण हल चाहता है. उन्होंने कहा कि अगर दोनों पक्ष अपने-अपने रुख़ पर अड़े रहे तो समझौता करना मुश्किल हो जाता है. वैसे आईसीसी को उम्मीद है कि पाकिस्तान के साथ इस मसले का हल सौहार्दपूर्ण तरीक़े से निकाल लिया जाएगा.

बहरहाल, पीसीबी ने आईसीसी बोर्ड के टास्क टीम वाले ऑफर को स्वीकार लिया है, जो अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट में पाकिस्तान की भागीदारी बहाल करने में मदद करेगा. इस टास्क टीम का नेतृत्व आईसीसी के डायरेक्टर जाइल्स क्लार्क (इंग्लैंड और वेल्स क्रिकेट बोर्ड के चेयरमैन) और आईसीसी के जनरल मैनेजर डेविड रिचर्डसन करेंगे.

इन गतिविधियों से आशा की जानी चाहिए कि सुरक्षा कारणों से अलग-अलग पड़ गया पाकिस्तान जल्द ही अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट बिरादरी में वापसी कर सकेगा. वैसे भी हाल में ट्वेंटी-20 विश्व कप जीतने के बाद पाकिस्तान के प्रति लोगों का रुख़ काफी बदल गया है.

सांबा की धुन में डूबा कंफेडरेशन कप

क्या यह शुरुआत है, ब्राजील के अंत की. यह किसी फंतासी फिल्म की कहानी का संवाद नहीं है, बल्कि एक प्रतिष्ठित फुटबॉल कमेंटेटर के मुंह से निकली आश्चर्यभरी चीख़ थी. वह ब्राजील और अमेरिका के बीच चल रहे कंफेडरेशन कप के फाइनल का आंखों देखा हाल सुना रहे थे. यह बात उन्होंने तब कही, जब अमेरिकी टीम ने मैच में दूसरा गोल कर दिया. नौसिखिया माने जाने वाली अमेरिकी टीम फुटबॉल दुनिया की सबसे बड़ी दिग्गज ब्राजील से दो गोलों से आगे चल रही थी. लग रहा था कि आज अमेरिकी टीम ब्राजील के करिश्मे का अंत करने वाली है. दुनिया के करोड़ों फुटबॉल प्रेमियों को भी ऐसा ही कुछ लग रहा था, जब आधे समय का खेल भी इसी स्कोर पर ख़त्म हो गया, लेकिन असल कमाल तो अभी बाक़ी था. अभी तक पिछड़ रहा ब्राजील आधे समय के बाद मानो अचानक नींद से जागा और फिर वही खेल दिखाया जिसके लिए वह जाना जाता है. जब मैच ख़त्म हुआ तो स्कोरलाइन था- ब्राजील 3-अमेरिका 2. ब्राजील के अंत ने शुरुआत में ही दम तोड़ दिया.

इस जीत ने फिर से यह साबित कर दिया कि फुटबॉल की बादशाहत में ब्राजील का कोई तोड़ नहीं है. पांच दशकों से फुटबॉल की दुनिया पर राज कर रहे ब्राजील ने अभी भी अपनी रंगत नहीं खोई है. ब्राजील की जीत में उसके करिश्माई मिडफील्डर काका ने भी अहम भूमिका निभाई. काका अब तक यूरोपियन क्लब फुटबॉल में अपना जलवा दिखा चुके हैं, लेकिन टीम के लिए उनको कुछ ख़ास करने का मौका नहीं मिला है. इस मैच में जीत दिलाकर उन्होंने साबित कर दिया है कि ब्राजील के फुटबॉल को आगे ले जाने के लिए वह तैयार हैं. ब्राजील की टीम अभी बदलाव के दौर में हैं. रोनाल्डो, राबर्टो कार्लोस और रिवाल्डो जैसे दिग्गज विदा हो चुके हैं और उनकी जगह अब काका, एड्रियानो और रोबिन्हो जैसे युवा ले रहे हैं. फुटबॉल के खेल को जुनून मानने वाले ब्राजील में इस नए बदलाव ने भी ख़ुश करने वाले संकेत दे दिए हैं. शायद यह टीम ब्राजील का खोया दबदबा लौटा सके. वैसे भी कंफेडरेशन कप को अगले साल के फीफा विश्व कप का रिहर्सल माना जा रहा था.

उधर अमेरिकी टीम ने भी इस टूर्नामेंट से विजयी भाव के साथ ही लौटेगी. फुटबॉल के बड़े नामों के बीच उसकी हैसियत अभी कमज़ोर ही है, लेकिन कंफेडरेशन कप के फाइनल तक पहुंच कर उसने यह संकेत दे दिए हैं कि वह अब उसे हल्के में लेना ग़लत होगा. फुटबॉल के भविष्य के लिए भी अमेरिका, चीन और दक्षिण अफ्रीका जैसी टीमों का उभरना शुभ संकेत हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बन ही गई बात

इसे कहते हैं दो प्रतिभाओं का मिलन. यक़ीनन. एक विशाल भारद्वाज, तो दूसरे हृतिक रोशन. जी हां, जो बात दो साल पहले शुरू हुई थी, वह अब जाकर मुकम्मल हुई है. विशाल भारद्वाज के साथ काम करने को हृतिक तैयार हो गए हैं. विशाल ने जब *मक़बूल* बनाई थी, तभी से हृतिक उनके साथ काम करने की इच्छा ज़ाहिर करते रहे हैं. लेकिन कोई धांसू स्क्रिप्ट न मिल पाने की वजह से बात बन नहीं पा रही थी. वैसे *मक़बूल* के बाद अमिताभ बच्चन ने भी विशाल केसाथ कम से कम एक फिल्म करने की इच्छा जताई थी, लेकिन सफलता हृतिक को मिली है. इससे दोनों ख़ुश हैं. कहा जा रहा है कि हृतिक अपनी नई फिल्म *काइट्स* के रिलीज़ होते ही विशाल के साथ काम शुरू कर देंगे. वैसे फिल्म की कहानी तो छोड़िए, नाम तक गोपनीय रखा जा रहा है. पहले कहा गया था कि विशाल की नई फिल्म *मैकबेथ* पर आधारित होगी, लेकिन अब बताया गया है कि यह एक मौलिक और ख़ूबसूरत प्रेम कहानी होगी. इसमें दो नायिकाएं होंगी, जिनमें से एक का भी चयन नहीं किया गया है.

बहरहाल, हृतिक अब अपने घर से बाहर की फिल्में करने में भी दिलचस्पी दिखाने लगे हैं, जो अच्छी बात है. अभी कुछ महीने पहले उन्होंने संजय लीला भंसाली की *गुज़ारिश* साइन की थी, अब विशाल भारद्वाज की फिल्म कर रहे हैं. वैसे इन सबसे पापा राकेश रोशन कतई चिंतित नहीं हैं. अभी तो वह *काइट्स* को रिलीज करने में व्यस्त हैं और उससे फ़ुरसत पाते ही हृतिक के साथ एक और फिल्म की घोषणा करने वाले हैं. किसी अच्छी कहानी की तलाश शुरू कर दी गई है. *काइट्स* की शूटिंग और डबिंग आदि से निपटने के बाद पापा रोशन आजकल आराम फरमा रहे हैं. और, आराम फरमाते हुए अंग्रेजी फिल्में देख रहे हैं, ताकि कोई कहानी जंच जाए और बेटे के साथ फिर कोई सुपर-डुपर फिल्म बना डालें. हालांकि पापा रोशन में बेटे के प्रति रुख़ में पिछले कुछ दिनों से कुछ अलग तरह का बदलाव साफ देखा जा रहा है. इसे *काइट्स* के प्रचार से समझा भी जा सकता है. यह पहला मौका था, जब पापा रोशन की ओर से ही हृतिक की तथाकथित प्रेम कहानी को भुनाने की अनुमित दी गई. यहां तक कि बारबरा के कारण हृतिक के दांपत्य जीवन में तनाव जैसी छिछली बातें भी फैलाई गई. सिर्फ़ और सिर्फ़ इसलिए कि *काइट्स* को भरपूर प्रचार मिल सके और वितरकों से मुंहमांगी क़ीमत वसूली जा सके. राकेश रोशन इसमें काफी हद तक सफल भी रहे. अब यह देखना बाक़ी है कि दर्शकों पर प्रचार के नाम पर किए गए इस दुष्प्रचार का क्या असर पड़ता है.

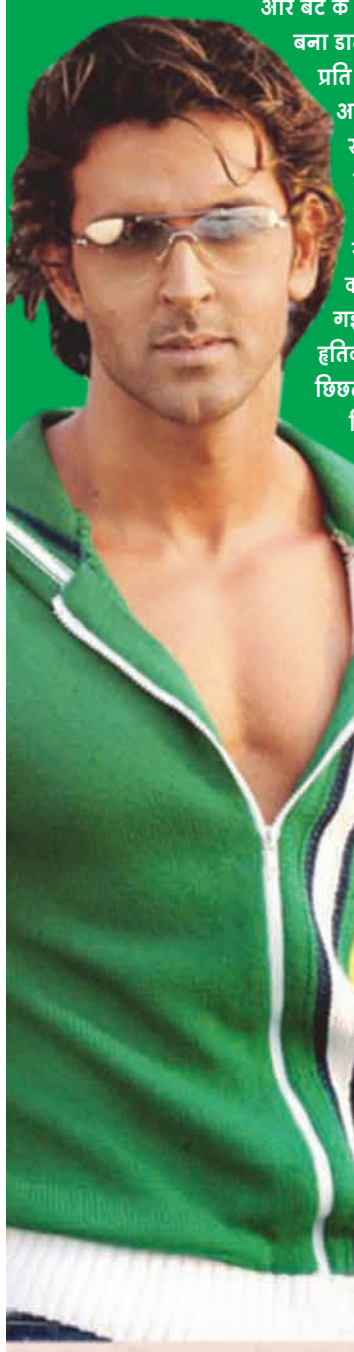

दुनिया

विवादों की महारानी ऐश्वर्या

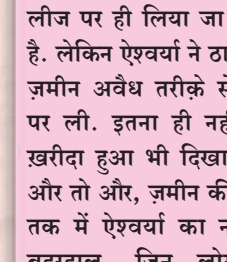

सोनिका अग्रवाल

ऐश्वर्या राय बच्चन और विवादों का चोली-दामन का रिश्ता ख़त्म होने का नाम ही नहीं ले रहा. ज़मीन के मामले में ऐश जब भी कहीं हाथ डालती हैं, वह विवादित हो जाती हैं. उत्तर प्रदेश में बाराबंकी वाले मामले को शायद ही कोई भूला होगा. वैसे भी देखें तो ज़मीन का झंझट बच्चन परिवार के साथ हमेशा लगा ही रहा है. ख़ुद अमिताभ बच्चन हाल तक उत्तर प्रदेश की ज़मीन को लेकर अदालती कार्यवाही में उलझे रहे. उस चक्कर में पुणे वाली ज़मीन भी विवादित हो गई. अब कुछ वैसा ही लफड़ा उनकी बहू ऐश्वर्या के साथ हो गया है. मामले की गंभीरता इसी से समझी जा सकती है कि उनके ख़िलाफ़ मामला तक दर्ज़ हो गया है. उनके अलावा एनर्जी कंपनी सुजलॉन के अध्यक्ष तुलसी तांती और कुछ दूसरे लोगों के ख़िलाफ़ भी अवैध तरीक़े से ज़मीन ख़रीदने का मामला दर्ज़ किया गया है. शिकायत उत्तरी महाराष्ट्र के नंदूरबार जिले में रहने वाले आनंद लाल ठाकरे नाम के एक व्यक्ति ने दर्ज़ कराई है. ठाकरे का कहना है कि दरअसल सरजन रीयल्टीज कंपनी ने उनकी ज़मीन एग्रीमंट के आधार पर ख़रीदी थी. लेकिन बाद में इस कंपनी ने ग़ैरक़ानूनी तरीक़े से इसे सुजलॉन कंपनी को ट्रांसफर कर दिया. सुजलॉन के फेर ऐश्वर्या इसलिए फंस गईं, क्योंकि इस कंपनी में उनकी भी हिस्सेदारी है. आदिवासी बहुल इस इलाक़े में लागू क़ानून के मुताबिक आनंद लाल ठाकरे की ज़मीन को न तो ख़रीदा जा सकता है, और न ही उसे लीज पर ही लिया जा सकता है. लेकिन ऐश्वर्या ने ठाकरे की ज़मीन अवैध तरीक़े से लीज पर ली. इतना ही नहीं, उसे ख़रीदा हुआ भी दिखा दिया. और तो और, ज़मीन की नक़ल तक में ऐश्वर्या का नाम है. बहरहाल, जिन लोगों के ख़िलाफ़ शिकायत दर्ज़ की गई है, उममें ऐश्वर्या, सुजलॉन कंपनी के अध्यक्ष तुलसी तांती, मंगल सर्जन, मोहन जवान, जयंत भोसले, अनिल गंगवानी, शरण सिंह सिद्धू, हरीश पंत, जिले के डीएम और कुछ सरकारी कर्मचारी भी हैं. कंपनी नंदूरबार जिले के घनदाने गांव में एक पवन ऊर्जा परियोजना के लिए स्थान की तलाश कर रही है.

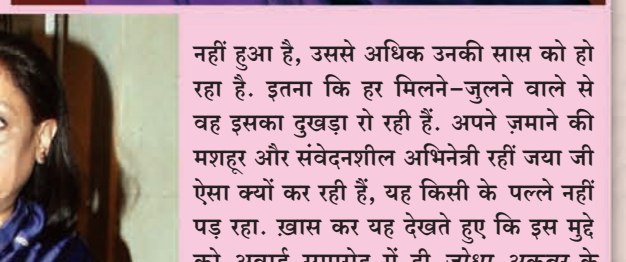

ज़मीन का यह विवाद तब शुरू हुआ है, जब उनकी सास जया बच्चन अपने बयानों से बॉलीवुड में उन्हें जाने-अनजाने अलग-थलग कर रही हैं. पुत्र प्रेम में अंधे बने पिताओं की कहानी हमारे यहां अनगिनत हैं, लेकिन बहू के पक्ष में ज़िरह करने वाली सास के उदाहरण कम ही हैं. जया भादुड़ी बच्चन इसकी ताज़ा मिसाल हैं. पिछले दिनों मकाऊ में हुए आईफा अवार्ड समारोह में श्रेष्ठ अभिनेत्री का पुरस्कार न मिलने का ग़म जितना ऐश्वर्या को नहीं हुआ है, उससे अधिक उनकी सास को हो रहा है. इतना कि हर मिलने-जुलने वाले से वह इसका दुखड़ा रो रही हैं. अपने ज़माने की मशहूर और संवेदनशील अभिनेत्री रहीं जया जी ऐसा क्यों कर रही हैं, यह किसी के पल्ले नहीं पड़ रहा. ख़ास कर यह देखते हुए कि इस मुद्दे को अवार्ड समारोह में ही *जोधा अकबर* के निर्देशक आशुतोष गोवारीकर ने उठा दिया था. लेकिन जया जी हैं कि इस मुद्दे पर चुप रहने को तैयार ही नहीं हैं. उनका मानना है कि *जोधा अकबर* में उनकी बहू ने शानदार अभिनय किया था, इसलिए श्रेष्ठ अभिनेत्री का पुरस्कार उन्हें ही मिलना चाहिए था. लगे हाथ यह बात वह ख़ुद क़बूल करती हैं कि उन्होंने प्रियंका की *फ़ैशन* नहीं देखी है. तो क्या फिल्म *फ़ैशन* के लिए प्रियंका चोपड़ा को दिया गया पुरस्कार ग़लत था. *फ़ैशन* के निर्देशक मधुर भंडारकर ने तो इसे दिल पर ही ले लिया है. उनका कहना है कि यह सिर्फ़ प्रियंका का ही नहीं, *फ़ैशन* की पूरी यूनिट का अपमान है. वह भी बॉलीवुड के शहंशाह के परिवार की ओर से! लगता है कि अवार्ड समारोहों में विवाद और बच्चन परिवार के बीच चोली-दामन का रिश्ता बन गया है. कभी शाहरुख़ ख़ान और अमर सिंह के बीच विवाद हो जाता है, तो कभी अन्य सितारों के साथ दुआ-सलाम करने या न करने का मामला तूल पकड़ लेता है. वैसे समारोहों में विवाद खड़ा करने में अब आशुतोष गोवारीकर भी पीछे नहीं रह गए हैं. अभी कुछ समय पहले स्क्रीन अवार्ड समारोह में वह फराह और उनके भाई साजिद ख़ान से भिड़ गए थे. लेकिन जया बच्चन को क्या कहेंगे. वह हमेशा *गुड्डी* ही बनी रहेंगी !

sonika.chauthiduniya@gmail.com

क़िस्मत की धनी कंगना

अध्ययन सुमन जो समझें, सच तो यही है कि उनका साथ छूटना कंगना रानाउत के लिए शुभ साबित हो रहा है. कहना न होगा कि शेखर सुमन ने अपने बेटे को कंगना को भूल जाने को क्या कहा कि वह सचुमच उसे भूल गए. लेकिन कंगना के पास भी यह सब याद रखने का न तो कोई कारण है और न ही समय. हो भी कैसे ? सुमन के जीवन से हटते ही उन्हें बड़े बैनरों की फिल्में जो मिलने लगी हैं ! इनमें से एक फिल्म में वह अमिताभ बच्चन के साथ होंगी. फिल्म का नाम है- एक्टर. यह अमिताभ या किसी अन्य अभिनेता की कोई जीवनी नहीं, बल्कि एक थ्रिलर है. इसमें कंगना पत्रकार की भूमिका में नज़र आएंगी. प्रीतीश नंदी की इस फिल्म को उनके बेटे कुशान निर्देशित करेंगे. इन सभी दिग्गजों का इस तरह एक साथ आने का यह पहला अवसर होगा. वैसे पिछले दिनों मकाऊ में हुए आईफा अवार्ड समारोह के दौरान कंगना को बिग बी के साथ रहने का मौका ज़रूर मिला था, लेकिन किसी फिल्म में साथ काम करने का मौका मिलेगा, यह तो उन्होंने सोचा भी न था. रही बात प्रीतीश नंदी की, तो दोनों पहले एकाध बार मिल चुके थे. कुशान तो कंगना से इतने प्रभावित हैं कि तारीफ़ के बोल एक बार शुरू होने के बाद ख़त्म ही नहीं होते. पिता-पुत्र दोनों का मानना है कि कंगना का एक-एक अंग अभिनय से भरा है. कुशान के मुताबिक, उनकी फिल्म-एक्टर-की शूटिंग अगले साल मुंबई और यूरोप में की जाएगी. बहरहाल, इस समय स्विटज़रलैंड में एक तेलुग फिल्म की शूटिंग कर रहीं कंगना यह ख़बर सुन ख़ुशी से फूले नहीं समा रही हैं. लेकिन इतना भी नहीं कि होश खोकर अध्ययन और उनके पिता शेखर सुमन के ख़िलाफ़ बयान देने लगें. यह दूसरी बात है कि शेखर सुमन ने कंगना के ख़िलाफ़ बोलना आज भी बंद नहीं किया है. अब कौन समझाए कि उन्हें कंगना की नहीं, अपने बेटे के करियर के बारे में सोचना चाहिए.

शाइनी कांड का सौदा

चर्चित घटनाएं फिल्मवालों को हमेशा से आकर्षित करती रही हैं. कुछ घटनाओं पर फिल्में बन भी जाती हैं, तो कुछ की घोषणा भर होकर रह जाती हैं. इस बार शाइनी आहूजा पर फिल्म बनाने की घोषणा की गई है. वह किसी नामी निर्देशक की ओर से नहीं, बल्कि सी-ग्रेड फिल्में बनाने वाले कांति शाह की ओर से. उन्होंने अपनी इस नई फिल्म का नाम भी तय कर लिया है-रेप. इसकी कहानी का आधार शाइनी की नौकरानी का आरोप बना है. गौरतलब है कि नौकरानी से बलात्कार के आरोप में शाइनी आहूजा इस समय सलाखों के पीछे हैं.

कांति शाह ने इस फिल्म के लिए हीरो और हीरोइन का चुनाव भी कर लिया है. हीरो हैं इमरान, जबकि हीरोइन का नाम सपना बताया गया है. ये दोनों ही नवोदित कलाकार हैं. बताया जा रहा है कि समीर सेन ने इस फिल्म के लिए पांच गाने भी तैयार कर लिए हैं. वैसे बता दें कि शाइनी आहूजा पर फिल्म की घोषणा करने वाले कांति शाह अकेले नहीं हैं. दक्षिण के एक निर्माता भी बलात्कार की इस घटना पर फिल्म बनाने के लिए मुंबई में जमे हुए हैं. उधर, इसकी ख़बर लगते ही शाइनी आहूजा की पत्नी अनुपमा आहूजा इन निर्माताओं के ख़िलाफ़ कमर कस चुकी हैं. परिवार वालों का कहना है कि जब मामला अदालत में है, तब भला कोई कैसे घटना को सच मान फिल्म बना सकता है. अब देखना है कि दूसरे का अभिनय करने वाले पर फिल्म सचमुच बन भी पाती है या नहीं.

दिख नहीं रहीं दीया

हर कलाकार यही चाहता है कि उसकी ज़्यादा से ज़्यादा फिल्में रिलीज़ हों, उसकी अधिक से अधिक चर्चा हो, ताकि जल्द से जल्द कामयाबी हासिल की जा सके. ख़ासतौर पर ऐसे स्टार, जिन्हें कुछ गिनी-चुनी फिल्मों में ही काम मिलता है. उनके लिए तो कुछ-कुछ अंतराल पर फिल्मों का रिलीज़ होना बेहद ज़रूरी है. ज़ाहिर है अगर किसी स्टार की फिल्में रिलीज़ नहीं होंगी तो उसका करियर ख़तरे में पड़ता दिख सकता है. इन दिनों दीया मिर्ज़ा कुछ ऐसी ही परेशानी से गुज़रती दिखाई दे रही हैं. पिछले साल उनकी क़रीब आधा दर्जन फिल्में अनाउंस हुई थीं, लेकिन अभी तक उनमें से एक फिल्म भी सिनेमाघरों तक नहीं पहुंच पाई है. सूत्रों की मानें, तो उनकी कोई फिल्म हाल-फ़िलहाल में रिलीज़ भी होने वाली नहीं है. इस हाल को देखते हुए दीया का परेशान होना स्वाभाविक ही है. लेकिन दीया कहती हैं कि वह इससे कतई परेशान नहीं हैं. उनका मानना है कि जब हड़ताल की वजह से बड़े-बड़े स्टार्स की फिल्में रिलीज़ नहीं हो पाईं, तो उनकी क्या बिसात है. अब दीया को कौन समझाए कि हड़ताल ख़त्म होने के बाद रिलीज़ होने के लिए जिन फिल्मों की लाइन लगी है, उनमें उनकी एक भी नहीं है. हो भी कैसे, दीया की कोई फिल्म पूरी बनी ही नहीं है. सबकी शूटिंग आधी-अधूरी पड़ी हुई है. अगर उनकी फिल्में इसी तरह लटकी रहीं तो करियर का दीया बुझते देर नहीं लगेगी.